ੴ

जपु जी साहिब
अर्थ एवं शिक्षाएँ

भाई वीर सिंह अकैडमी

भाई वीर सिंह अकैडमी के संस्थापक

'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों के अनमोल वचन

- आज सारा संसार शब्द को छोड़ कर शरीर के साथ जुड़ रहा है, पर 'गुरु शब्द' की टेक के बिना कोई आसरा नहीं।
- 'हुक्म' कहना और सुनना सरल है, पर मानना अति मुश्किल है। मानने वाले ही गुरु की कृपा के पात्र बनते हैं।
- दुख और सुख कर्मों से मिलते है पर गुरमुख दुख को भी रज़ा का रूप मान कर सुख अनुभव करता है।
- दातां, कृपाएँ, वरदान (Blessings) का आनन्द मानो पर जुड़ो दातार (देने वाले परमात्मा) के साथ।
- चिंता न कर, याद कर साईं को, चिंता मिट जाएगी।
- गुरु करे, आपकी गुरु के साथ बन आए।
- हउमैं (अहं) का विनाश ही परमात्मा का मिलाप है।
- जो मन से न हारे वह किसी से नहीं हारता।
- रब्बा! तेरे प्यार की कसम, मैं जीवत ही तेरे प्यार के लिए हूँ।
- सदीवीं मौज केवल गुरु की चरण-शरण में ही है।
- जो सिख गुरु की शिक्षाओं के शीशे में से अपना स्वरूप देखे, वह निरमल आत्मा है।
- हे रब्बा! भूलता सदा मैं ही हूँ, तुम कभी नहीं भूलते।
- तुझसे परमात्मा दूर नहीं, ज़रा गुरु की आखों से देख।
- गुर प्रसादि की बखशिश होते ही तेरे और परमेश्वर में दूरी खत्म हो जाएगी।
- अपने किए हुए गुनाहों को पश्चाताप के अश्रुओं के साथ धो लें।
- हे इन्सान! अगर तू अपने प्राण बचाने चाहता है तो गुरुबाणी को कभी ना भूलना।
- मैं समझ गया, तेरी याद ही तेरा आसन है।
- वाहिगुरु, तेरा हर बोल मुर्दों में भी जान डालने वाला है।
- सच्च सुनने के समय केवल सच्च ही सुनना।
- दातां, कृपाएँ (Blessings) परमेश्वर की निशानी है। निशानियों को देख कर परमेश्वर के साथ जुड़ें।
- जो राम को हर जगह रमा (समाया, विद्यमान) जान कर उस को याद करता है, वह उसी में ही समा जाता है।
- ऊँचे और सुच्चे ईमान वाला मनुष्य अगर अपने इरादे पर कायम रहे तो वह पूरा मनुष्य है।
- एक बार परमेश्वर मिल जाए तो फिर कभी दूरी नहीं होती।
- गुरुबाणी ही गुरु है, गुरु ही परमात्मा है, श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को छोड़ कर और कहीं परमात्मा को ढूंढने न चल पड़ना।

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

जपु जी साहिब
अर्थ एवं शिक्षाएँ

लेखक : जोगिन्द्र पाल सिंह
अनुवादक : गुरमीत कौर

भाई वीर सिंह अकैडमी
जालन्धर

'जपु जी साहिब — अर्थ एवं शिक्षाएँ'

सभी अधिकार प्रकाशक द्वारा आरक्षित हैं

लेखक : जोगिन्द्र पाल सिंह
अनुवादक : गुरमीत कौर
भेटा : आप पढ़ें एवं औरों को पढ़ाएं।
प्रकाशक : भाई वीर सिंह अकैडमी
9-ऐ, लिंक कालोनी, जालन्धर
93572-04756, 98721-23452,
98889-27279

Website : www.bhaiveersinghacademy.org
www.bhaiveersinghacademy.com
Email : bvsaheadoffice@gmail.com
bvsajal@yahoo.com

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

पूजा अकाल की परचा शब्द का दीदार खालसे का

अकाल आश्रम

गुरुद्वारा गुरु शब्द प्रकाश सुहाणा (मुहाली) (पंजाब) (भारत)

दो शब्द

'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों की तरफ से आरंभ की हुई संस्था भाई वीर सिंह अकैडमी में जहां सरदार जोगिंदर पाल सिंह जी लंबे समय से अध्यापक की सेवा निभा रहे हैं, वहीं उनकी तरफ से लिखी गई यह पुस्तक 'जपु जी साहिब-अर्थ एवं शिक्षाएँ' एक प्रशंसणीय उद्यम है।

इस पुस्तक में पवित्र बाणी 'जपु जी साहिब' के अर्थों के साथ लिखी पउड़ीयां एवं श्लोकों में विद्यार्थियों के लिए शिक्षाओं का वर्णन बहुत ही सूझवान तरीके के साथ किया गया है। मुझे आशा है कि जहां यह पुस्तक भाई वीर सिंह अकैडमी के विद्यार्थियों के लिए लाभदायिक साबित होगी, वहीं सिख जगत के और बच्चे भी इस का लाभ उठा कर पवित्र बाणी के साथ जुड़ सकेंगे।

मेरी अरदास है कि सतिगुरु भाई जोगिंदर पाल सिंह जी को सेहतयाबी, चढ़दी कला व और उद्यम बख्शीश करें ताकि आने वाले समय में आप गुरसिख बच्चों के लिए ऐसे और प्रशंसनीय यत्न कर सकें।

गुरु घर का सेवादार

(दविंदर सिंह खालसा)

ੴ सतिगुर प्रसादि।।

''जिस का कारजु तिन ही कीआ माणसु किआ वेचारा राम।।''

''जिहवा ऐक कवन गुन कहीऐ।।
बेसुमार बेअंत सुआमी तेरो अंतु न किन ही लहीऐ।।''

किस तरह से धन्यवाद करूं अपने दीन दयालू, कृपालू, करुणामय, पतित पावन, सभी गुणों से भरपूर, खंडों ब्रह्मंडों के मालिक, निरंकारी ज्योति, धन्य धन्य श्री गुरु नानक देव जी का जिन्होंने आप दया के घर में आकर **''हउ मूरखु कारै लाईआ नानक हरि कंमे।।''** वाली पंक्ति के अनुसार इस पुस्तक की सेवा दास से करवाई है। दास सच्चे पातशाह जी का जितना धन्यवाद करे उतना ही कम है।

इस किताब ने अधूरी ही रह जाना था अगर इस को पूरा करने के लिए दास को दिशा-निर्देश और सहयोग न मिलता गुरुमुख प्यारों से। किन-किन का नाम लूँ - नहीं लिया जा सकता। पर सरदार हरबंस सिंह जी ऐडवोकेट का नाम लिए बिना दास नहीं रह सकता जिनके अमूल्य दिशा निर्देशों ने इस कार्य को पूरा करवाया। दास सरदार हरजीत सिंह जी, संपादक, सिख फुलवाड़ी और बाकी सारे सहयोगियों का तह दिल से धन्यवाद है और सभी का ऋणी है। दास बहन गुरमीत कौर जी का भी आभारी है जिन्होंने इस पुस्तक का अनुवाद किया है। सतिगुरु जी के आगे सब की चढ़दी कला और सफल जीवन के लिए अरदास है।

जपु जी साहिब की शिक्षाएँ तो बेअंत हैं जिनका वर्णन किसी भी दुनियावी जीव के लिए कर पाना संभव नहीं पर जितनी सतिगुरु जी ने सूझ बख्शी उतना ही लिखा जा सका है। आशा है कि सिख संगत इस को स्वीकार करेगी। **''भुलण अंदरि सभु को अभुलु गुरू करतारु।।''** किताब में हुई बेअंत भूलों के लिए दास क्षमा याचक है। गुरु महाराज एवं गुरु की संगत बख्शन योग्य है और बख्शा लेना जी।

दास

जोगिन्द्र पाल सिंह

(जोगिन्द्र पाल सिंह)
जालन्धर (पंजाब)
+91-98889-27279

जपु जी साहिब और हमारा जीवन

कई वर्ष पहले की बात है कि दास और दास के साथी, 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वाले, जिनको सारा जगत 'वीर जी' के नाम से जानता है, को मिलने गए। बातचीत के दौरान 'वीर जी' ने हमसे प्रश्न पूछा कि **''क्या आप बता सकते हैं कि हम इतने वर्षों से जपु जी साहिब का पाठ कर रहे हैं तो भी हमारा जीवन क्यों नहीं बदला ?''**

यह सुन कर हम सभी ने 'वीर जी' को बिनती की कि कृपा करके आप खुद ही इस पर प्रकाश डालें। तो **जवाब में 'वीर जी' ने कहा कि हम सभी पाठ तो कर रहे हैं पर किए हुए पाठ को सुन नहीं रहे जिसके कारण हमारा जीवन नहीं बदलता। पाठ करते समय हमारा ध्यान कहीं ओर ही चला जाता है।**

फिर हमने 'वीर जी' को बिनती की कि आप कृपा करके कोई ऐसी युक्ति बताएँ जिससे हमारा मन टिकाव में आ जाए व मन को पाठ सुनने की आदत पड़ जाए। **इसके जवाब में जो युक्ति 'वीर जी' ने बताई वो यह है कि पाठ करते समय मन से पूछना है कि ''क्या तूने बाणी को सुन लिया है ?'' अगर मन ने वह पंक्ति नहीं सुनी तो सिख वह पंक्ति उतनी देर तक बार-बार पढ़ता जाए जितनी देर तक मन उस पंक्ति को नहीं सुनता। अगली पंक्ति तब ही पढ़ी जाए जब मन पिछली पंक्ति को सुन कर, समझ कर, विचार कर ले। गुरुदेव पिता की कृपा के द्वारा अगर हमारा यह अभ्यास पक्का हो जाए तो मन को सुनने की आदत पड़ जाएगी।**

हम यह बात सदैव याद रखें कि :

बाणी क्यों पढ़नी है ..... सुनने के लिए।
बाणी क्यों सुननी है ..... समझने के लिए।
बाणी क्यों समझनी है ..... विचारने के लिए।
बाणी क्यों विचारनी है ..... कमाने के लिए।

आओ! हम भी ऊपर बताई गई युक्ति के अनुसार पाठ करने का उद्यम करें ताकि हमारा जीवन भी सफल हो सके।

जपु जी साहिब

ੴ

सति नामु करता पुरखु
निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं
गुर प्रसादि।।

उच्चारण : **ੴ**—इक ओंकार। **सतिनामु**—सतनाम। **पुरखु**—पुरख। **निरवैरु**—निरवैर। 'अजूनी सैभं' एक साथ नहीं पढ़ना। 'अजूनी' अलग है तथा 'सैभं' अलग। प्रसादि को प्रशादि उच्चारण करना अशुद्ध है।

पद अर्थ : **ੴ**—**१**—एक। **ओंकार** - जो सारी सृष्टि में निरन्तर व्यापत है। **सति नामु**—जिस का नाम सति अस्तित्व वाला है। करता पुरखु—वह प्रभु सारी सृष्टि को बनाने वाला है व उसमें व्यापक है। **निरभउ**—निडर। **निरवैरु**—शत्रुता रहित। **अकाल**—समय के बंधन से रहित। **मूरति**—स्वरूप। **अजूनी**—जन्म रहित। **सैभं**—अपने से बना। **गुरप्रसादि**—गुरू की कृपा से प्राप्त होता है।

अर्थ : यह सिखी की मूल-मंत्र है। मूल-मंत्र का अर्थ है, प्रारम्भिक उपदेश। इसके अर्थ इस प्रकार हैं :

अकाल पुरख एक है, जो सारी सृष्टि में निरंतर व्यापक है। उसका नाम 'अस्तित्व वाला' है। वह सारी सृष्टि को बनाने वाला व उसमें व्यापक है। वह किसी से नहीं डरता। उसकी किसी से शत्रुता नहीं है। उसका स्वरूप काल की सीमाओं से परे है, भाव, उस पर समय का कोई प्रभाव नहीं, वह बचपन, जवानी, बुढ़ापा, मृत्यु की परिधि से बाहर है। वह जूनों (यौनियों) में नहीं आता। उसका अस्तित्व, उसका प्रकाश, स्वयं से ही हुआ है। ऐसे स्वरूप वाला परमात्मा सतगुरू की कृपा द्वारा मिलता है।

नोट : इस से आगे लिखी गई सारी बाणी का नाम है 'जपु'। यद्यपि बाणी का असल नाम 'जपु' है। परन्तु हम सम्मान सहित 'जपु जी साहिब' कहते हैं।

यहाँ यह बात याद रखने वाली है कि यह 'मूल मंत्र' श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के आरंभ में मंगलाचरण के तौर पर लिखा हुआ मिलता है। परन्तु यह 'जपु' बाणी से

अलग है। बाणी 'जपु', 'आदि सचु' से शुरु होती है। 'आसा की वार' के शुरु में भी यही मूलमंत्र है परन्तु आसा की वार के साथ इसका कोई सम्बंध नहीं है।

'जपु' की बाणी की संरचना (composition) इस तरह है कि इस में 2 सलोक और 38 पउड़ीयां हैं। आरंभ में पहला सलोक है ''**आदि सचु जुगादि सचु।। है भी सचु नानक होसी भी सचु।।**'' फिर 'जपु' साहिब की 38 पउड़ीयां हैं और उसके बाद 'जपु' बाणी के अंत में दूसरा सलोक है ''पवणु गुरु पाणी पिता..... ।।''

'जपु' की बाणी की विचार आंरभ करने से पहले हम मूल मंत्र की संक्षेप विचार और शिक्षाओं के बारे में जानकारी देने का छोटा सा यत्न कर रहे हैं।

नोट : इस पुस्तक में हर एक पउड़ी में गुरुबाणी में योग स्थानों पर अर्ध-विश्राम (,) देने के लिए शब्दों के बीच में ज्यादा स्थान (Space) देकर शब्दों को एक दूसरे से थोड़ा दूर लिखा गया है। ज़्यादा स्थान (Space) वाली जगह पर विश्राम देकर अर्थात (थोड़ा रुक कर) पाठ करना है जैसे कि 'सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार'।।

मूलमंत्र से शिक्षा

परमात्मा के गुण अनगिनत (बेअंत) हैं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता पर मूलमंत्र में श्री गुरु नानक देव जी ने परमात्मा के नौ मूल गुणों का वर्णन किया है। परमात्मा के इन नौ गुणों से हमनें निम्नलिखित शिक्षाएँ लेनी हैं।

੧ੴ

੧ੴ का अर्थ है कि अकाल पुरखु '੧' है। Numeric वाला '੧' इस बात का स्पष्ट संकेत है कि वह परमात्मा केवल व केवल '੧' है। वह अद्धितीय है। और उस परमात्मा जैसा कोई और नहीं। वह समस्त सृष्टि का मालिक है। वही सृष्टि का सृजनकर्ता है, पालक है व विनाश करने वाला है। वही सब में व्यापक है। वह एक होकर भी अनेक है।

प्रथम शिक्षा

हमने केवल एक अकाल पुरखु को ही मानना है तथा अन्य किसी देवी-देवताओं की पूजा नहीं करनी है अर्थात इस सिद्धान्त को अपनाना है। **"ਏਕੋ ਜਪਿ ਏਕੋ ਸਾਲਾਹਿ ॥ ਏਕੁ ਸਿਮਰਿ ਏਕੋ ਮਨ ਆਹਿ ॥"** **''एको जपि एको सालाहि।। एकु सिमरि एको मन आहि।।''**

द्वितीय (दूसरी) शिक्षा

परमात्मा के रूप या ज्योति को सभी के अंदर देखना है। मन को बार-बार यह समझाना है कि **"ਸਭ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤਿ ਹੈ ਸੋਇ॥"** **''सभ महि जोति जोति है सोइ।।''** अगर हमारे मन को यह बात दृढ़ हो जाए कि परमात्मा की ज्योति सबके अंदर विद्यमान है तो उसका स्वभाव ही बदलना आरंभ हो जाएगा। हम किसी के साथ कड़वा नहीं बोलेंगे। किसी से बैर या द्वेष भाव नहीं रखेंगे और न ही किसी का हृदय दुखाएँगें। इस संबंध में बाबा फरीद जी का उपदेश है कि अगर आपको प्रभु को मिलने की चाहत है तो इस बात को हमेशा याद रखना कि कभी भी किसी के दिल को चोट न पहुंचे। उनका फरमान है:

"ਜੇ ਤਉ ਪਿਰੀਆ ਦੀ ਸਿਕ ਹਿਆਉ ਨ ਠਾਹੇ ਕਹੀ ਦਾ॥" (ਅੰਗ: 1384)

''जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा।।'' (अंग: 1384)

श्री गुरु तेग बहादुर जी ने अपनी बाणी में भी लिखा है :

"ਘਟ ਘਟ ਮੈ ਹਰਿ ਜੂ ਬਸੈ ਸੰਤਨ ਕਹਿਓ ਪੁਕਾਰਿ॥" (ਅੰਗ: 1427)

''घट घट मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि।।'' (अंग: 1427)

अगर ੧ੳ के उपर्युक्त गुणों को हम अपने जीवन में अपना लेते हैं तो हम भी गुरुप्रसाद की कृपा से उस अवस्था में पहुँच जाएंगे जहाँ गुरु की कृपा से भाई कन्हैया जी पहुँचे थे।

"ਨਾ ਕੋ ਬੈਰੀ ਨਹੀ ਬਿਗਾਨਾ ਸਗਲ ਸੰਗਿ ਹਮ ਕਉ ਬਨਿ ਆਈ॥" (ਅੰਗ:1299)

''ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई।।''

(अंग: 1299)

सति नामु (ਸਤਿ ਨਾਮੁ)

अर्थ : परमात्मा का नाम सत्य व हमेशा रहने वाला है। हमें परमात्मा के नाम के इलावा किसी अन्य की उपासना नहीं करनी क्योंकि इस संसार में कोई भी नाम हमेशा स्थिर रहने वाला नहीं है। .

गुरु रामदास जी के वचन हैं :

"ਜਪਿ ਮਨ ਸਤਿ ਨਾਮੁ ਸਦਾ ਸਤਿ ਨਾਮੁ॥
ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਮੁਖ ਊਜਲ ਹੋਈ ਹੈ
ਨਿਤ ਧਿਆਈਐ ਹਰਿ ਪੁਰਖੁ ਨਿਰੰਜਨਾ॥" (ਅੰਗ: 670)

''जपि मन सति नामु सदा सति नामु।।
हलति पलति मुख ऊजल होई है
नित धिआईऐ हरि पुरखु निरंजना।।'' (अंग: 670)

इस सति नामु की महिमा इतनी अपरंपार है कि इस का जाप करने से सारे कार्य सफल हो जाते हैं। गुरुबाणी का फ़रमान है:

"ਐਸੋ ਹੀਰਾ ਨਿਰਮਲ ਨਾਮ॥ ਜਾਸੁ ਜਪਤ ਪੂਰਨ ਸਭਿ ਕਾਮ॥" (ਅੰਗ: 1142)

''ऐसो हीरा निरमल नाम।। जासु जपत पूरन सभि काम।।''

(अंग: 1142)

करता पुरखु (ਕਰਤਾ ਪੁਰਖੁ)

अर्थ : इस का अर्थ है कि परमात्मा आप ही सब कुछ करने वाला है और संसार में जो कुछ भी हो रहा है, उसका कारण भी आप परमात्मा ही है।

इससे हमने यह शिक्षा लेनी है कि चूंकि परमात्मा स्वयं ही कर्त्ता है तो इसलिए यदि हमसे कोई शुभ कर्म हो जाए तो हमारे मन में अहंकार नहीं आना चाहिए बल्कि उस शुभ कर्म के लिए परमात्मा को धन्यवाद देना चाहिए। उस शुभ कर्म का श्रेय स्वयं न लेकर परमात्मा को देना चाहिए और जीवन में ऐसा स्वभाव अपनाना चाहिए कि अगर कोई हमारे द्वारा किए शुभ काम की प्रशंसा करे तो हमारे मुख से यही शब्द निकलें कि परमात्मा ने अपनी कृपा व मेहर से मुझसे यह कार्य करवाया है।

नोट : प्रश्नकर्त्ता कई बार यह भी प्रश्न करता है कि यदि कर्त्ता वह स्वयं परमात्मा है तो फिर अगर मेरे से कोई गलत कार्य हो जाता है तो वह स्वयं परमात्मा द्वारा ही तो करवाया गया है तो मैं दोषी कैसे बन सकता हूँ। इसका उत्तर यह है कि परमात्मा ने हमें विवेक बुद्धि (बुरे-भले की परख की बुद्धि) दी है। जो मनुष्य विवेक बुद्धि द्वारा कर्म नहीं करते हैं वे ही गलत कर्म करते हैं। वास्तव में ऐसे मनुष्य परमात्मा की आज्ञा का उल्लघन करने के दोषी होते हैं। उदाहरणार्थ जब कोई व्यक्ति बिना Seat Belt लगाए कार चलाता है तो Beep की आवाज़ आती है ताकि वह Seat Belt लगा ले पर अगर वह उसको नहीं सुनता और Seat Belt नहीं लगाता और अगर उसकी दुर्घटना हो जाती है तो वह स्वयं दोषी है।

निरभउ (ਨਿਰਭਉ)

अर्थ : 'निरभउ' का अर्थ है कि परमात्मा सभी प्रकार के डरों से रहित है।

परमात्मा के इस गुण से हमें यह शिक्षा प्राप्त करनी है कि यदि परमात्मा भय से रहित है तो मैं भी उसकी अंश हूँ और मुझे भी भय से रहित होना चाहिए।

गुरुबाणी ने हमें अपने सभी प्रकार के भय को समाप्त करने के लिए यह शिक्षा दी है :

''ਨਿਰਭਉ ਜਪੈ ਸਗਲ ਭਉ ਮਿਟੈ॥ ਪ੍ਰਭੁ ਕਿਰਪਾ ਤੇ ਪ੍ਰਾਣੀ ਛੁਟੈ॥'' (ਅੰਗ: 293)

''निरभउ जपै सगल भउ मिटै।। प्रभ किरपा ते प्राणी छुटै।।'' (अंग: 293)

''ਜਿਨ ਨਿਰਭਉ ਜਿਨ ਹਰਿ ਨਿਰਭਉ ਧਿਆਇਆ ਜੀ
ਤਿਨ ਕਾ ਭਉ ਸਭੁ ਗਵਾਸੀ॥'' (ਅੰਗ: 11)

''जिन निरभउ जिन हरि निरभउ धिआइआ जी
तिन का भउ सभु गवासी।।'' (अंग: 11)

निरवैरु (ਨਿਰਵੈਰੁ)

अर्थ : 'निरवैरु' का अर्थ है कि परमात्मा किसी से बैर नहीं करता।

इस गुण से हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हम भी अपने जीवन में द्वेष-रहित भावना लेकर आएँ। जैसे-जैसे हम द्वेष-रहित बनेंगे, वैसे-वैसे हम परमात्मा के नज़दीक होते जाएँगे।

बैर-रहित या द्वेष मुक्त जीवन की राह दिखाने हेतु 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा खन्ने वाले (भाई वीर सिंघ अकैडमी के संस्थापक) जिन्हें सारा सिख जगत 'वीर जी' के नाम से जानता है, ने एक बार अभियान आरंभ करके लोगों को प्रेरणा दी कि वह अपने मन-मुटाव खत्म करने के लिए उन लोगों के पास जाएँ, जिनसे उनका किसी न किसी कारण मतभेद हो गया था और इस वक्त उनके बोलचाल बन्द है। तथा उनसे क्षमा माँगें। लोगों ने उनकी बात मानते हुए ऐसा ही किया व तदुपरान्त अपने अनुभव प्रकट करते हुए भाई साहिब को बताया कि कई लोगों से उनकी बातचीत कई वर्षों से बंद थी पर जब वे नम्रता सहित उनसे क्षमा माँगने गए तो उन लोगों ने आगे बढ़कर उन्हें अपने गले से लगा लिया। उन्होंने एक दूसरे को क्षमा ही नहीं किया वरन् उनकी आँखों से बहे प्रेम-पूर्ण अश्रुओं ने उनकी वर्षों पुरानी ईष्या व द्वेष की दीवारों को तोड़ दिया और इस घटना के बाद उन्हें ऐसा लगा कि उनको सुखमय नवजीवन मिल गया।

इसी संबंध में मैं आपके साथ एक ओर घटना सांझी कर रहा हूँ:-

प्रभु के प्यार व भक्ति में हरदम लीन रहने वाले एक गुरुमुख सज्जन थे। उनके साथ उनके कुछ मित्र व साथी भी रहते थे। उन गुरुमुख सज्जन का अपना जीवन तो गुरु-सिखी-युक्त व द्वेष-रहित था, पर उनके साथी आपस में या दूसरों के साथ मनमुटाव व द्वेष की भावना रखते थे।

एक दिन उन्होंने अपने सभी साथियों को अपने पास बुलाकर पूछा कि उनकी कितने लोगों के साथ नहीं बनती ? किसी ने कहा कि उनकी दो लोगों के साथ नहीं बनती, किसी ने चार और किसी ने छ: लोगों के साथ मन-मुटाव की बात को स्वीकारा। गुरुमुख सज्जन ने उन सभी को एक कपड़े की थैली सिलवाने के लिए कहा और यह भी कहा कि जितने भी लोगों के साथ उनकी नहीं बनती उतने-उतने आलू उस थैली में डाल लो। साथ ही उन्होंने यह भी

निर्देश दिया कि आलू वाली इस थैली को सदैव अपने शरीर के साथ बाँध कर रखना है। सभी ने उनके निर्देशानुसार वैसा ही किया। थोड़े ही दिनों के उपरान्त उन आलुओं से दुर्गंध आनी आरंभ हो गई जो कि दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई।

वे सब मिलकर उन गुरुमुख सज्जन के पास गए और प्रार्थना की कि उन आलुओं की दुर्गंध से वे बहुत परेशान हैं तथा अब वे इससे छुटकारा पाने की आज्ञा चाहते हैं। गुरुमुख सज्जन उनको कहने लगे कि आप इन आलुओं की दुर्गंध से इतने परेशान हो गए हैं पर अपने मन के भीतर झाँक कर देखो कि जिन लोगों से आपके मतभेद हैं, उनके विचार आते ही तुम्हारे मन पर कितना दुष्प्रभाव पड़ता है और उन विचारों की दुर्गंध तुम्हारे जीवन में कभी अमन और शान्ति नहीं होने देती। इसलिए अगर आप इन्हीं आलुओं की दुर्गंध से शिक्षा लेकर अपने मतभेद दूर कर लें तो आपकी नई जिंदगी आरंभ हो सकती है।

उनके साथियों ने इसी प्रकार किया और उन्होंने नए जीवन का शुभारंभ किया।

इससे हमने यह शिक्षा प्राप्त करनी है कि हमें द्वेष-रहित जीवन-यापन करना चाहिए।

अकाल मूरति (ਅਕਾਲ ਮੂਰਤਿ)

अर्थ : परमात्मा एक ऐसी हस्ती है जिस पर समय का कोई प्रभाव नहीं एवं जो कि नाश रहित है।

अजूनी (ਅਜੂਨੀ)

अर्थ : परमात्मा जूनों में नहीं आता।

सैभं (ਸੈਭੰ)

इस का अर्थ है कि परमात्मा को किसी ने नहीं बनाया अर्थात उसका प्रकाश स्वयं से है अर्थात वह self created है।

परमात्मा के इन उपर्युक्त तीनों गुणों (अकाल मूरति, अजूनी व सैभं) से हमने यह शिक्षा लेनी है कि यदि हम परमात्मा में एकाकार होना चाहते हैं तो हमें अपने मन को एकाग्र कर परमात्मा में सुरति (ध्यान) जोड़कर रखनी चाहिए जो कि 'अकाल मूरति', 'अजूनी' व 'सैभं' है। इस अभ्यास से यदि गुरु

की कृपा से, गुरू की मेहर से हमारा यह स्वभाव बन जाए कि हर क्षण वह हमें स्मरण रहे तो हम भी 'अकाल मूरति', 'अजूनी' और 'सैभं' में समा सकते हैं। जैसा कि गुरबाणी फरमान है :-

"ਜੈਸਾ ਸੇਵੈ ਤੈਸੋ ਹੋਇ॥" (ਅੰਗ: 223)

''जैसा सेवै तैसो होइ।।'' (अंग: 223)

भाव : यह यर्थाथ है कि मनुष्य जिस की सेवा करता है सेवा करते-करते वह स्वयं भी उस जैसा ही बन जाता है।

गुर प्रसादि (ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ)

अर्थ :- ऊपर के गुणों वाला परमात्मा गुरु की कृपा से मिलता है।

मूलमंत्र में यह बात स्पष्ट रूप से कही गई है कि परमात्मा का मिलन गुरु कृपा से ही संभव है।

अब प्रश्न यह उठता है कि मैं 'गुरु-कृपा' का पात्र कैसे बनूँ?

इस संबंध में इतिहास में उल्लेख किया गया है कि दो सिख धन्य श्री गुरु रामदास जी के दरबार में गए व प्रार्थना करने लगे कि हम गृहस्थी हैं और हमें जीवन जीने की कोई ऐसी कला के बारे में बताने की कृपा करें कि गृहस्थ धर्म निभाते हुए हम 'गुरु की कृपा' के पात्र बन सकें तथा मोक्ष की प्राप्ति हो जाए। (अर्थात हम जन्म-मरण के बंधनों से मुक्त हो जाए)। उत्तर देते हुए धन्य श्री गुरु रामदास जी ने कहा कि अगर तुम जीवन में दो बातों को सदैव याद रखोगे तो गुरु की कृपा के पात्र बन जाओगे।

प्रथम - कोई भी कार्य आरंभ करने से पहले मन को पूछना है-

"ਗੁਰ ਕਹੈਂ ਕਿਆ-ਹਮ ਕਰੇਂ ਕਿਆ।"

''गुर कहैं किआ-हम करें किआ।।''

अर्थात गुरु जी क्या कहते हैं और हम क्या कर रहे हैं।

द्वितीय - प्रतिदिन सत्संगति करनी है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि कोई भी कार्य प्रारंभ करने से पहले हमने स्वयं से प्रश्न करना है कि क्या यह कार्य गुरु की इच्छानुसार है या नहीं। अगर हम अपने जीवन में केवल वही कार्य करें जो गुरु की इच्छानुसार हों तो हम पर भी गुरु-कृपा हो जाएगी तथा हमारा जीवन भी सफल हो जाएगा।

।। जपु ।।

उच्चारण : जप

यह आगे आने वाली बाणी का शीर्षक है। बाणी का असली नाम 'जपु' है। हम सम्मान सहित इसे जपु जी साहिब कहते हैं।

आदि सचु जुगादि सचु।।
है भी सचु नानक होसी भी सचु।। १।।

उच्चारण : आदि—आद। **सचु**—सच्च। **जुगादि**—जुगाद।

यह सलोक मंगलाचरण के रूप में है। इस में गुरू नानक देव जी ने अपने आराध्य के स्वरूप का वर्णन किया है जिसका जाप—सुमिरन करने का उपदेश, इस सारी 'जपु' बाणी में किया गया है।

पद अर्थ : आदि—आरंभ। **सचु**—अस्तित्व वाला। **जुगादि**—युगों के प्रारंभ से। **नानक**—हे नानक!

अर्थ : हे नानक! अकाल पुरख प्रारंभ से (संसार की उत्पत्ति से पूर्व) ही अस्तित्व वाला है। युगों के प्रारम्भ होने से पहले मौजूद है। इस समय भी मौजूद है और भविष्य में भी अर्थात आने वाले समय में भी अस्तित्व वाला रहेगा। भाव अकाल पुरख की हस्ती कभी भी समाप्त नहीं हो सकती।

पाठ का उच्चारण : 'जपु' शब्द के उच्चारण के बाद हल्का सा विश्राम देना है क्योंकि यह 'जपु' शब्द 'जपु' बाणी का सम्बोधक है। अलग से है। इसको 'जपु आदि सचु जुगादि' करके पढ़ना अशुद्ध है। जहां नानक का 'क' अक्षर मात्रा रहित हो, भाव 'क' अक्षर को कोई मात्रा आदि न लगी हो, वहां पर इसका अर्थ, हे नानक! संबोधन रूप में होता है। इसलिए नानक शब्द के पश्चात् हल्का-सा विश्राम देना है।। १।।

सलोक से शिक्षा

।। जपु ।।

आदि सचु जुगादि सचु।। है भी सचु नानक होसी भी सचु।। १ ।।

अर्थात हे नानक! अकाल पुरखु संसार की उत्पत्ति से पहले का मौजूद है, युगों के आरम्भ से पहले का है, आज भी है और भविष्य में भी सदा रहेगा। उसकी हस्ती कभी भी खत्म नहीं हो सकती।

इस सलोक से 'जपु' बाणी आरंभ होती है। 'जपु' बाणी से पहले मूलमंत्र है जिसके संक्षेप अर्थ व शिक्षाएँ पहले दी जा चुकी हैं। 'जपु' का अर्थ है - जप करना, सिमरन करना व ईश्वर की आराधना (बंदगी) करना। 'जपु' अर्थात ईश्वरीय आराधना का इतना महत्व है कि एक बार गुरु गोबिंद सिंह जी ने भाई नंद लाल सिंह जी को संबोधित करते हुए कहा कि सुनिए नंद लाल सिंह जी **''बंदगी ही ज़िन्दगी है व जिस ज़िंदगी में बंदगी नहीं, वह ज़िंदगी नहीं ब्लकि गंदगी है।''** जप करने की बख्शीश इतनी बखशश, कृपा व मेहर से भरपूर है कि जीव उस परमेश्वर के नाम को जप-जप के उसका ही अभिन्न रूप हो जाता है। इस संबंध में गुरुबाणी के फ़रमान है:-

''ਨਾਨਕ ਹਰਿ ਜਨ ਹਰਿ ਇਕੇ ਹੋਏ ਹਰਿ ਜਪਿ ਹਰਿ ਸੇਤੀ ਰਲਿਆ॥''

(ਅੰਗ: 562)

''नानक हरि जन हरि इके होए हरि जपि हरि सेती रलिआ।।''

(अंग: 562)

एवं

''ਜਿਨ ਹਰਿ ਜਪਿਆ ਸੇ ਹਰਿ ਹੋਏ ਹਰਿ ਮਿਲਿਆ ਕੇਲ ਕੇਲਾਲੀ॥''

(ਅੰਗ: 667)

''जिन हरि जपिआ से हरि होए हरि मिलिआ केल केलाली।।''

(अंग: 667)

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि गुरु के सिख ने सदैव परमात्मा का नाम जपना है, उस अकाल पुरखु का नाम जपना है जो आरंभ से सत्य है, युगों-युगों से सत्य है, वर्तमान में भी सत्य है, और भविष्य में भी सत्य रहेगा।

सिख ने एक अकाल पुरखु के अतिरिक्त अन्य किसी का न जप करना है, न सिमरन करना है और न ही अराधना करनी है।

यदि कोई प्रश्न करे कि उस का सिमरन कितना करना चाहिए तो इसके उत्तर में गुरु जी का फ़रमान है :

''ਸਾਸਿ ਸਾਸਿ ਸਿਮਰਹੁ ਗੋਬਿੰਦ॥ ਮਨ ਅੰਤਰ ਕੀ ਉਤਰੈ ਚਿੰਦ॥'' (ਅੰਗ: 295)

''सासि सासि सिमरहु गोबिंद।। मन अंतर की उतरै चिंद।।''

(अंग: 295)

गुरु साहिब जी ने हमें सावधान करते हुए यह भी समझाया है कि परमात्मा का नाम जपने के लिए हमें एक भी क्षण नहीं गँवाना चाहिए क्योंकि जीवन का कोई भरोसा नहीं कि यह कब समाप्त हो जाए। गुरुबाणी का फ़रमान है :

''ਹਰਿ ਜਪਦਿਆ ਖਿਨੁ ਢਿਲ ਨ ਕੀਜਈ ਮੇਰੀ ਜਿੰਦੁੜੀਏ
ਮਤੁ ਕਿ ਜਾਪੈ ਸਾਹੁ ਆਵੈ ਕਿ ਨ ਆਵੈ ਰਾਮ॥'' (ਅੰਗ: 540)

''हरि जपदिआ खिनु ढिल न कीजई मेरी जिंदुड़ीए
मतु कि जापै साहु आवै कि न आवै राम।।'' (अंग: 540)

पहली पउड़ी

सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार।।
चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार।।
भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार।।
सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि।।
किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि।।
हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।। १।।

उच्चारण : सोचि—सोच। **सोची**—सोचीं। **लाइ**—लाए। **रहा**—रहां। **भुखिआ**—भुखिआं। **भुखि**—भुख। **पुरीआ**—पुरीआं। **नालि**—नाल। **सिआणपा**—सिआणपां। **होहि**—होहिं। **बंना**—बन्ना। **हुकमि**—हुक्म। **लिखिआ**—लिख्या। **नालि**—नाल। **रजाई**—रज़ाई।

पद अर्थ : सोचै—सुच्च (कर्मकांडीय पवित्रता) रखने वाला। **सोचि**—पवित्रता। **सोची**—सोचीं, मैं सुच्च (पवित्रता) रखूँ। **चुपै**—चुप कर जाने से। **चुप**—मन का टिकाव। **लिवतार**—निरन्तर समाधि। **भुखिआ**—तृष्णा के अधीन रहने से। **बंना**—बांधू, बांध लूं, संभाल लूं। **पुरीआ भार**—सारे संसार के पदार्थों के ढेर। **सहस**—हज़ार। **सिआणपां**—चतुराईयां। **होहि**—हों? **सचिआरा**—सत्य का प्रकाश होने के लिए योग्य। **हुकमि**—आदेश में। **रजाई**—रज़ा वाला, अकाल पुरख। **नालि**—जीव के साथ ही, जब से संसार बना है।

नोट : गुरू साहिब पहली चार पंक्तियों में पराधर्मों द्वारा प्रयोग किए गए तरीके अथार्त तीथों के स्नान, जंगलों में जाकर समाधि लगाना, मन को माया से भर लेना, शास्त्रों की फिलासफी का ज्ञान आदि का वर्णन करके उसको निरर्थक बताते हैं और फिर पाँचवीं पंक्ति में गुरसिखी का साधन बताते हैं—अकाल पुरख की रज़ा में चल कर ही हमारे अंदर का झूठ का पर्दा टूट सकता है और हम 'सचिआर' बन सकते हैं।

अर्थ : यदि मैं लाख बार भी तीर्थ स्नान आदि से शरीर पवित्र रखूँ, तो भी इस प्रकार शारीरिक पवित्रता रखने से मन की पवित्रता नहीं रह सकती। यदि मैं शरीर की निरंतर समाधि लगाए रखूं तों भी इस प्रकार बाहर से मौन धारण कर लेने से मन की शान्ति नहीं हो सकती। यदि मैं सारे संसार के पदार्थों के ढेर भी संभाल लूं तों भी तृष्णा के अधीन रहने से तृष्णा (मन की भूख) दूर नहीं हो सकती। यदि मुझ में हज़ारों तथा लाखों चतुराईयां हों, तो भी उन में से एक चतुराई ईश्वरीय दरगाह में साथ नहीं देती। तो फिर अकाल पुरख का प्रकाश होने के लिए योग्य कैसे बन सकते हैं और हमारे अंदर का झूठ का पर्दा कैसे टूट सकता है ? इसका उत्तर है कि रज़ा के मालिक अकाल पुरख के हुक्म में चलना। यही एक स्त्रोत या साधन है जिससे झूठ की दीवार टूट सकती है। हे नानक! यह विधि प्रारंभ से ही, जब से संसार बना है, जीव के साथ लिखी हुई चली आ रही है। हुक्म में चलने का भाव प्रभु परमात्मा से प्यार करना है। परमात्मा के स्वभाव जैसा अपना स्वभाव बनाना है। परमात्मा के गुणों को अपने अंदर धारण करना है।

पहली पउड़ी की शिक्षा

श्री गुरु नानक देव जी का जब प्रकाश हुआ तब परमार्थ के मार्ग पर चलने वाले पथिकों का मत था कि कई प्रकार के कर्मों द्वारा उनका परमात्मा से मिलाप हो सकता है। गुरुदेव पिता जी ने उन कर्मकांडों का खंडन करके परमार्थ के पथिक को जो मार्ग बतलाया है, वो है :-

''हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।। १।।''

और यही है श्री गुरु नानक पातशाह जी का निराला पंथ जिसका वृतांत भाई गुरदास जी ने किया है :-

''ਮਾਰਿਆ ਸਿਕਾ ਜਗਤ੍ਰਿ ਵਿਚਿ ਨਾਨਕ ਨਿਰਮਲ ਪੰਥ ਚਲਾਇਆ॥''

''मारिआ सिका जगत्रि विचि नानक निरमल पंथ चलाइआ।।''

श्री गुरु नानक पातशाह जी के समय जो निम्नलिखित कर्मकांड चल रहे थे, सतिगुरु जी ने उनका खंडन किया।

''ਸੋਚੈ ਸੋਚਿ ਨ ਹੋਵਈ ਜੇ ਸੋਚੀ ਲਖ ਵਾਰ॥'' ''सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार।।'' अर्थात बाहरी पवित्रता परमात्मा प्राप्ति के लिए किसी अर्थ नहीं आती। (इस सम्बंध में देखो साखी पृष्ठ नं. 178 पर)

''ਚੁਪੈ ਚੁਪ ਨ ਹੋਵਈ ਜੇ ਲਾਇ ਰਹਾ ਲਿਵ ਤਾਰ'', ''चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार।।'' अर्थात मौन-व्रत धारण करना व मात्र दिखावे के लिए आँखें मूँदने से कोई पवित्र नहीं बन सकता। (इस सम्बंध में देखो साखी पृष्ठ नं. 180 पर)

''ਭੁਖਿਆ ਭੁਖ ਨ ਉਤਰੀ ਜੇ ਬੰਨਾ ਪੁਰੀਆ ਭਾਰ'' ''भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार।।'' अर्थात हम जितने भी भौतिक पदार्थ एकत्रित कर लें पर हमारी तृष्णा समाप्त नहीं हो सकती और न ही हम पवित्र बन सकते हैं। (इस सम्बंध में देखो साखी पृष्ठ नं. 182 पर)

''ਸਹਸ ਸਿਆਣਪਾ ਲਖ ਹੋਹਿ ਤ ਇਕ ਨ ਚਲੈ ਨਾਲਿ॥'' ''सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि।।'' अर्थात अगर हमारे में लाखों चतुराईयां भी हों तो भी उनमें से कोई भी चतुराई परमात्मा की दरगाह में हमारा साथ नहीं देती एवं न ही हम इन चतुराईयों से पवित्र एवं सचिआर बन सकते हैं। (इस सम्बंध में देखो कहानी पृष्ठ नं. 184 पर)

अब हमारे समक्ष प्रश्न यह आएगा कि जीव पवित्र व सचिआर कैसे होगा व इसके अर्न्तमन से झूठ की दीवार कैसे टूटेगी तो इस संदर्भ में गुरु जी फैंसला देते हुए कहते हैं कि **''हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।। १।।''**

रज़ा (इच्छा) क्या है ?

हुक्मी परमेश्वर के हुक्म में जीवन बिताना ही रज़ा है। गुरुदेव जी का फ़रमान है–

''ਬੰਦਿ ਖਲਾਸੀ ਭਾਣੈ ਹੋਇ॥ ਹੋਰੁ ਆਖਿ ਨ ਸਕੈ ਕੋਇ॥''

''बंदि खलासी भाणै होइ।। होरु आखि न सकै कोइ।।''

'बंदि खलासी' भाव बंधनों से मुक्ति अकाल पुरखु की इच्छानुसार चलने से ही होती है। इससे अभिप्राय यह है कि मनुष्य ने जीवन के सभी कार्य अपने पूरे मन से करने है व उसके बाद उसे परमात्मा को अर्पण करने हैं। उसके बाद जो अकाल पुरखु की रज़ा है उसे खुले मन से स्वीकार करना है।

उदाहरणार्थ – कोई बच्चा IAS बनना चाहता है। उसके लिए वह पूर्ण रूप से उद्यम करता है, श्रेष्ठ अध्यापकों से शिक्षा भी लेता है, IAS की परीक्षा भी देता है। परन्तु परिणाम आने पर उसे ज्ञात होता है कि कम अंक आने के कारण IAS के स्थान पर उसकी नियुक्ति Allied Services में हो गई है। वह फिर से तीन–चार बार IAS की परीक्षा देता है पर हर बार कम अंक आने पर उसकी नियुक्ति Allied Services में ही होती है तथा अब IAS की परीक्षा दने के अवसर भी उसके पास नहीं है। अब उसे न क्रोध करना चाहिए, न ही निराश होना चाहिए बल्कि परमात्मा की इच्छा जानकर इसे सहर्ष ही स्वीकार करना चाहिए।

इस संबंध में श्री गुरू अमरदास जी ने अपनी सुपुत्री बीबी भानी जी को जो तीन उपदेश दिए हैं उसमें परमात्मा के **हुक्म (भाने)** के अन्दर रहना भी एक आदेश है। बाकी दो आदेश हैं :– **'भला जी'** एवं **'भुल्ली जी'** अर्थात जो कुछ हो रहा है वह हमारी भलाई में है और अगर हमारे से गलती हो जाए तो क्षमा मांगनी।

दूसरी पउड़ी

हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई।।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई।।
हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि।।
इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि।।
हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ।।
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।। २।।

उच्चारण : होवनि—होवन। **हुकमु**—हुक्म। **उतमु**—उत्तम। **हुकमि**—हुक्म। **लिखि**—लिख। **पाईअहि**—पाईंअहिं। **इकि**—इक। **भवाईअहि**—भवाईंअहिं। **बखसीस**—बखशीश। **अंदरि**—अंदर। **सभु**—सभ। **बाहरि**—बाहर। **कोइ**—कोय।

पद अर्थ : हुकमी—अकाल पुरख के हुक्म के अनुसार। **आकार**—शरीर। **पाईअहि**—पाते हैं। **भवाईअहि**—घुमाए जाते हैं।

अर्थ : अकाल पुरख के हुक्म के अनुसार सारे शरीर बनते हैं, पर इस का वर्णन नहीं किया जा सकता कि यह हुक्म कैसा है। ईश्वर के हुक्म के अनुसार सारे जीव पैदा होते हैं और हुक्म के अनुसार ही जीवों को ईश्वर के दर पर शोभा मिलती है। ईश्वरीय हुक्म के अनुसार कोई मनुष्य अच्छा और कोई बुरा बन जाता है। उसके हुक्म में ही किए हुए कर्मों के लेख के अनुसार मनुष्य दुःख तथा सुख भोगते हैं। हुक्म में ही कई मनुष्यों पर अकाल पुरख के दर से कृपा होती है। और उसके हुक्म में ही कई मनुष्य नित्यप्रति जन्म मरण के भंवर में घूमते हैं। प्रत्येक जीव ईश्वर के हुक्म में ही है, कोई जीव हुक्म से बाहर नहीं हो सकता। हे नानक! यदि कोई मनुष्य अकाल पुरख के हुक्म को समझ ले तो फिर वह अहं वाली, भाव अहंकार वाली बातें नहीं करता।

पाठ का उच्चारण : (1) आकार शब्द को अकार नहीं पढ़ना। 'अ' को लगी (ा) की मात्रा लगा कर 'आकार' पढ़ना है।

(2) जीअ शब्द का उच्चारण जीआ नहीं करना। 'जीअ' शब्द में 'अ' केवल 'ज' अक्षर को लगी (ी) की मात्रा की आवाज़ लंबी करने के लिए है। अत: शुद्ध उच्चारण (ी) की मात्रा लंबी करके 'जी' ही होगा।

दूसरी पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई।।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ...।।''

अकाल पुरखु की आज्ञानुसार ही हमें सब को शरीर प्राप्त हुए हैं। अकाल पुरखु के उस हुक्म का वर्णन करना, जिसके अनुसार उसने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की है व प्रत्येक मनुष्य के मस्तक पर कर्म लिखे हैं, वह किसी मनुष्य के लिए संभव नहीं। परमात्मा की आज्ञानुसार ही मनुष्य एक दूसरे के सगे-संबंधी बनते हैं और प्रशंसा के पात्र बनते हैं। परन्तु कई मनुष्य अपने शरीर के रूप-रंग व आकार से संतुष्ट नहीं होते व परमात्मा के साथ रोष करते हैं और कई मनुष्य किसी दूसरे के शरीर को देखकर उसका मज़ाक भी उड़ाते हैं। कई इस बात का भी उलाहना परमात्मा को देते हैं कि आप ने ये मुझे कैसे संगे-संबंधी दिए हैं तथा मुझे जीवन में प्रशंसा क्यों प्राप्त नहीं होती ? वे यह बात भूल जाते हैं कि :-

''ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥'' (अंगः 433)
''ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ।।
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना।।''
(अंगः 433)

अर्थात किसी अन्य को दोष नहीं देना चाहिए। दोष हमारे पूर्व कृत कर्मों का है। जिस प्रकार के कर्मों के बीज हमने बोयें हैं, हमें वैसा ही फल मिलेगा। **इससे हमें यह शिक्षा प्राप्त होती है कि यदि हमारे कर्मों का फल ही हमें मिलना है तो हम कोई भी गलत काम न करें जिस के करने से बाद में मुझे पछताना पड़े।** इस संबंध में गुरुबाणी फ़रमान भी है :-

''ਐਸਾ ਕੰਮੁ ਮੂਲੇ ਨ ਕੀਚੈ ਜਿਤੁ ਅੰਤਿ ਪਛੋਤਾਈਐ॥'' (अंगः 918)
''ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ।।''
(अंगः 918)

और पिछले अवगुणों की क्षमा-याचना करते हुए अरदास करनी है कि :-

''ਪਿਛਲੇ ਅਉਗੁਣ ਬਖਸਿ ਲਏ ਪ੍ਰਭੁ ਆਗੈ ਮਾਰਗਿ ਪਾਵੈ॥'' (ਅੰਗ: 624)

''पिछले अउगुण बखसि लए प्रभु आगै मारगि पावै।।'' (अंग: 624)

दूसरी शिक्षा

''हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ।।
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।।''

अर्थात सब कुछ उसकी आज्ञानुसार ही हो रहा है और उसकी आज्ञा के बिना कुछ भी संभव नहीं। जो मनुष्य परमात्मा की आज्ञा को समझ लेता है फिर वह अंहकार-पूर्ण बातें नहीं करता। पर यह मानव स्वभाव है कि यदि कुछ गलत होता है तो हम उसका दोष परमात्मा को दे देते हैं तथा अच्छे कर्मों का श्रेय स्वयं ले लेते हैं। यह बात विचारणीय है कि यह जीवन और शरीर देने वाला तो वह परमात्मा स्वयं है पर हम धन्यवाद करने के स्थान पर 'मैं-मैं' करने लग पड़ते हैं कि यह कार्य मेरी समझदारी से ही संभव हुआ है। जैसे:-

''दाति जोति सभ सुरति तेरी॥ बहुतु सिआणप हउमै मेरी॥''

(ਅੰਗ: 1251)

''दाति जोति सभ सूरति तेरी।। बहुतु सिआणप हउमै मेरी।।''

(अंग: 1251)

इससे हमें यह शिक्षा प्राप्त करनी है कि अपने द्वारा किए शुभ कर्मों का श्रेय स्वयं न लेकर परमात्मा को देना है तथा अहंकार न करके उसका धन्यवाद करना है। यदि यह हमारे जीवन का स्वभाव बन जाए तो फिर हमारे अन्दर से 'मैं' व 'अंहकार' की समाप्ति हो जाएगी व हमारे अर्न्तमन में व्याप्त झूठ की दीवार भी टूट जाएगी। **हमें यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि अंहकार का विनाश ही परमात्मा का मिलाप है।** जैसे :-

''ਹਉਮੈ ਬੂਝੈ ਤਾ ਦਰੁ ਸੂਝੈ॥'' (ਅੰਗ: 466)

''हउमै बूझै ता दरु सूझै।।'' (अंग: 466)

तीसरी पउड़ी

गावै को ताणु होवै किसै ताणु।। गावै को दाति जाणै नीसाणु।।
गावै को गुण वडिआईआ चार।। गावै को विदिआ विखमु वीचारु।।
गावै को साजि करे तनु खेह।। गावै को जीअ लै फिरि देह।।
गावै को जापै दिसै दूरि।। गावै को वेखै हादरा हदूरि।।
कथना कथी न आवै तोटि।। कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि।।
देदा दे लैदे थकि पाहि।। जुगा जुगंतरि खाही खाहि।।
हुकमी हुकमु चलाए राहु।। नानक विगसै वेपरवाहु।। ३।।

उच्चारण : ताणु—ताण। **दाति**—दात। **नीसाणु**—नीशाण। **विदिआ**—विद्या। **विखमु**—विखम। **वीचारु**—वीचार। **वडिआईआ**—वडिआईयां। **साजि**—साज। **तनु**—तन। **फिरि**—फिर। **दूरि**—दूर। **हदूरि**—हदूर। **तोटि**—तोट। **कथि**—कथ। **कोटि**—कोट। **कोटी**—कोटीं। **थकि**—थक। **देदा**—देंदा। **जुगंतरि**—जुगंतर। **खाहि**—खाहिं। **लैदे**—लैंदे। **पाहि**—पाहिं। **जुगा**—जुगां। **खाही**—खाहीं। **हुकमु**—हुकम। **राहु**—राह। **वेपरवाहु**—वेपरवाह।

पद अर्थ : ताणु—बल। **दाति**—प्रदत्त पदार्थ। **नीसाणु**—कृपा की निशानी। **चार**—सुन्दर। **विखमु**—कठिन। **वीचारु**—ज्ञान। **साजि**—पैदा करके। **खेह**—स्वाह। **जीअ**—जान। **देह**—दे देता है। **जापै**—ऐसा लगता है। **हादरा हदूरि**—हाज़र नाज़र, सर्वव्यापक। **कथना**—कहना। **तोटि**—अंत। **कोटि**—करोड़। **कोटी**—करोड़ों बार। **देदा**—देने वाला ईश्वर। **लैदे**—लैने वाले जीव। **जुगा जुगंतरि**—सारे युगों में भाव सदा से ही। **हुकमी हुकमु**—हुक्म वाले ईश्वर का हुक्म। **राहु**—संसार का कार्य-विहार। **नानक**—हे नानक। **विगसै**—प्रसन्न होता है।

अर्थ : जिस जीव के पास अकाल पुरख की कृपा का बल होता है, वह अकाल पुरख के बल को देखकर गुणगान करता है, भाव वह अकाल पुरख के उन कार्यों का कथन करता है जिनसे उसकी बड़ी शक्ति प्रकट हो। कोई जीव अकाल पुरख की प्रदत्त वस्तुओं को ईश्वर की कृपा की निशानी समझ कर उस

के गुणगान करता है। कोई मनुष्य ईश्वर के सुंदर गुणों और सुंदर महानता का वर्णन करता है। कोई मनुष्य विद्या के बल से अकाल पुरख के कठिन ज्ञान को गाता है भाव शास्त्र आदि द्वारा आत्मिक फिलासफी के कठिन विषयों पर विचार करता है। कोई मनुष्य ऐसे गाता है कि अकाल पुरख शरीर को बना कर फिर खाक कर देता है। कोई ऐसे गाता है कि अकाल पुरख शरीरों में से जान निकाल कर फिर दूसरे शरीरों में डाल देता है। दातार अकाल पुरख सभी जीवों को धन पदार्थ दे रहा है पर जीव ले-ले कर थक जाते हैं। सभी जीव सदा से ही ईश्वर द्वारा प्रदत्त पदार्थ खाते चले आ रहे हैं। हुक्म वाले ईश्वर का हुक्म ही संसार की गाड़ी अथवा नैय्या को चला रहा है। हे नानक! वह निरंकार सदा वेपरवाह है और प्रसन्न है। भाव, सभी जीवों को अटूट पदार्थ देते हुए भी अकाल पुरख सदा प्रसन्नता में रहता है। उसकी हुक्म रूपी सत्ता ही सारे कार्यों को निभा रही है।

पाठ का उच्चारण : (1) 'राहु' और 'वेपरवाहु' का शुद्ध उच्चारण 'राह' और 'वेपरवाह' है। 'ह' को लगी छोटे उ (ु) की मात्रा एक वचन पुलिंग संज्ञा का सूचक है जो उच्चारण में बोला नहीं जाता। इन शब्दों को राहो तथा वेपरवाहो पढ़ना अशुद्ध है। (2) नीसाणु का उच्चारण 'नीशाण' करना शुद्ध है। ३।

तीसरी पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''गावै को ताणु होवै किसै ताणु।। गावै को दाति जाणै नीसाणु।।''

इस पउड़ी में गुरुदेव पिता हमें यह समझाते हैं कि सभी प्राणी उस अकाल पुरखु के गुणों का गायन अलग-अलग प्रकार से कर रहे हैं। कुछ उनकी शक्ति का वर्णन करते हुए उसके गीत गा रहें हैं, कुछ उनके दिए वरदानों का व कुछ उसकी मेहर व दया को याद कर उसके गीत गा रहे हैं। परमात्मा के साथ लिव जोड़ने के लिए जो मनुष्य **''ਗਾਵੈ ਕੋ ਦਾਤਿ ਜਾਣੈ ਨੀਸਾਣੁ॥' ''गावै को दाति जाणै नीसाणु।।''** वाली विधि को अपना लेता है वह बहुत सुगमता से प्रभु में लीन हो सकता है।

उदाहरणार्थ हम प्रतिदिन परमात्मा के दिए अनगिणत वरदानों का आनंद लेते हैं जैसे कि हवा, पानी, भोजन, निरोग शरीर, वाहन-सुख, गृह-सुख, माता-पिता, बहन-भाई का प्यार आदि-आदि। किसी भी प्राणी को ये वरदान दावा व हक से नहीं बल्कि परमात्मा की दया, मेहर व अनुकंपा से ही प्राप्त होते हैं।

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि प्रभु के दिए इन सभी वरदानों को उसकी कृपा मानते हुए उसका हर वक्त धन्यवाद अवश्य करें। हमें परमात्मा के साथ जुड़ना चाहिए न कि उसके दिए वरदान रूपी भौतिक पदार्थों से।

दूसरी शिक्षा

''कथना कथी न आवै तोटि।। कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि।।''

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि अनगिणत बार वर्णन करके भी जीव उस परमात्मा का अंत नहीं पा सकता व हमने भी उस अगम्य व अकथनीय परमात्मा का अंत पाने का प्रयत्न नहीं करना है।

तीसरी शिक्षा

''हुकमी हुकमु चलाए राहु।। नानक विगसै वेपरवाहु।।''

परमात्मा की आज्ञानुसार ही यह जगत चल रहा है और गुरदेव पिता कहते हैं कि संसार को चलायमान रखते हुए परमात्मा बेफिक्र, प्रसन्नचित व सदा दयापूर्ण रहता है। **इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि** उस परमात्मा की अंश होने के नाते हमें भी सभी कार्य करते हुए चिंता रहित जीवन व्यतीत करना है और याद रखना है :-

''ਚਿੰਤਾ ਛਡਿ ਅਚਿੰਤੁ ਰਹੁ ਨਾਨਕ ਲਗਿ ਪਾਈ॥'' (ਅੰਗ: 517)

''चिंता छडि अचिंतु रहु नानक लगि पाई।।'' (अंग: 517)

चौथी पउड़ी

साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु।।
आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु।।
फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु।।
मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु।।
अमृत वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु।।
करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु।।
नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु।। ४।।

उच्चारण : साहिबु—साहिब। **नाइ**—नायं। **अपारु**—अपार। **आखहि**—आखहिं। **मंगहि**—मंगहिं। **देहि**—देह। **दाति**—दात। **दातारु**—दातार। **भाखिआ**—भाख्या। **भाउ**—भाओ। **फेरि**—फेर। **जितु**—जित। **दरबारु**—दरबार। **बोलणु**—बोलण। **सचु**—सच्च। **नाउ**—नाओं। **वीचारु**—वीचार। **मोखु**—मोख। **दुआरु**—दुआर। **एवै**—ऐवैं। **जाणीऐ**—जाणीऐ। **सभु**—सभ। **सचिआरु**—सचिआर।

पद अर्थ : साचा—सदा स्थिर रहने वाला। **नाइ**—न्याय। **भाखिआ**—बोली। **भाउ**—प्रेम। **अपारु**—अनतं। **फेरि**—फिर। **कि**—कौन सी भेंट। **कि बोलणु**—कौन सा वचन। **अमृत वेला**—प्रभात का समय। **करमी**—प्रभु की कृपा द्वारा। **कपड़ा**—स्तुति गायन रूपी कपड़ा। **मोखु**—मुक्ति। **दुआरु**—ईश्वर का दरवाज़ा। **सभु**—सब जगह पर।

अर्थ : अकाल पुरख सदा स्थिर रहने वाला है, उसका न्याय भी अटल है। उसकी बोली प्रेम है, और वह अकाल पुरख अनंत है। जीव उससे वस्तुएं आदि मांगते हैं और कहते हैं, हे प्रभु। हमें वस्तुएं प्रदान करो। वह दातार प्रभु कृपा करता है। प्रभात के समय (जिस समय पूर्ण खिड़ाव होता है, मनुष्य का मन आम तौर पर संसार के झमेलों से मुक्त हुआ होता है) प्रभु का नाम सुमिरन करें तथा उसकी महानता की विचार करें। इस प्रकार से प्रभु की कृपा से

सिफति स्तुति रूपी वस्त्र मिलता है। उस प्रभु की कृपा द्वारा 'कूड़ की पालि' अर्थात झूठ की काई से छुटकारा मिलता है और ईश्वर का दर प्राप्त होता है। हे नानक! इस प्रकार यह समझ आ जाती है कि वह अस्तित्व का मालिक अकाल पुरख सब जगह पर मौजूद है।

चौथी पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु।।''

अर्थात अकाल पुरखु सदा स्थायी (स्थिर) है, उसका न्याय सदा अटल है, उसकी बाणी प्रेममय है।

परमात्मा के साथ स्वयं का भेद मिटाने का यही उपाय है कि हमारा स्वभाव परमात्मा के स्वभाव से मिल जाए। अब यदि परमात्मा की बाणी प्रेममय है तो हमारी बाणी भी प्रेममय ही होनी चाहिए। यदि हम कटुभाषी होंगे तो हमारा स्वभाव परमात्मा के स्वभाव से भिन्न हो जाएगा व परमात्मा से हमारा मिलाप संभव नहीं होगा।

गुरुबाणी में यह भी लिखित है :-

''ਮਿਠ ਬੋਲੜਾ ਜੀ ਹਰਿ ਸਜਣੁ ਸੁਆਮੀ ਮੋਰਾ॥
ਹਉ ਸੰਮਲਿ ਥਕੀ ਜੀ ਓਹੁ ਕਦੇ ਨਾ ਬੋਲੈ ਕਉਰਾ॥'' (ਅੰਗ: 784)

''मिठ बोलड़ा जी हरि सजणु सुआमी मोरा।।
हउ संमलि थकी जी ओहु कदे न बोलै कउरा।।'' (अंग : 784)

अर्थात मेरा प्रियतम, मेरा स्वामी (मेरा परमात्मा) बहुत ही मृदुभाषी है। मैं याद कर-कर के थक गई कि शायद कभी उसने कड़वे वचन बोले हों पर याद ही नहीं आया कि उसने कभी कड़वा बोल बोला हो।

अत: उसी की अंश होने के कारण हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हम जीवन में कभी भी किसी को कड़वे वचन न बोलें क्योंकि कड़वे वचन किसी के हृदय को छलनी कर देते हैं तथा वह व्यक्ति कभी भी उन कड़वे वचनों को भुला नहीं पाता।

हमें सर्वदा यह स्मरण रखना चाहिए कि परमात्मा का निवास सभी प्राणियों में हैं। अत: किसी के भी हृदय को ठेस नहीं पहुँचानी चाहिए। यदि गलती से किसी से कड़वे वचन बोले भी हों तो अपनी गलती मान कर अपनी भूलों के लिए क्षमा माँग लेनी चाहिए।

इस संबंध में बाबा फरीद जी का श्लोक श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में संकलित है जोकि इस बात को दृढ़ करवाता है कि अगर हम चाहते हैं कि हमारा मिलाप परमात्मा से हो जाए तो किसी के भी हृदय को किसी भी प्रकार से ठेस न पहुँचाई जाए। यथा :-

"ਜੇ ਤਉ ਪਿਰੀਆ ਦੀ ਸਿਕ ਹਿਆਉ ਨ ਠਾਹੇ ਕਹੀ ਦਾ॥" (ਅੰਗ: 1384)

''जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा।।'' (अंग: 1384)

दूसरी शिक्षा

''अमृत वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु।।''

इससे हमें यह शिक्षा मिलती है कि प्रभु को प्रसन्न करने के लिए उसकी 'सिफत सलाह' ही एक ऐसा साधन है जिसे सुनकर वह हम पर प्रसन्न हो सकता है और उसकी 'सिफत सलाह' का सर्वोत्तम समय है 'अमृत वेला'।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि 'अमृत वेला' किसे कहते हैं। इस बारे में विद्वानों का मत है कि सुर्योदय से 3 घंटे पूर्व के समय को ही 'अमृत वेला' कहा जाता है।

अगर हम अपने जीवन में इन तीन कर्मों को करने का नियम बना लें तो हमें 'सिफत रूपी पटोला (कपड़ा)' मिल जाता है तथा प्रभु कृपा द्वारा असत्य से छुटकारा मिल जाने के बाद प्रभु-प्राप्ति हो जाती है।

वे तीन कर्म हैं :-

प्रथम - 'अमृत वेला' (रात का आखिरी पहर जो सूर्योदय से 3 घंटे पहले आरंभ हो जाता है)

द्वितीय - 'सच्चे नाम का आसरा' (बाणी का आसरा)

तृतीय - उस परमात्मा की 'सिफत सलाह' पूर्ण विचार करके व सुरत जोड़कर करनी।

पाँचवीं पउड़ी

थापिआ न जाइ कीता ना होइ।।
आपे आपि निरंजनु सोइ।।
जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु।।
नानक गावीऐ गुणी निधानु।।
गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ।।
दुखु परहरि सुखु घरि लै जाइ।।
गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई।।
गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई।।
जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई।।
गुरा इक देहि बुझाई।।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।। ५।।

उच्चारण : जाइ—जाय। **होइ**—होय। **आपि**—आप। **निरंजनु**—निरंजन। **सोइ**—सोय। **जिनि**—जिन। **तिनि**—तिन। **पाइआ**—पाया। **मानु**—मान। **निधानु**—निधान। **मनि**—मन। **भाउ**—भाओ। **दुखु**—दुख। **परहरि**—परहर। **सुखु**—सुख। **घरि**—घर। **जाइ**—जाय। **गुरमुखि**—गुरमुख। **गुरु**—गुर। **ईसरु**—ईशर। **गोरखु**—गोरख। **हउ**—हउं। **जाणा**—जाणां। **आखा**—आखां। **नाही**—नाहीं। **कथनु**—कथन। **गुरा**—गुरा। **देहि**—देह। **जीआ**—जीआं। **विसरि**—विसर। **मै**—मैं।

पद अर्थ : थापिआ न जाइ—पैदा नहीं किया जा सकता। **कीता न होइ**—बनाया नहीं जा सकता। **निरंजनु**—माया से रहित। **गावीऐ**—कीर्ति गायन करें। **गुणी निधानु**—गुणों के खज़ाने को। **सेविआ**—सुमिरन किया। **घरि**—हृदय में। **दुख परहरि**—दुख को दूर करके। **गुरमुखि**—गुरू के द्वारा। **नादं**—शब्द, नाम। **वेदं**—ज्ञान। **ईसरु**—शिव। **बरमा**—ब्रह्मा। **हउ**—मैं। **जाणा**—समझा लूं। **आखा नाहीं**—मैं वर्णन नहीं कर सकता। **गुरा**—हे सतिगुरू! **इक बुझाई**—एक समझ।

अर्थ : वह अकाल पुरख माया के प्रभाव से दूर है क्योंकि वह निरोल स्वयं आप ही आप है, न वह पैदा किया जा सकता है और न ही हमारे बनाने से बन सकता है और न ही वह मूर्ति की भांति स्थापित किया जा सकता है। जिस मनुष्य ने उस अकाल पुरख का सुमिरन किया है, उसने आदर प्राप्त किया है। हे नानक! आओ, हम भी उस गुणों के खज़ाने प्रभु की स्तुति गायन करें। आओ, अकाल पुरख के गुण गायन करें और सुनें तथा अपने मन में उसका प्रेम टिकावें। जो मनुष्य ऐसा करता है वह अपना दु:ख दूर करके आत्मिक सुख को हृदय में बसा लेता है। ईश्वर का नाम तथा ज्ञान, गुरू द्वारा ही प्राप्त होता है। गुरू के द्वारा ही यह प्रतीत होती है कि वह प्रभु सर्वव्यापक है। गुरू ही हमारे लिए शिव है, गुरू ही हमारे लिए गोरख तथा ब्रह्मा है और गुरू ही हमारे लिए पार्वती है भाव हमने गोरख, ब्रह्मा तथा पार्वती की पूजा नहीं करनी है, बल्कि गुरू ही हमारे लिए सब कुछ है। यदि मैं अकाल पुरख के हुक्म को समझ भी लूँ तो भी मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता। अकाल पुरख के हुक्म का वर्णन नहीं किया जा सकता। मेरी तो है सतिगुरू! तेरे सम्मुख यही अरदास (विनती) है कि मुझे यह समझ प्रदान करें कि सभी जीवों को दात देने वाला प्रभु मुझे कभी भी भूल न जाये।

पाँचवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''थापिआ न जाइ कीता ना होइ।। आपे आपि निरंजनु सोइ।।''

कई धर्मों में परमात्मा की मूर्ति बना कर उसकी स्थापना की जाती है पर सिख धर्म के अनुसार परमात्मा की सृजनता स्वयं उसके अपने आप से ही हुई है। अर्थात उसने स्वयं ही अपना सृजन किया है। न तो वह पैदा हुआ है न ही उसकी स्थापना की गई है। इसलिए उसकी मूर्ति बनाना व उसकी मूर्ति की स्थापना का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

गुरुदेव पिता समझाते हैं कि :-

''ਆਪੀਨੈ੍ ਆਪੁ ਸਾਜਿਓ ਆਪੀਨੈ੍ ਰਚਿਓ ਨਾਉ॥
ਦੁਯੀ ਕੁਦਰਤਿ ਸਾਜੀਐ ਕਰਿ ਆਸਣੁ ਡਿਠੋ ਚਾਉ॥'' (ਅੰਗਃ 463)

''आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ।।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।।''

(अंगः 463)

अर्थात उसने स्वयं ही अपना सृजन किया है तथा अपने आप को स्वयं ही नाम दिया है। इस सृष्टि का निर्माण भी उसी ने किया है तथा उसमें विराजमान हो कर वह आनंदित है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमें मूर्तिपूजा व बुतप्रस्ती नहीं करनी बल्कि उस एक अकाल पुरखु की ही पूजा करनी है।

दूसरी शिक्षा

''जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु।। नानक गावीऐ गुणी निधानु।।
गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ।। दुखु परहरि सुखु घरि लै जाइ।।''

जिन्होंने अकाल पुरखु का सिमरन किया, आराधना की, ध्यान व सेवा की, उन को इस लोक के साथ परलोक में भी सम्मान मिलता है। गुरु नानक देव जी

ने हमें उपदेश दिया है कि यदि हम अपने दु:खों से निवृत्ति (छुटकारा) चाहते हैं तो हमें परमेश्वर के गुण गाने चाहिएं व उसकी सिफत सलाह करनी चाहिए और यह सब प्रेममय व भावपूर्व हृदय से करना चाहिए। यदि हम उसका नाम तो जपते हैं, 'सिफति सलाह' भी करते हैं पर हमारे हृदय में उसके लिए प्रेम नहीं है तो हम आत्मिक सुख जो कि स्थिर है, उससे वंचित रह जाएँगे।

तीसरी शिक्षा

''गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई।।
गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई।।''

जिस समय गुरु नानक देव जी का प्रकाश हुआ उस समय लोग शिव, गोरख, ब्रह्मा व पार्वती आदि की पूजा करते थे और कई आज भी पूजा कर रहे हैं। गुरु नानक देव जी ने हमें यह सिद्धांत दिया है कि गुरू के सिख के लिए गुरु ही सब कुछ है। गुरु द्वारा प्राप्त हुआ गुरु का नाम (नाद), गुरु का ज्ञान (वेद) ही सब कुछ है। अत: सिख ने गुरुबाणी को छोड़कर किसी अन्य की पूजा नहीं करनी।

चौथी शिक्षा

''जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई।।
गुरा इक देहि बुझाई।।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।।''

गुरु नानक देव जी ने यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है कि यदि मैं अकाल पुरखु के हुक्म को समझ भी लूँ तो भी मैं उसका संपूर्ण वर्णन नहीं कर सकता। यदि गुरु नानक देव जी यह कह रहे हैं कि मैं उस अकाल पुरखु के हुक्म का वर्णन करने में असमर्थ हूँ तो हमारी क्या ताकत है कि हम उसके बारे में कुछ कह सकें।

हमने तो सिर्फ यह विनती ही करनी है कि परमात्मा हमें अपनी बंदगी का उद्यम व शक्ति दे क्योंकि सभी सुख उसकी बंदगी में हैं। हमें उस असीम शक्ति का भेद जानने की कोशिश नहीं करनी। इसके साथ ही हमें परमात्मा के

आगे यह भी अरदास करनी है कि आप सभी प्राणियों को सभी सुख देने वाले हो और मुझ पर कृपा करो कि सदा मेरे हृदय में वास करो व सदा अरदास करते रहना है कि:-

''ਸਭਨਾ ਜੀਆ ਕਾ ਇਕੁ ਦਾਤਾ ਸੋ ਮੈ ਵਿਸਰਿ ਨ ਜਾਈ॥''
''सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।।''

छठी पउड़ी

तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी।।
जेती सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई।।
मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी।।
गुरा इक देहि बुझाई।।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।। ६ ।।

उच्चारण : तीरथि—तीरथ। **तिसु**—तिस। **विणु**—विण। **नाइ**—नाय। **सिरठि**—सिरठ। **नावा**—नावां। **भावा**—भावां। **करी**—करीं। **वेखा**—वेखां। **मति**—मत। **विचि**—विच। **देहि**—देह। **इकु**—इक। **विसरि**—विसर। **जीआ**—जीआं।.

पद अर्थ : तीरथि—तीर्थों पर। **नावा**—मैं स्नान करूं। **विणु भाणे**—ईश्वर को अच्छा लगने के बिना। **कि नाइ करी**—नहा कर मैं क्या करूं। **सिरठि**—सृष्टि। **उपाई**—पैदा की हुई। **विणु करमा**—प्रभु की कृपा के बिना। **कि मिलै**—क्या मिलता है ? **कि लई**—क्या कोई ले सकता है। **मति विचि**—मनुष्य की बुद्धि के अंदर ही। **माणिक**—मोती। **इक सिख**—एक शिक्षा।

अर्थ : मैं तीर्थों पर जा कर तब स्नान करूं यदि ऐसा करने से उस परमात्मा को खुश कर सकूं। परन्तु यदि इस प्रकार परमात्मा खुश नहीं होता तो मैंने तीर्थ पर स्नान करके क्या करना है ? अकाल पुरुख की पैदा की हुई जितनी भी दुनियां मैं देखता हूं, उस में परमात्मा की कृपा के बिना किसी को कुछ नहीं मिलता, कोई कुछ नहीं ले सकता। यदि सतिगुरू की एक शिक्षा सुन ली जाये तो मनुष्य की बुद्धि में परमात्मा के अमूल्य गुण रूपी रत्न जवाहर तथा मोती भाव शुभ गुण पैदा हो जाते हैं तब तो हे सतिगुरू! मेरी अरदास (विनती) है कि मुझे एक समझ प्रदान कर जिसके द्वारा मुझे सारे जीवों को 'दातें' (वस्तुएं) देने वाला एक अकाल पुरखु कभी भी भूल न जाये।

छठी पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी।।''

जब श्री गुरु नानक देव जी का प्रकाश हुआ तो लोग कर्मकाण्ड के प्रभाव में थे। उन सभी कर्मकाण्डों में एक कर्मकाण्ड यह भी प्रचलित था कि तीर्थस्थलों पर स्नान करने से हमारे पाप धुल जाते हैं।

श्री गुरु नानक देव जी ने इस मान्यता का खण्डन करते हुए इस पउड़ी में हमें यह शिक्षा दी है कि मन की मैल केवल तीर्थस्थल पर स्नान करके नहीं धोई जा सकती। इस संबंध में गुरुबाणी का फ़रमान है कि :-

''ਮਨਿ ਮੈਲੈ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਮੈਲਾ ਤਨਿ ਧੋਤੈ ਮਨੁ ਹਛਾ ਨ ਹੋਇ॥'' (ਅੰਗ: 558)
''मनि मैलै सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ।।''
(अंग: 558)

दूसरी शिक्षा

''मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी।।''

कोई भी कार्य प्रारंभ करने से पहले यदि हम अपने मन से प्रश्न करें कि क्या यह कार्य गुरु की सोच के अनुसार है कि नहीं तो यह करने मात्र से ही हमारी मति एवं बुद्धि में परमात्मा के अमूल्य गुण रूपी रत्न-जवाहरात व मोती प्रगट हो जाते हैं।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि कोई भी कार्य गुरु जी की आज्ञा के विपरीत नहीं करना तथा गुरु जी की सोच या कहे अनुसार ही हमारे कर्म होने चाहिएँ।

तीसरी शिक्षा

''गुरा इक देहि बुझाई।।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई।।''

जैसे कि पाँचवी पउड़ी में श्री गुरु नानक देव जी ने अरदास की है वैसे ही छठी पउड़ी में भी वही अरदास की है कि हे सतगुरु जी! मुझ पर कृपा करो कि वह परमात्मा जो सभी प्राणियों को सुख देने वाला है, उसका वास सदा मेरे हृदय में रहे और 'वो' मुझे कभी न विसरे (भूले)।

इससे यह शिक्षा लेनी है कि वह परमात्मा मुझे कभी न भूले तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को नतमस्तक होते हुए भी यह प्रार्थना करनी है कि :-

''ਨਾਮੁ ਨ ਵਿਸਰਉ ਇਕੁ ਖਿਨੁ ਚਸਾ ਇਹੁ ਕੀਜੈ ਦਾਨਾ॥'' (ਅੰਗः 396)
''नामु न विसरउ इकु खिनु चसा इहु कीजै दाना।।''
(अंगः 396)

सातवीं पउड़ी

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ।।
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ।।
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ।।
जे तिसु नदरि न आवई ता वात न पुछै के।।
कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे।।
नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे।।
तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे।। ७।।

उच्चारण : **होइ**—होय। **विचि**—विच। **नालि**—नाल। **सभु**—सभ। **नवा**—नवां। **खंडा**—खंडां। **रखाइ**—रखाय। **जसु**—जस। **कीरति**—कीरत। **जगि**—जग। **लेइ**—ले। **तिसु**—तिस। **नदरि**—नदर। **अंदरि**—अंदर। **कीटु**—कीट। **करि**—कर। **दोसी**—दोषी। **दोसु**—दोष। **नाउ**—नाउं। **कीटा**—कीटां। **निरगुणि**—निर्गुण। **गुणु**—गुण। **कोइ**—कोय। **तिसु**—तिस। **गुणवंतिआ**—गुणवंतिआं।

पद अर्थ : आरजा—उम्र। **दसूणी**—दस गुणा। **नवा खंडा विचि**—भाव सारी सृष्टि में। **जाणीऐ**—प्रकट हो जाये। **चंगा नाउ**—अच्छा नाम। **कीटु**—कीड़ा। **करि दोसी**—दोषी ठहरा कर। **निरगुणि**—गुणहीण मनुष्य में। **गुणवंतिआ**—गुणी व्यक्तियों को। **न सुझई**—नहीं मिलता।

अर्थ : यदि मनुष्य की आयु तथाकथित चार युगों जितनी भी हो जाये, केवल इतनी ही नहीं बल्कि यदि इससे भी दस गुणा अधिक हो जाए, यदि वह सारे संसार में भी प्रकट हो जाये और हरेक मनुष्य उसके आगे पीछे लगकर चले। यदि वह अच्छा काम कमाकर सारे संसार की शोभा भी प्राप्त कर ले पर यदि वह अकाल पुरख की कृपा दृष्टि में नहीं आता। तो वह उस व्यक्ति जैसा है जिसकी कोई खबर भी नहीं पूछता। भाव वह इतना सम्मान वाला होते हुए भी वास्तव में बिना आसरे के ही है। बल्कि ऐसा मनुष्य अकाल पुरख के सामने एक मामूली-सा कीड़ा है। ऐसे मनुष्य को अकाल पुरख दोषी बना कर,

उस पर नाम को भूलने का दोष लगाते हैं। हे नानक! वह अकाल पुरख गुणहीन मनुष्य में गुण पैदा कर देता है और गुणी व्यक्तियों को भी वही गुण प्रदान करता है। ऐसा कोई नहीं दिखलाई देता जो निर्गुण जीव को गुण दे सकता हो।

सातवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ।।
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ।।
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ।।
जे तिसु नदरि न आवई ता वात न पुछै के।।''

इस जगत में जन्म लेने वाले हर मनुष्य में ये तीन इच्छाएँ प्रबल हैं :-

प्रथम इच्छा - मैं दीर्घायु हो जाऊँ।

दूसरी इच्छा - दीर्घायु होने के साथ-साथ मेरा व्यक्तित्व इतना ऊँचा हो जाए या इतना बड़ा इन्सान बन जाऊँ कि सारा जगत मुझे पहचाने।

तीसरी इच्छा - दीर्घायु व पहचान के साथ-साथ मनुष्य की तीसरी प्रबल इच्छा होती है कि संसार में जहाँ हर जगह मेरा सम्मान हो वहाँ सर्वत्र मेरी प्रशंसा भी हो।

पर सतगुरु जी का कथन है कि हे मनुष्य! अगर तेरी आयु चार युगों जितनी हो जाए और उससे भी दस गुना ज्यादा हो जाए और तू नौ खण्डों में भी जाना जाए, सभी खण्डों-ब्रह्मडों (लोक-परलोकों) में लोग तेरी प्रशंसा करें पर यदि तूने अकाल पुरखु की भक्ति नहीं की एवं अच्छे कर्म नहीं किए तो उसकी नज़रों में तेरी कीमत कौड़ी-मात्र भी नहीं है, परमात्मा के घर में तुझे किसी ने भी नहीं पूछना, दुनियां में इतना मान-सम्मान होने के बाद भी तू बेआसरा ही रहेगा।

यही नहीं इस पउड़ी में गुरु जी ने हमें डांटते हुए यह भी कहा है कि भक्तिहीन प्राणी को प्रभु की दरगाह में एक मामूली कीड़े की भान्ति ही फेंक दिया जाएगा तथा उसको प्रभु-सिमरन न करने का दोषी माना जाएगा।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि दुनिया में प्राप्त मान-सम्मान की कीमत परमात्मा के घर में कुछ भी नहीं है। वहाँ उन्हीं प्राणियों की कीमत पड़ेगी जो गुरु वाले बन कर गुरु के बताए मार्ग पर चलेंगे ना कि दुनिया की वाह-वाह लूटने के लिए अपना जीवन व्यर्थ कर देंगे। अत: हमारे जीवन का यही लक्ष्य होना चाहिए कि हम अकाल पुरखु के दर पर कबूल हो जाएं। उसकी दरगाह पर वही कबूल होंगे जो नाम जपेंगे व निर्मल कर्म करेंगे।

इस संबंध में गुरुबाणी का फ़रमान है :-

"ਸਰਬ ਧਰਮ ਮਹਿ ਸ੍ਰੇਸਟ ਧਰਮੁ ॥ ਹਰਿ ਕੋ ਨਾਮੁ ਜਪਿ ਨਿਰਮਲ ਕਰਮੁ ॥"

(ਅੰਗ: 266)

"सरब धरम महि स्रेसट धरमु ।। हरि को नामु जपि निरमल करमु ।।"

(अंग: 266)

दूसरी शिक्षा

"नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे ।।
तेहा कोई न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे ।।"

कहावत है कि सुबह का भूला अगर शाम को घर आ जाए तो वह भूला नहीं कहलवाता। इसी प्रकार इस पउड़ी की आखिरी पंक्तियों में गुरुदेव पिता हमें यह शिक्षा देते हैं कि अगर अब भी हमारी आँखे खुल गई हैं तो हम उसकी शरण में जाकर, गुरु वाले बन कर, उससे उसके नाम की याचना, उसकी भक्ति का दान माँगें क्योंकि वह अकाल पुरखु गुणहीन मनुष्यों में गुण उत्पन्न करता है, गुणी मनुष्यों को भी वो ही गुणों का दान देता है। इस कायनात में अकाल पुरखु जैसा कोई नहीं जो निर्गुण जीवों को गुण दे सकता हो।

आठवीं पउड़ी

सुणिअै सिध पीर सुरि नाथ।। सुणिअै धरति धवल आकास।।
सुणिअै दीप लोअ पाताल।। सुणिअै पोहि न सकै कालु।।
नानक भगता सदा विगासु।। सुणिअै दूख पाप का नासु।। ८।।

उच्चारण : सुणिअै—सुणयैं। **सुरि**—सुर। **धरति**—धरत। **पोहि**—पोह। **कालु**—काल। **विगासु**—विगास। **नासु**—नास। **भगता**—भगतां।

पद अर्थ : सुणिअै—अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने से (नाम सुनने से)। **धवल**—धरती का आश्रय। **सुरि**—देवता। **लोअ**—लोअ, भवण। **पोहि न सकै**—डरा नहीं सकता। **विगासु**—खिड़ाव।

अर्थ : हे नानक! अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप साधारण मनुष्य सिद्धों, पीरों, देवताओं व नाथों की पदवी प्राप्त कर लेते हैं और उनको यह ज्ञान प्राप्त हो जा जाता है कि धरती आकाश का आसरा वह प्रभु स्वयं है जो सारे दीपों, लोक, भवन पातालों में व्यापक है। अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप मनुष्य को मृत्यु का भय भी नहीं लग सकता, भाव मृत्यु का डर मनुष्य के मन पर प्रभाव नहीं डाल सकता। ८।

नोट : आठवीं पउड़ी से ग्यारवीं पउड़ी की संयुक्त (combined) शिक्षा पृष्ठ नं. 44 पर दी गई है।

नौवीं पउड़ी

सुणिअै ईसरु बरमा इंदु।। सुणिअै मुखि सालाहण मंदु।।
सुणिअै जोग जुगति तनि भेद।। सुणिअै सासत सिम्रिति वेद।।
नानक भगता सदा विगासु।। सुणिअै दूख पाप का नासु।। ९।।

उच्चारण : ईसरु—ईशर। **इंदु**—इंद। **मुखि**—मुख। **मंदु**—मंद। **विगासु**—विगास। **नासु**—नास। **जुगति**—जुगत। **तनि**—तन। **सिम्रिति**—सिम्रत।

पद अर्थ : ईसरु—शिव। **इंदु**—इन्द्र देवता। **सालाहण**—स्तुति गायन। **मंदु**—बुरा मनुष्य। **जोग जुगति**—योग के साधन।

अर्थ : अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप साधारण मनुष्य शिव, ब्रह्मा तथा इन्द्र की पदवी पर पहुँच जाया करता है। बुरा मनुष्य भी मुंह से ईश्वर की स्तुति करने लग जाता है। साधारण बुद्धि वाले को भी शरीर की गूढ़ बातों, अर्थात आंख, कान, जीभ, नाक आदि इन्द्रियों की चालों तथा विकास आदि की ओर भाग दौड़ के भेद का पता चल जाता है। अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप प्रभु मिलन की युक्ति की समझ पड़ जाती है। शास्त्रों, स्मृतियों तथा वेदों की वास्तविकता समझ आ जाती है कि धार्मिक पुस्तकें क्या हैं ?

हे नानक! अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने वाले भक्तजनों के हृदय में सदा खिड़ाव बना रहता है, क्योंकि ईश्वर की स्तुति गायन सुनने से मनुष्य के दु:खों व पापों का नाश हो जाता है।। ९।।

दसवीं पउड़ी

सुणिअै सतु संतोखु गिआनु।। सुणिअै अठसठि का इसनानु।।
सुणिअै पड़ि पड़ि पावहि मानु।। सुणिअै लागै सहजि धिआनु।।
नानक भगता सदा विगासु।। सुणिअै दूख पाप का नासु।। १०।।

उच्चारण : सतु—सत। **संतोखु**—संतोख। **गिआनु**—ज्ञान। **अठसठि**—अठसठ। **इसनानु**—इशनान। **पड़ि**—पढ़। **मानु**—मान। **सहजि**—सहज। **धिआनु**—ध्यान। **विगासु**—विगास। **नासु**—नास।

पद अर्थ : अठसठि—अठाहट (अठसठ) तीर्थ। **धिआनु**—ध्यान, वृति। **सतु संतोखु**—दान तथा संतोष।

अर्थ : प्रभु के नाम में सुरति जोड़ने से हृदय में ज़रूरतमंदों की सेवा करने का स्वभाव, संतोष तथा प्रकाश प्रकट हो जाता है। मानो अठसठ (अठाहट) तीर्थों का स्नान ही हो जाता है। भाव नाम का जाप करने वाले को अठसठ तीर्थों के स्नान की आवश्यकता नहीं है। जो सम्मान, मनुष्य विद्या पढ़ कर प्राप्त करते हैं, वह भक्तजनों को अकाल पुरख के नाम से जुड़कर सहज ही मिल जाता है। नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप सहज अवस्था, भाव अडोलता में मन की वृत्ति टिक जाती है। हे नानक! अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने वाले भक्तजनों के हृदय में सदा खिड़ाव बना रहता है क्योंकि अकाल पुरख की स्तुति सुनने से मनुष्य के दु:खों तथा पापों का नाश हो जाता है। १०।।

ग्यारहवीं पउड़ी

सुणिअै सरा गुणा के गाह।। सुणिअै सेख पीर पातिसाह।।
सुणिअै अंधे पावहि राहु।। सुणिअै हाथ होवै असगाहु।।
नानक भगता सदा विगासु।। सुणिअै दूख पाप का नासु।। ११।।

उच्चारण : सेख—शेख। **पातिसाह**—पातशाह। **पावहि**—पांवहिं। **राहु**—राह। **असगाहु**—असगाह। **सरा**—सरां।

पद अर्थ : सरा गुणा के—गुणों के सरोवर के, भाव अनंत गुणों के। **गाह**—सूझ वाले। **असगाहु**—गहरा संसार समुद्र। **हाथ होवै**—गहराई का पता चल जाता है।

अर्थ : प्रभु के नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप मनुष्य अनंत गुणों की सूझ वाले हो जाते हैं। नाम में सुरति जोड़ने के फलस्वरूप साधारण मनुष्य शेख, पीर तथा पातशाह का पद प्राप्त कर लेते हैं। यह नाम सुनने की ही बरकत है कि अंधे-ज्ञानहीन मनुष्य भी अकाल पुरख को मिलने की राह ढूँढ लेते हैं। अकाल पुरख के नाम के साथ जुड़ने के फलस्वरूप इस गहरे समुद्र की वास्तविकता समझ में आ जाती है।

हे नानक! अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ने वाले भक्तजनों के हृदय में सदा खिड़ाव बना रहता है क्योंकि अकाल पुरख की स्तुति सुनने से मनुष्य के दु:खों तथा पापों का नाश हो जाता है। ११।।

पाठ का उच्चारण : (1) अकाश, नाश, ईश्वर, शास्त, शेख, पातशाह आदि पंजाबी वाले 'स' शब्द के पैर में बिन्दी लगा कर 'श' से उच्चारित करने हैं।

(2) 'राहु' और 'असगाहु' का शुद्ध उच्चारण 'राह' और 'असगाह' है। इन शब्दों को 'राहो' और 'असगाहो' पढ़ना अशुद्ध पाठ करना है। छोटे उ की मात्रा, एक वचन पुलिंग संज्ञा की सूचक है जिसका उच्चारण से कोई संबंध नहीं।

सुणिअै वाली पउड़ीयों की शिक्षा

इन पउड़ीयों का समूचा भाव यह है कि अगर हम बाणी को अच्छी तरह सुनें तो हम अपने जीवन में बहुत ऊँची अवस्थाओं तक पहुँच सकते हैं और बाणी के सुनने मात्र से ही जीव सिद्धों, पीरों व देवताओं वाली अवस्था तक पहुँच जाता है आदि-आदि.....

सुनिअै की चारों पउड़ीयों में निम्नलिखित पंक्ति चार बार आई है:-

''ਨਾਨਕ ਭਗਤਾ ਸਦਾ ਵਿਗਾਸੁ॥ ਸੁਣਿਐ ਦੁਖ ਪਾਪ ਕਾ ਨਾਸੁ॥''

''नानक भगता सदा विगासु।। सुणिअै दूख पाप का नासु।।''

इन पंक्तियों का साधारण शब्दों में अर्थ यह है कि अकाल पुरखु के नाम में जो भक्त-जन अपनी सुरत जोड़ लेते हैं उनके हृदय सदा आनंदमय रहते हैं क्योंकि परमात्मा की सिफत-सालाह सुनने से मनुष्य के दुखों व पापों का नाश हो जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि हम इतने वर्षों से पाठ कर रहे हैं तभ भी हम दुखी रहते हैं, हमारा हृदय आनंदित नहीं होता और हमारे दुखों व पापों का नाश क्यों नहीं होता ?

इसका मुख्य कारण यह है कि हम अपने मुख से पाठ तो कर रहे हैं पर अपने मन से इसे सुन नहीं रहे हैं। हम विचारहीन होकर तोते की तरह पाठ को करते हैं। इस संबंध में आपके साथ एक कहानी सांझी कर रहा हूँ—

एक बार एक शिकारी जंगल में तोतों को जाल में डाल कर ले जा रहा था। एक गुरुमुख ने जाल में फँसे उन तोतों को देखा। उनके मन में आया कि यह शिकारी इन तोतों को पिंजरे में डालकर कैद कर लेगा तथा अलग-अलग करके बेच देगा और इनकी आज़ादी छिन जाएगी। क्यों न मैं इन सारे तोतों को खरीद कर इस शिकारी से आज़ाद करवा दूँ।

वह गुरमुख शिकारी से उन सारे तोतों को खरीद लेते हैं। तोतों को घर लाकर वह रोज़ उन्हें दाना डालते हैं। वह रोज़ उनको एक शिक्षा याद करवाते हैं कि ''शिकारी आएगा, जाल बिछाएगा, दाना डालेगा पर दाना नहीं चुगना नहीं तो फँस जाएँगे।''

यह शिक्षा याद करवाते-करवाते एक-दो महीने बीत जाते हैं। तोतों को भी यह अच्छी तरह याद हो जाता है कि ''शिकारी आएगा, जाल विछाएगा, दाना डालेगा पर हमने फँसना नहीं।'' गुरुमुख सज्जन ने सोचा कि यह पाठ तोतों को अच्छी तरह से याद हो गया है। अब यह आज़ादी से जंगल में रह सकते हैं। अब यह किसी भी शिकारी के जाल में नहीं फँसेंगे।

वह गुरमुख उन सभी तोतों को जंगल में छोड़ आते हैं। वे तोते भी उनका सिखाया पाठ रटते रहते थे। एक बार एक शिकारी वहाँ आता है तो उन तोतों के द्वारा वही पाठ बोलते हुए उन्हें सुनता है और सोचता है कि ये तोते तो जाल में अब नहीं फँसेंगे। पर वह जाल बिछा कर जैसे ही दाना डालता है सारे तोते उसी पाठ को रटते-रटते फिर से दाना चुगने के लिए वहाँ आ जाते हैं और जाल में फँस जाते हैँ।

हमारी भी हालत इन तोतों जैसी है। प्रथम तो पाठ करते हुए हम ध्यान से बाणी को सुनते ही नहीं है और यदि सुनते हैं तो न तो बाणी को समझते हैं और ना ही विचार करते हैं और न ही इसे समझ व विचार कर अपने जीवन में अपनाते हैं।

दुखों व पापों का नाश उसी दिन से प्रारंभ हो जाएगा जिस दिन से हम बाणी की शिक्षाओं को सुरत जोड़ कर सुनना, समझना व विचार करके अपने जीवन में उतारना शुरु कर देंगे। हम पाठ तो करते हैं पर हमारा मन वहाँ उपस्थित ही नहीं रहता। वह तो अन्य दिशाओं में भटकता ही रहता है। इस संदर्भ में हमें गुरु नानक देव जी की नमाज पढ़ने वाली साखी सदैव याद रखनी चाहिए जो कि पृष्ठ 185 पर अंकित है। इससे हमें यही शिक्षा मिलती है कि यदि पाठ करते हुए हमारा मन न जुड़े, मन की अनुपस्थिति हो तो हमें पूर्णतः लाभ नहीं मिलता।

अब प्रश्न यह उठता है कि वह कौन-सा उपाय है कि हमारा मन पढ़े हुए पाठ को सुनना आरंभ कर दे।

इस संबंध में गुरुमुख प्यारे 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा खन्ने वालों द्वारा बताई हुई विधि को यदि हम अपना लें तो हमारे मन को बाणी पढ़ने व सुनने का ढंग आ जाएगा। उनके अनुसार पाठ करते हुए मन से प्रश्न करना है कि ''क्या तूने बाणी को सुना है।'' अगर मन ने बाणी की उस पंक्ति को नहीं सुना तो हमें चाहिए कि हम बार-बार उस पंक्ति को तब तक

पढ़ते रहें जब तक हमारा मन उस पंक्ति को नहीं सुनता। अगली पंक्ति तभी पढ़ें जब हमारा मन पिछली पंक्ति को सुन कर, समझ कर, विचार कर ले। गुरुदेव पिता जी की असीम कृपा से अगर इस बात का अभ्यास बार-बार करें तो मन को सुनने की आदत पड़ जाएगी।

हम सदैव याद रखें कि :

बाणी क्यों पढ़नी है ..... सुनने के लिए।
बाणी क्यों सुननी है ..... समझने के लिए।
बाणी क्यों समझनी है ..... विचारने के लिए।
बाणी क्यों विचारनी है ..... कमाने के लिए।

बारहवीं पउड़ी

मंने की गति कही न जाइ।। जे को कहै पिछै पछुताइ।।
कागदि कलम न लिखणहारु।। मंने का बहि करनि वीचारु।।
ऐसा नामु निरंजनु होइ।। जे को मंनि जाणै मनि कोइ।। १२।।

उच्चारण : गति—गत। **जाइ**—जाय। **पछुताइ**—पछताय। **कागदि**—कागद। **लिखणहारु**—लिखणहार। **बहि**—बह। **करनि**—करन। **वीचारु**—वीचार। **नामु**—नाम। **होइ**—होय। **कोइ**—कोय। **मंनि**—मन। **निरंजनु**—निरंजन।

पद अर्थ : मंने की—मानने वाले की। **गति**—अवस्था।

अर्थ : उस मनुष्य की उच्च आत्मिक अवस्था का वर्णन नहीं किया जा सकता जिसने अकाल पुरख के नाम को मान लिया है, भाव जिसकी लग्न नाम में लगी हुई है। यदि कोई मनुष्य उसका वर्णन करे भी तो वह बाद में पछताता है कि मैंने तुच्छ यत्न किया है। मनुष्य मिल कर, नाम में विलीन हुए की, आत्मिक अवस्था का अंदाज़ा लगाते हैं, परन्तु कागज़ पर कलम से कोई मनुष्य लिखने में समर्थ नहीं है। अकाल पुरख का नाम बहुत ऊँचा है और माया के प्रभाव से परे है, इसमें जुड़ने वाला भी उच्च आत्मिक अवस्था वाला हो जाता है, पर यह बात तब ही समझ में आ सकती है यदि कोई मनुष्य अपने अंदर से नाम को मान कर देखे।

नोट : बारहवीं पउड़ी से पन्द्रहवीं पउड़ी की संयुक्त (combined) शिक्षा पृष्ठ नं. 52 पर दी गई है।

तेरहवीं पउड़ी

मंनै सुरति होवै मनि बुधि।। मंनै सगल भवण की सुधि।।
मंनै मुहि चोटा ना खाइ।। मंनै जम कै साथि न जाइ।।
अैसा नामु निरंजनु होइ।। जे को मंनि जाणै मनि कोइ।। १३।।

उच्चारण : सुरति—सुरत। **मनि**—मन। **बुधि**—बुध। **सुधि**—सुध। **मुहि**—मुंह। **खाइ**—खाय। **साथि**—साथ। **जाइ**—जाय। **नामु**—नाम। **निरंजनु**—निरंजन। **चोटा**—चोटां।

पद अर्थ : मंनै—मानने से। **बुधि**—जागृत। **मुहि**—मुंह पर।

अर्थ : यदि मनुष्य के मन में प्रभु के नाम की लग्न लग जाये तो उसकी सुरति ऊँची हो जाती है, उसके मन में जागृति आ जाती है, भाव माया में सोया हुआ मन जाग पड़ता है, सारे भवनों का उसको ज्ञान हो जाता है कि हर स्थान पर प्रभु व्यापक है। वह मनुष्य संसार के विकारों की चोटें मुंह पर नहीं खाता, भाव सांसारिक विकार उस पर दबाव नहीं डाल सकते और यमों से उसका वास्ता नहीं पड़ता। भाव वह जन्म-मरण के भंवर में से बच जाता है। अकाल पुरख का नाम, जो माया के प्रभाव से परे है, इतना ऊँचा है कि इसमें जुड़ने वाला भी ऊँची आत्मिक अवस्था वाला हो जाता है, पर यह बात तब ही समझ में आती है, यदि कोई मनुष्य अपने मन में हरिनाम की लग्न पैदा कर ले। १३।

चौदहवीं पउड़ी

मंनै मारगि ठाक न पाइ।। मंनै पति सिउ परगटु जाइ।।
मंनै मगु न चलै पंथु।। मंनै धरम सेती सनबंधु।।
अैसा नामु निरंजनु होइ।। जे को मंनि जाणै मनि कोइ।। १४।।

उच्चारण : मारगि—मार्ग। **पाइ**—पाय। **पति**—पत। **परगटु**—परगट। **मगु**—मग। **पंथु**—पंथ। **सनबंध**—सनबंध। **नामु**—नाम। **निरंजनु**—निरंजन। **मनि**—मन। **सिउ**—सिउं।

पद अर्थ : ठाक—रोक। **पति**—इज्जत। **परगटु**—प्रसिद्ध होकर।

अर्थ : यदि मनुष्य का मन, नाम में विलीन हो जाये तो ज़िंदगी के सफ़र में विकारों आदि की कोई रोक पैदा नहीं होती। वह संसार में शोभा कमा कर इज्ज़त से जाता है, वह फिर दुनियां के अलग-अलग मतों द्वारा बताए गए कर्मकाण्डों वाले रास्तों पर नहीं चलता, भाव कर्मकाण्डों के चक्करों में नहीं फँसता। अकाल पुरख का नाम, जो माया के प्रभाव से परे है, इतना ऊँचा है कि इसमें जुड़ने वाला भी उच्च आत्मिक अवस्था वाला हो जाता है पर यह बात तभी ही समझ में आती है, यदि कोई मनुष्य अपने मन में हरि नाम की लग्न पैदा कर ले। १४।

पन्द्रहवीं पउड़ी

मंनै पावहि मोखु दुआरु।। मंनै परवारै साधारु।।
मंनै तरै तारे गुरु सिख।। मंनै नानक भवहि न भिख।।
ऐसा नामु निरंजनु होइ।। जे को मंनि जाणै मनि कोइ।।१५।।

उच्चारण : मोखु—मोख। **दुआरु**—दुआर। **साधारु**—साधार। **गुरु**—गुर। **निरंजनु**—निरंजन। **मंनि**—मन। **पावहि**—पावहिं। **भवहि**—भवहिं।

पद अर्थ : मोखु दुआरु—मुक्ति, भाव झूठ असत्य से निजात पाने की राह। **साधारु—**अकाल पुरख का आश्रय दृढ़ करवाता है। **भिख**—भिक्षा।

अर्थ : यदि मन में प्रभु के नाम की लग्न लग जाए तो मनुष्य असत्य से निज़ात पाने की राह ढूंढ लेता है। ऐसा व्यक्ति अपने परिवार को भी अकाल पुरख की टेक दृढ़ करवाता है। नाम में मन विलीन होने के कारण ही, सतिगुरू भी स्वयं संसार सागर से पार निकल जाता है और सिखों को पार लगाता है। नाम से जुड़ने के कारण हे नानक! मनुष्य दर-दर पर भटकता नहीं रहता। अकाल पुरख का नाम, जो माया के प्रभाव से परे है, इतना ऊँचा है कि इसमें जुड़ने वाला भी उच्च जीवन वाला हो जाता है, पर यह बात तभी ही समझ में आती है, यदि कोई मनुष्य अपने मन में हरिनाम की लग्न पैदा करे।

नोट : पउड़ी नं. १२ में दो स्थानों पर शब्द 'मंने' है। पउड़ी नं. १३ से पउड़ी नं. १५ में 'मंनै' शब्द आया है। दोनों के अर्थों में अंतर है। 'मंने' का भाव है, माने हुए मनुष्य की अवस्था अर्थात जिसने गुरु की शिक्षा को मान लिया जबकि 'मंनै' का अर्थ है। मान लेने से, यदि मान लिया जाये (गुरु की शिक्षा को)

पाठ का उच्चारण : (1) 'मंने' और 'मंनै' का उच्चारण छोटी ए (े) की मात्रा का तथा बड़ी ऐ (ै) की मात्रा का ध्यान रखकर करना है।

(2) ''मंनै का बहि करनि वीचारु'', पंक्ति में मंनै (काबहि) जोड़ कर पाठ करना अशुद्ध है।

(3) मुहि चोटा का उच्चारण मुंह चोटां करना है। इसको मोह चाटा पढ़ना अशुद्ध है।

(4) ''जे को मंनि जाणै मनि कोइ'' पंक्ति में मंनि तथा मनि के उच्चारण का अन्तर रखकर पाठ करना है। मंनि का उच्चारण मंन और मनि का उच्चारण बिंदी-रहित मन करना है।

'मन्ने' वाली पउड़ीयों की शिक्षा

'मन्ने' का अर्थ है: वह मनुष्य जिसने गुरु की शिक्षा को मान लिया है।

'मन्नै' का अर्थ है: अगर हम गुरु की शिक्षा को मान लें।

'मन्ने' की कुल चार पउड़ीयां हैं। 'मन्ने' की पहली पउड़ी में उन गुरसिखों की अवस्था का वर्णन है जिन्होंने गुरु की शिक्षा को मान कर अपने जीवन को उसी अनुरूप ढाल लिया। जबकि 'मन्नै' की अगली तीन पउड़ीयों में यह वर्णन किया गया है कि यदि हम गुरु की शिक्षा को मान लें तो हमारे जीवन में किस प्रकार का परिवर्तन आ जाएगा।

सही अर्थों में 'सिख' तभी 'सिख' कहलाता है जब वह गुरु की बात मानकर उसे अपने जीवन में अपना लेता है। पंचम पिता श्री गुरु अर्जन देव जी ने सिख (सेवक) की निशानियाँ बताते हुए फरमाया है कि सेवक की पहली निशानी होती है कि वह आज्ञाकारी होता है, मनमर्ज़ी नहीं करता। एवं् आज्ञाकारी ही पुजारी होता है। इस संबंध में गुरबाणी फ़रमान है :-

''ठाकुर का सेवकु आगिआकारी॥ ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी॥''

(अंगः 285)

''ठाकुर का सेवकु आगिआकारी।। ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी।।''

(अंगः 285)

अगर हम सिख इतिहास पर विचार करें तो यह बात स्पष्ट रूप से समक्ष आती है कि उन्हीं सिखों को सत्कार मिला है जिन्होंने गुरु की बात को मान लिया जैसे कि भाई लहणा जी ने गुरु नानक देव जी द्वारा ली गई परीक्षाओं में उनकी बात 100 प्रतिशत मानी। उदाहरणर्थ गन्दे पानी में से कटोरा निकालना, कीचड़ से भरे हुए घास की गठरी सिर पर उठाना, धर्मशाला में मरी हुई चुहिया को उठाकर बाहर फेंकना, शीत ऋतु में टूटी हुई दीवार को दोबारा बनाना, शीत ऋतु की मध्यरात्रि में वस्त्र धोने का हुक्म, रावी स्नान की वार्ता - जब बारिश में भाई लहणा जी गुरु जी के वस्त्रों को हृदय से लगा कर बैठे रहे- रात्रि समय यह प्रश्न करना कि कितनी रात्रि गुजर गई आदि आदि। मुर्दा खाने की आज्ञा माननी आदि। **भाई लहणा जी इन सारी परीक्षाओं में पास हुए क्योंकि उन्होंने गुरु जी की आज्ञा का पालन किया और गुरु नानक देव जी ने उन्हें**

'भाई लहणा' जी से 'गुरु अंगद' अर्थात अपने ही शरीर का हिस्सा कह कर सम्मानित किया।

गुरु अमरदास जी ने भी कड़ा परिश्रम करते हुए 12 साल लगातार अनथक सेवा की, गुरु जी के सारे बचनों का पालन किया और गुरु अंगद देव जी का रूप हो गए। उनका प्रतिदिन का नियम स्वयं स्नान कर गुरु अंगद देव जी के स्नान के लिए जल भर कर लाना था। इसी दौरान अंधेरे में कई बार वृद्धावस्था के कारण ठोकर भी लगती थी, लोग भी उनका उपहास उड़ाते थे पर बाबा अमरदास जी इन बातों की परवाह किए बिना अपने प्रिय गुरु की सेवा में जुटे रहते। आप खडूर साहिब में दिन रात गुरु की बाणी का पाठ या सतनाम वाहेगुरु का जाप करते हुए लंगर की सेवा, बर्तन साफ करने की सेवा, कुएँ से पानी निकालने की सेवा, संगतों की स्नान सेवा व गर्मियों में संगतों को पंखा करने की सेवा करते थे। **इस सेवा के कारण ही आपको गुरुगद्दी की दात की प्राप्ति हुई।**

जब श्री गुरु अमरदास जी ने भाई रामा जी व भाई जेठा जी (गुरु रामदास जी) की थड़े बनाने की परीक्षा ली तो भाई जेठा जी (गुरु रामदास जी) ने गुरु के हुक्म को ज्यों का त्यों माना व भाई जेठा जी से गुरु रामदास जी बन गए। (संबंधित साखी पृष्ठ 187 पर)

मानने के प्रति आपके समक्ष दो और बातें रख रहा हूँ **प्रथम :-** एक बार एक व्यक्ति ने अपने पुत्र से कहा कि बेटा मुझे प्यास लगी है, मुझे एक गिलास पानी लाकर दो। बेटे ने पिता की बात सुन ली पर वह उठा नहीं। पिता ने पुन: कहा कि मुझे प्यास लगी है, मुझे एक गिलास पानी लाकर दो, वह फिर भी न उठा। जब पिता ने तीसरी बार कहा तो पुत्र ने कहा कि पिता जी मैंने आपकी बात को ध्यान से सुन लिया है। पिता ने किहा, **''उस बात का क्या लाभ जिसे तुमने सुन तो लिया है पर माना नहीं।''**

द्वितीय :- यह उस समय की बात है जब मोबाइल या टेलीफोन नहीं होते थे। उस समय एक व्यक्ति किसी Hill Station पर गया हुआ था। वहाँ एकदम से ठंड बढ़ गई। इसलिए उसने अपने दोनों बेटों को पत्र लिखा कि यहाँ ठंड बहुत ज्यादा बढ़ गई है। अत: मुझे जल्दी से जल्दी गर्म कपड़े भिजवा दो। एक बेटे को जब पत्र मिला तो उसने उसे बहुत संभाल कर रेशमी कपड़े में लपेट कर अल्मारी में रख दिया और उस पत्र को रोज़ नमस्कार करने लगा

कि यह मेरे पिता का पत्र है पर उसने कपड़े नहीं भेजे। इंतज़ार करने के उपरान्त पिता ने दूसरे पुत्र को पत्र भेजा कि मुझे गर्म कपड़ों की आवश्यकता है, जल्दी कपड़े भेज दो। दूसरे पुत्र ने चिट्ठी मिलते ही अपने पिता की बात मानते हुए उसी समय कपड़े भिजवा दिए। जब उनके पिता वापिस आए तो उन्होंने अपने पहले पुत्र से पूछा कि ''क्या तुम्हें मेरा पत्र नहीं मिला था?'' उसने उत्तर दिया कि पिता जी मुझे आपका पत्र मिल गया था और आओ आपको दिखाऊँ कि मैंने उसका कितना सत्कार किया है व उसे कितना संभाल कर रखा है। उसके पिता ने कहा कि ''उस पत्र को सम्भालने का क्या लाभ, क्योंकि जो उसमें लिखा था उसे तो तुमने माना ही नहीं।''

'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा खन्ने वाले जिन्होंने भाई वीर सिंह एकैडमी की स्थापना की, अक्सर कहा करते थे कि आज का सिख भी यही कर रहा है, वह श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के समक्ष नतमस्तक तो होता है, गुरु भी मानता है, पर गुरु की बात, गुरु की बाणी द्वारा दिए उपदेश को नहीं मानता। लाभ तो तभी होगा जब सिख गुरु की बात सुनकर मानना शुरु कर दे।

जो सिख गुरु की बात सुनकर मानते नहीं, उनके बारे गुरुबाणी का फ़रमान है:-

''ਸਲਾਮੁ ਜਬਾਬੁ ਦੋਵੈ ਕਰੇ ਮੁੰਢਹੁ ਘੁਥਾ ਜਾਇ॥
ਨਾਨਕ ਦੋਵੈ ਕੂੜੀਆ ਥਾਇ ਨ ਕਾਈ ਪਾਇ॥'' (ਅੰਗ: 474)
''सलामु जबाबु दोवै करे मुंढहु घुथा जाइ।।
नानक दोवै कूड़ीआ थाइ न काई पाइ।।'' (अंग: 474)

भाव : जो मनुष्य अपने प्रभु के समक्ष नतमस्तक तो होते हैं पर उनकी आज्ञा का पालन नहीं करते, हे नानक! ऐसे मनुष्य का सिर झुकाना व हुक्म मानना दोनों ही झूठे हैं तथा उनकी कोई भी बात उसके दर पर कबूल नहीं होती। इस संबंध में एक और गुरुबाणी फ़रमान भी इस तरह है:-

''ਸੋ ਸਿਖੁ ਸਖਾ ਬੰਧਪੁ ਹੈ ਭਾਈ ਜਿ ਗੁਰ ਕੇ ਭਾਣੇ ਵਿਚਿ ਆਵੈ॥
ਆਪਣੈ ਭਾਣੈ ਜੋ ਚਲੈ ਭਾਈ ਵਿਛੁੜਿ ਚੋਟਾ ਖਾਵੈ॥'' (ਅੰਗ: 601)
''सो सिखु सखा बंधपु है भाई जि गुर के भाणे विचि आवै।।
आपणै भाणै जो चलै भाई विछुड़ि चोटा खावै ।।''
(अंग: 601)

भाव : हे भाई, वही मनुष्य गुरु का सिख है, गुरु का मित्र है, गुरु का रिश्तेदार है जो गुरु की इच्छानुसार चलता है। जो अपनी मर्ज़ी के अनुसार चलते हैं वे प्रभु से बिछुड़ कर दुख सहते हैं।

सोलहवीं पउड़ी

पंच परवाण पंच परधानु।। पंचे पावहि दरगहि मानु।।
पंचे सोहहि दरि राजानु।। पंचा का गुरु एकु धिआनु।।
जे को कहै करै वीचारु।। करते कै करणै नाही सुमारु।।
धौलु धरमु दइआ का पूतु।। संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति।।
जे को बुझै होवै सचिआरु।। धवलै उपरि केता भारु।।
धरती होरु परै होरु होरु।। तिस ते भारु तलै कवणु जोरु।।
जीअ जाति रंगा के नाव।। सभना लिखिआ वुड़ी कलाम।।
एहु लेखा लिखि जाणै कोइ।। लेखा लिखिआ केता होइ।।
केता ताणु सुआलिहु रूपु।। केती दाति जाणै कौणु कूतु।।
कीता पसाउ एको कवाउ।। तिस ते होए लख दरीआउ।।
कुदरति कवण कहा वीचारु।। वारिआ न जावा एक वार।।
जो तुधु भावै साई भली कार।। तू सदा सलामति निरंकार।। १६।।

उच्चारण : परधानु—प्रधान। **दरगहि**—दरगह। **मानु**—मान। **दरि**—दर। **राजानु**—राजान। **गुरु**—गुर। **एकु**—एक। **पंचा**—पंचां। **धिआनु**—ध्यान। **पावहि**—पावहिं। **सोहहि**—सोहहिं। **वीचारु**—वीचार। **सुमारु**—शुमार। **धौलु**—धौल। **धरमु**—धर्म। **दइआ**—दया। **पूतु**—पूत। **संतोखु**—संतोख। **थापि**—थाप। **जिनि**—जिन। **सूति**—सूत। **सचिआरु**—सचिआर। **उपरि**—उपर। **भारु**—भार। **होरु**—होर। **कवणु**—कवण। **जोरु**—जोर। **जाति**—जात। **लिखिआ**—लिख्या। **एहु**—एह। **लिखि**—लिख। **कोइ**—कोय। **होइ**—होय। **ताणु**—ताण। **सुआलिहु**—सुआलेहो। **रूपु**—रूप। **दाति**—दात। **कौणु**—कौण। **कूतु**—कूत। **पसाउ**—पसाओ। **कवाउ**—कवाओ। **दरीआउ**—दरीआओ। **रंगा**—रंगां। **नाव**—नांव। **कुदरति**—कुदरत। **वीचारु**—वीचार। **तुधु**—तुध। **सलामति**—सलामत। **कहा**—कहां। **जावा**—जावां।

पद अर्थ : पंच—वह 'श्रेष्ठ' मनुष्य जिन्होंने नाम को सुना है और उसे माना है, वह मनुष्य जिसकी सुरति नाम से जुड़ी है और जिसके अंदर नाम की

प्रतीति आ गई है। **कहै**—ध्यान करे। **वीचारु**—कुदरत के लेखे की वीचार। **करते कै**—करतार की कुदरत का। **सुमार**—(शुमार) हिसाब, लेखा। **धौलु**—बैल। **धरमु**—धर्म। **दइआ**—दया। **पूतु**—पुत्र। **संतोखु**—संतोख। **थापि**—थाप। **जिनि**—जिन। **सूति**—सूत। **सचिआरु**—सचिआर। **उपरि**—उपर। **भारु**—भार। **होरु**—होर। **कवणु**—कवण। **जोरु**—जोर। **जीअ**—जीव जंतु। **के नाव**—कई नामों के। **वुड़ी कलाम**—चलती कलम से, भाव कलम को रोके बिना ही एक समान। **लिखि जाणै**—जानता है। **कोइ**—कोई बिरला। **लेखा लिखिआ**—लिखा हुआ लेखा। **केता होइ**—कितना बड़ा हो जाय। **पसाउ**—पासार। **कवाउ**—हुक्म। **तिस ते**—उस के हुक्म से। **लख दरीआउ**—ज़िन्दगी रूपी लाखों दरिया। **सुआलिहु**—सुन्दर। **कूतु**—अंदाज़ा। **कुदरति**—ताकत, सामर्थ्य। **कहा वीचारु**—मैं क्या विचार कर सकूँ। **वारिआ न जावा**—बलिहारी नहीं हो सकता, भाव मेरी क्या जुर्रत है? **साई कार**—वही काम। **सलामति**—अटल। **निरंकार**—हे! हरि। **परवाण**—स्वीकार। **परधानु**—मुखी, अग्रणी। **दरगह**—अकाल पुरख के दरबार में। **सोहहि**—शोभा देते हैं। **गुरु एकु**—केवल गुरू ही। **धिआनु**—सुरति का निशाना।

अर्थ : जिन मनुष्यों की सुरति नाम में जुड़ी रहती है और जिनके अंदर प्रभु के लिए लग्न लग जाती है वही मनुष्य यहां, संसार में सम्मानित रहते हैं और सब से मुखी (श्रेष्ठ) होते हैं, अकाल पुरख की दरगाह में भी वे पंच जन ही आदर प्राप्त करते हैं। राज दरबारों में भी वे पंच जन ही शोभायमान होते हैं। इन पंच जनों की सुरति का ध्येय केवल एक गुरू ही है, भाव इनकी सुरति गुरू शब्द में ही रहती है, गुरू शब्द में जुड़े रहना ही इनका असली ध्येय है। गुरू शब्द में जुड़े रहने का परिणाम यह नहीं निकल सकता कि कोई प्रभू द्वारा रची हुई इस सृष्टि का अंत पा सके। अकाल पुरख की कुदरत का कोई लेखा ही नहीं, भाव अंत नहीं पाया जा सकता, चाहे कोई कथन करके देखे और विचार कर ले। परमात्मा तथा उसकी कुदरत का अंत पाना मनुष्य के जीवन का मनोरथ हो ही नहीं सकता। अकाल पुरख का धर्म रूपी बंधा हुआ नियम ही बैल है जो सारी सृष्टि को कायम रख रहा है। यह धर्म, दया का पुत्र है, भाव अकाल पुरख ने अपनी कृपा करके सृष्टि को टिका कर रखने के लिए धर्म रूपी नियम बना दिया है। इस प्रकार धर्म ने अपनी मर्यादा के अनुसार संतोष

को जन्म दे दिया है। यदि कोई मनुष्य इस उपर्युक्त विचार को समझ ले तो वह इस योग्य हो जाता है कि उसके अंदर अकाल पुरख का प्रकाश हो जाये। नहीं तो, ख्याल तो करो कि बैल पर धरती का कितना भार है। वह बेचारा इतने भार को कैसे उठा सकता है ? दूसरा विचार और है कि यदि इस धरती के नीचे बैल है, इस बैल को सहारा देने के लिए नीचे और धरती होगी, उस धरती के नीचे और बैल, उसके नीचे फिर कोई और बैल होगा और अंतिम बैल के सहारे के लिए क्या आधार होगा ? सृष्टि में कई जातियों के, कई प्रकार के और कई नामों के जीव हैं। इन सब पर एक तार चलती कलम से अकाल पुरखु (ईश्वर) की कुदरत का लेखा लिखा हुआ है, पर इस लेखे के बारे कोई भी मनुष्य जान नहीं सकता। भाव परमात्मा की कुदरत का अन्त कोई भी जीव नहीं पा सकता। यदि लेखा लिखा भी जाय तो यह अंदाज़ा नहीं लग सकता कि लेखा कितना बड़ा हो जाये। अकाल पुरखु का अनंत बल है, अनंत सुन्दर रूप है, अनंत उसकी दात है, इसका कौन अंदाजा लगा सकता है ? अकाल पुरखु ने अपने हुक्म से सारा संसार बना दिया, उस हुक्म से ही जिंदगी के लाखों दरिया बन गये हैं। अत: मेरी क्या शक्ति है कि करतार की कुदरत की विचार कर सकूं। हे अकाल पुरखु ! हे ईश्वर ! मैं तो तेरे पर एक बार भी बलिहारी होने लायक नहीं हूं। भाव, मेरी हस्ती बहुत ही तुच्छ है। हे निरंकार ! तूं सदा अटल रहने वाला हैं। जो तुझे अच्छा लगता है वही काम मेरे लिए अच्छा है। भाव तेरी रज़ा में राज़ी रहना ही ठीक है।

नोट : बहुत पुराने समय में कई ऋषि मुनि जंगल में तप आदि करते रहे, जिन्होंने उपनिषदों की रचना की। जो कि बहुत पुरानी धार्मिक पुस्तकें हैं। कईयों में यह विचार किया गया है कि संसार कब बना, क्यों बना, कितना बड़ा है, आदि आदि। भक्ति करने के लिए ऋषि, भक्ति के स्थान पर एक ऐसे प्रयास में लग गये जो मनुष्य की समझ से बहुत दूर है। यहां पर सतिगुरू जी इस त्रुटि की ओर इशारा करते हैं। ऐसे कोझे यत्नों का ही यह परिणाम था कि आम लोगों ने यह निश्चित कर लिया कि हमारी धरती को एक बैल ने उठाया हुआ है। यह मिसाल लेकर सतिगुरू जी इसका खंडन कर के कहते हैं कि कुदरत बेअंत है, और इसका रचनहार भी बेअंत है।

पाठ का उच्चारण : (1) कहै, करै, कै, करणै, बुझै, धवलै, परै, तलै, भावै आदि शब्द ए की मात्रा (ै) सहित उच्चारण करने हैं।

(2) एहु शब्द का उच्चारण छोटे उ (ु) की मात्रा के बिना एह करना है। छोटा उ (ु) एक-वचन स्वरूप प्रकट करने के लिए है। जब 'ऐहो' उच्चारण करना होता है जो शब्द का स्वरूप भी एहो होता है जैसे—गुण ऐहो होरु नाहीं कोइ। १६।

सोलहवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''पंच परवाण पंच परधानु।। पंचे पावहि दरगहि मानु।।
पंचे सोहहि दरि राजानु।। पंचा का गुरु एकु धिआनु।।''

'पंच' का शाब्दिक अर्थ है- श्रेष्ठ। 'श्रेष्ठ' उन मनुष्यों को कहा गया है जिन्होंने नाम सुनकर, मानकर जीवन में उतार लिया है। इन 'पंचों' की एक निशानी बड़ी विलक्षण है कि उनका ध्यान सदैव एक अकाल पुरखु की ओर रहता है। **इससे हमनें यह शिक्षा लेनी है कि यदि हम जीवन में 'पंच' की पदवी को पाना चाहते हैं तो कामकाज में निरन्तर रहने के बाद भी एक अकाल पुरखु में ध्यान जोड़ना पड़ेगा। सतगुरु जी ने भी फरमाया है :- ''पंचा का गुरु एकु धिआनु।।''**

अब प्रश्न यह है कि काम-काज में व्यस्त रहते हुए एक अकाल पुरखु के साथ ध्यान कैसे जोड़ सकते हैं। इसका उत्तर श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भक्त नामदेव जी द्वारा उच्चारित निम्नलिखित पंक्तियों में बड़े सुंदर ढंग से अंकित किया गया है :-

''ਆਨੀਲੇ ਕਾਗਦੁ ਕਾਟੀਲੇ ਗੂਡੀ ਆਕਾਸ ਮਧੇ ਭਰਮੀਅਲੇ॥
ਪੰਚ ਜਨਾ ਸਿਉ ਬਾਤ ਬਤਊਆ ਚੀਤੁ ਸੁ ਡੋਰੀ ਰਾਖੀਅਲੇ॥''

(ਅੰਗ: 972)

''आनीले कागदु काटीले गूडी आकास मधे भरमीअले।।
पंच जना सिउ बात बतऊआ चीतु सु डोरी राखीअले।।''

(अंग: 972)

भाव : हे त्रिलोचन! देखो लड़का कागज़ लेकर आता है, उस कागज़ को काट कर पतंग बनाता है और उस पतंग को आकाश में उड़ाता है, अपने साथियों से बातें भी करता रहता है पर पतंग उड़ाते समय उसका ध्यान निरंतर उसकी डोर (धागे) में टिका रहता है।

उपर्युक्त साधन को यदि हम भी अपने जीवन में अपना लें तो सभी कार्य करते हुए भी हमारी सुरत परमेश्वर से जुड़ी रहेगी व गुरु कृपा से हम भी 'पंच' की पदवी तक पहुँच सकते हैं।

दूसरी शिक्षा

''जे को कहै करै वीचारु।। करते कै करणै नाही सुमारु।।''

कोई मनुष्य अगर पंच भी बन जाए तो क्या वह अकाल पुरखु का अंत पा सकता है ? इसका उत्तर गुरु साहिब ने उपर्युक्त पंक्ति में स्पष्ट रूप से दिया है कि अकाल पुरखु का अंत पाना तो दूर की बात है हम उसकी रची हुई कुदरत का भी अंत नहीं पा सकते।

इससे हमने यह शिक्षा लेनी है कि हमने कभी भी अकाल पुरखु या उसकी रची हुई रचना का अंत पाने का प्रयत्न नहीं करना क्योंकि जपु जी साहिब में आगे गुरु नानक देव जी ने 24वीं पउड़ी में फिर इस बात को दृढ़ करवाया है:- ''अंतु कारणि केते बिललाहि।। ता के अंत न पाए जाहि।।''

तीसरी शिक्षा

''धौलु धरमु दइया का पूतु।। संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति।।''

अकाल पुरखु का 'धर्म रूपी' अटल नियम 'बैल' है, जो सृष्टि को कायम रख रहा है। यह धर्म 'दया' का पुत्र है तथा इसने 'संतोष' को धारण किया है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हम धर्म के मार्ग पर चलकर कुछ प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें जीवन में दो बातें धारण करनी पड़ेंगी- 'दया' व 'संतोष'।

'दया' के प्रति गुरुबाणी के फ़रमान हैं :-

''दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ॥'' (ਅੰਗः 322)

''दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ।।'' (अंगः 322)

''ਅਠਸਠਿ ਤੀਰਥ ਸਗਲ ਪੁੰਨ ਜੀਅ ਦਇਆ ਪਰਵਾਨੁ॥
ਜਿਸ ਨੋ ਦੇਵੈ ਦਇਆ ਕਰਿ ਸੋਈ ਪੁਰਖੁ ਸੁਜਾਨੁ॥'' (ਅੰਗः 136)

''अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु।।
जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु।।'' (अंगः 136)

'संतोष' के बारे में भी गुरुबाणी का यह फ़रमान है :-

''ਸਤੁ ਸੰਤੋਖੁ ਹੋਵੈ ਅਰਦਾਸਿ॥ ਤਾ ਸੁਣਿ ਸਦਿ ਬਹਾਲੇ ਪਾਸਿ॥'' (ਅੰਗ: 878)

''सतु संतोखु होवै अरदासि।। ता सुणि सदि बहाले पासि।।''

(अंग: 878)

भाव : हे भाई जिस मनुष्य के जीवन में 'सत्य' एवं 'संतोष' हो और अपने जीवन को उसने इस मर्यादा में पूर्णत: ढाला हो तो ऐसा मनुष्य जब प्रभु के दर पर अरदास करता है तो प्रभु अरदास सुनकर उसे अपने पास बिठा लेते हैं व पूछते हैं कि बता तुझे क्या चाहिए अर्थात ऐसे मनुष्य की अरदास प्रभु के दर पर परवान हो जाती है।

चौथी शिक्षा

''वारिआ न जावा एक वार।।
जो तुधु भावै साई भली कार।। तू सदा सलामति निरंकार।।''

गुरु नानक देव जी ने उपर्युक्त पंक्तियाँ जपु जी साहिब में एक बार नहीं, दो बार नहीं बल्कि चार बार दर्ज़ की हैं ताकि हमें यह दृढ़ हो जाए कि हमारी तो इतनी भी ताकत नहीं कि हम अकाल पुरखु पर एक बार भी न्योछावर हो सकें। जो कुछ भी हो रहा है उसके हुक्मानुसार ही हो रहा है और सिख ने **''हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।।''** वाली जुगत को अपनाकर ही सचिआर बनना है।

सतारहवीं पउड़ी

असंख जप असंख भाउ।। असंख पूजा असंख तप ताउ।।
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ।। असंख जोग मनि रहहि उदास।।
असंख भगत गुण गिआन वीचार।। असंख सती असंख दातार।।
असंख सूर मुह भख सार।। असंख मोनि लिव लाइ तार।।
कुदरति कवण कहा वीचारु।। वारिआ न जावा एक वार।।
जो तुधु भावै साई भली कार।। तू सदा सलामति निरंकार।। १७।।

उच्चारण : भाउ—भाओ। **ताउ**—ताओ। **मुखि**—मुख। **रहहि**—रहहिं। **मोनि**—मोन। **लाइ**—लाय। **मुह**—मुंह।

पद अर्थ : अंसख—असंख्य, अनगिनत। **भाउ**—प्यार। **तप ताउ**—तपों का तपना। **मुखि**—मुंह से। **गरंथ वेद पाठ**—वेदों और अन्य धार्मिक पुस्तकों का पाठ। **जोग**—योग धारण करने वाले। **मनि**—मन में। **रहहि उदास**—उपराम रहते हैं। **सती**—दानी मनुष्य। **दातार**—दातें (वस्तुएं) देने वाले। **सूर**—शूरवीर। **मुह**—मुंहों पर। **भख सार**—शस्त्रों के वार सहने वाले। **मोनि**—चुप रहने वाले। **लिव लाइ तार**—एकरस वृति जोड़ कर।

अर्थ : अकाल पुरख की रचना में असंख्य जीव जप करते हैं। अनंत जीव दूसरों के साथ प्यार का व्यवहार कर रहे हैं। कई जीव पूजा कर रहे हैं और असंख्य ही जीव तप साध रहे हैं। बेअंत जीव वेदों और अन्य धार्मिक पुस्तकों के पाठ मुँह द्वारा कर रहे हैं। योग के साधन करने वाले अनंत मनुष्य माया से उपराम रहते हैं। अकाल पुरख की कुदरत में असंख्य भक्त हैं जो अकाल पुरख के गुणों और ज्ञान की विचार कर रहे हैं। अनेक ही दानी तथा दाता बने हुए हैं। अकाल पुरख की रचना में अनंत शूरवीर हैं जो अपने मुंह पर, भाव सम्मुख होकर शस्त्रों के वार सहन करते हैं। अनेकों मोनी हैं, जो एकरस ध्यान जोड़ कर भक्ति कर रहे हैं। मेरी क्या ताकत है कि करतार की कुदरत की विचार कर सकूं ? हे अकाल पुरख! मैं तो तुझ पर एक बार भी

बलिहार जाने योग्य नहीं हूं। भाव, मेरी हस्ती बहुत ही तुच्छ है। हे निरंकार! तू सदा अटल रहने वाला है, जो तुझे अच्छा लगता है, वही काम भला है, भाव तेरी रज़ा में राज़ी रहना ही ठीक है।

पाठ का उच्चारण : रहहिं, मुंह, कहां, जावां आदि शब्दों का उच्चारण बिंदी सहित करना है।

सतारहवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''असंख जप असंख भाउ।। असंख पूजा असंख तप ताउ।।
असंख गरंथ मुखि वेद पाठ।। असंख जोग मनि रहहि उदास।।
असंख भगत गुण गिआन वीचार।। असंख सती असंख दातार।।
असंख सूर मुह भख सार।। असंख मोनि लिव लाइ तार।।''

अर्थात असंख्य मनुष्य नाम जपने वाले हैं, असंख्य ही उसकी पूजा करने वाले हैं, असंख्य ही उसे प्रसन्न करने के लिए तप करते हैं आदि आदि .....

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हमसे कोई अच्छा कर्म हो रहा है तो यह उसकी कृपा द्वारा ही हो रहा है व हमने इस बात का अहंकार न करके परमात्मा का शुक्रिया करना है कि अच्छा कर्म करवाने के लिए उसने हमें अपना साधन बनाया है। अगर परमात्मा चाहते तो वह हमें निंदकों व मूर्खों की श्रेणी में भी खड़ा कर सकते थे। यह परमात्मा का बड़प्पन है कि वे हम पर मेहरबान होकर हमसे अच्छे कर्म करवा रहे हैं।

दूसरी शिक्षा

''कुदरति कवण कहा वीचारु।। वारिआ न जावा एक वार।।
जो तुधु भावै साई भली कार।। तू सदा सलामति निरंकार।।''

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि अकाल पुरखु का अंत पाना तो दूर की बात हम उसकी रची हुई कुदरत का भी अंत नहीं पा सकते। हमारे में इतनी भी ताकत नहीं कि हम अकाल पुरखु पर एक बार भी न्यौछावर हो सकें। जो कुछ हो रहा है वह उसकी आज्ञानुसार ही हो रहा है और सिख ने **''हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि।।''** वाली जुगति (विधि) को जीवन में अपनाकर सचिआर बनना है।

अठारहवीं पउड़ी

असंख मूरख अंध घोर।। असंख चोर हरामखोर।।
असंख अमर करि जाहि जोर।।
असंख गलवढ हतिआ कमाहि।। असंख पापी पापु करि जाहि।।
असंख कूड़िआर कूड़े फिराहि।। असंख मलेछ मलु भखि खाहि।।
असंख निंदक सिरि करहि भारु।। नानकु नीचु कहै वीचारु।।
वारिआ न जावा एक वार।। जो तुधु भावै साई भली कार।।
तू सदा सलामति निरंकार।। १८।।

उच्चारण : करि—कर। **जाहि**—जाहिं। **हतिआ**—हत्या। **पापु**—पाप। **करि**—कर। **जाहि**—जाहिं। **कमाहि**—कमाहिं। **मलु**—मल। **भखि**—भख। **फिराहि**—फिराहिं। **खाहि**—खाहिं। **सिरि**—सिर। **भारु**—भार। **नीचु**—नीच। **वीचारु**—वीचार। **करहि**—करहिं। **जावा**—जावां। **तुधु**—तुध। **तू**—तूं। **सलामति**—सलामत।

पद अर्थ : मूरख, अंध घोर—महामूर्ख। **हरामखोर**—पराया माल खाने वाले। **अमर**—हुक्म। **जोर**—धक्के, ताकत, बल। **गलवढ**—गला काटने वाले। **हतिआ कमाहि**—दूसरों का गला काटते हैं, हत्या करते हैं। **कूड़िआर**—झूठ के स्वभाव वाले। **कूड़े**—झूठ में ही। **फिराहि**—व्यस्त हैं। **मलेछ**—मलीन मत वाले। **मल**—गंद, भख खाते हैं। **सिरि करहि भारु**—अपने सिर पर भार उठाते हैं, दोषी बनते हैं। **जावा**—जावां। **तू**—तूं। **तुधु**—तुध। **सलामति**—सलामत।

अर्थ :- निरंकार की रची हुई सृष्टि में अनेकों ही चोर हैं, पराया माल चुरा-चुरा कर प्रयोग कर रहे हैं और अनेकों ही ऐसे मनुष्य हैं जो दूसरों पर हुक्म तथा ज़बरदस्ती करते-करते अंत में इस संसार से चले जाते हैं। अनेकों ही खूनी मनुष्य दूसरों के गले काटते हैं और अनेकों ही पापी मनुष्य पाप कमा कर आखिर इस दुनिया से चले जाते हैं। अनेकों ही झूठ बोलने के स्वभाव वाले मनुष्य झूठ में ही व्यस्त हैं और अनेकों ही खोटी बुद्धि वाले मनुष्य मल

भाव अखाद्य चीज़ें ही खाये जाते हैं। अनेकों ही निंदक निंदा कर कर के, अपने सिर पर निंदा का भार उठा रहे हैं। हे निरंकार! अनेक जीव कई अन्य कुकर्मों में फंसे हुए होंगे। मेरी क्या मजाल है कि तेरी कुदरत की पूर्ण विचार कर सकूं? नानक नीच तो यह तुच्छ सी विचार पेश करता है। हे अकाल पुरख! मैं तो तेरे पर एक बार भी बलिहार जाने योग्य नहीं हूँ, भाव मैं तेरी अनंत कुदरत की पूर्ण विचार करने योग्य नहीं हूं। हे निरंकार! तू सदा थिर रहने वाला है जो तुझे अच्छा लगता है, वही काम भला है। भाव तेरी रज़ा में ही रहना ठीक है। हम जीवों के लिए यह भली बात है तेरी स्तुति गायन करके ही तेरी रज़ा में राज़ी रहें।

पाठ का उच्चारण : 'नानकु नीचु, कहै वीचारु', पंक्ति में 'नीचु' शब्द के पश्चात् विश्राम देना है। नानकु के पश्चात् नहीं। 'नीचु' शब्द गुरू साहिब ने अपने लिए नम्रता भाव में प्रयोग किया है।१८।

अठारहवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''नानकु नीचु कहै वीचारु।।''

इस पउड़ी में जब गुरु नानक देव जी ने चोरों, मूर्खों व अज्ञानियों की बात की तो अंत में **''नानकु नीचु कहै वीचारु।।''** उच्चारित करके हमें यह शिक्षा दी है कि चाहें हम में बहुत गुण भी हों तो भी हमनें उन गुणों का मान अर्थात अहंकार नहीं करना बल्कि जीवन में विनम्रता को धारण करना है। श्री गुरु नानक देव जी स्वयं इस सृष्टि के मालिक व सर्वोच्च हैं पर उपर्युक्त बात को दृढ़ करवाने के लिए उन्होंने अपने नाम के साथ 'नीचु' शब्द का प्रयोग किया। **इससे यही शिक्षा हमने ग्रहण करनी है** कि हमने कभी भी किसी के अवगुणों पर ध्यान नहीं देना तथा अपने गुणों पर अहंकार नहीं करना। गुरुबाणी का फ़रमान है :-

''ਹਮ ਨਹੀ ਚੰਗੇ ਬੁਰਾ ਨਹੀ ਕੋਇ॥ ਪ੍ਰਣਵਤਿ ਨਾਨਕੁ ਤਾਰੇ ਸੋਇ॥''

(ਅੰਗ: 728)

''हम नही चंगे बुरा नही कोइ।। प्रणवति नानकु तारे सोइ।।''

(अंग: 728)

भाव : जो मनुष्य अपने अहंकार का त्याग करता है और यह समझता है कि मैं औरों से बढ़िया नहीं और कोई भी व्यक्ति बुरा नहीं तो नानक जी कहते हैं कि ऐसे सेवक को परमात्मा संसार के भवसागर से पार लगा देते हैं।

दूसरी शिक्षा

''जो तुधु भावै साई भली कार।। तू सदा सलामति निरंकार।।''

वाहेगुरु जी जो आपको अच्छा लगे, वही अच्छा कर्म है। जैसा कि गुरबाणी में फ़रमान है :-

'ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਕਰਤੇ ਕੀਆ ਬਾਤਾ ਜੋ ਕਿਛੁ ਕਰਣਾ ਸੁ ਕਰ�ि ਰਹਿਆ॥''

(ਅੰਗ: 469)

''कहु नानक करते कीआ बाता जो किछु करणा सु करि रहिआ।।''

(अंग: 469)

तीसरी शिक्षा

संसार में जो प्राणी नीच कर्म कर रहे हैं उनके लिए निम्नलिखित गुरुबाणी फ़रमान के अनुसार यह अरदास करनी है :-

''ਜਗਤੁ ਜਲੰਦਾ ਰਖਿ ਲੈ ਆਪਣੀ ਕਿਰਪਾ ਧਾਰਿ॥
ਜਿਤੁ ਦੁਆਰੈ ਉਬਰੈ ਤਿਤੈ ਲੈਹੁ ਉਬਾਰਿ॥'' (ਅੰਗ: 853)
''जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि।।
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि।।'' (अंग: 853)

उन्नीसवीं पउड़ी

असंख नाव असंख थाव।। अगंम अगंम असंख लोअ।।
असंख कहहि सिरि भारु होइ।।
अखरी नामु अखरी सालाह।। अखरी गिआनु गीत गुण गाह।।
अखरी लिखणु बोलणु बाणि।। अखरा सिरि संजोगु वखाणि।।
जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि।। जिव फुरमाए तिव तिव पाहि।।
जेता कीता तेता नाउ।। विणु नावै नाही को थाउ।।
कुदरति कवण कहा वीचारु।। वारिआ न जावा एक वार।।
जो तुधु भावै साई भली कार।। तू सदा सलामति निरंकार।। १९।।

उच्चारण : नाव—नांव। **थाव**—थांव। **कहहि**—कहहिं। **नामु**—नाम। **गिआनु**—ज्ञान। **लिखणु**—लिखण। **बोलणु**—बोलण। **बाणि**—बाण। **सिरि**—सिर। **संजोगु**—संजोग। **वखाणि**—वखाण। **जिनि**—जिन। **एहि**—एहि। **तिसु**—तिस। **अखरी**—अखरीं। **अखरा**—अखरां। **नाहि**—नाहिं। **पाहि**—पाहिं। **विणु**—विण। **नाउ**—नांउ। **थाउ**—थांउ। **कुदरति**—कुदरत। **वीचारु**—विचार। **तुधु**—तुध। **तू**—तूं। **सलामति**—सलामत।

पद अर्थ : अगंम—जहाँ पर किसी की पहुंच न हो सके। **लोअ**—लोग, भवण। **अखरी**—अक्षरों के द्वारा ही। **गुण गाह**—गुणों के जानकार। **बाणि**—वाणी। **संजोगु**—भाग्यों का लेख। **वखाणि**—का वर्णन किया जा सकता है। **तिसु सिरि**—उस अकाल पुरखु के माथे पर। **फुरमाए**—अकाल पुरखु आदेश करता है। **पाहि**—भोगते हैं। **जेता कीता**—यह सारा संसार, जो अकाल पुरख ने पैदा किया है। **तेता**—वह सारा। **नाउ**—नाम।

अर्थ : कुदरत के अनेक जीवों तथा अन्य अनंत पदार्थों के असंख्य ही नाम हैं और असंख्य ही उनके स्थान-टिकाने हैं। कुदरत में असंख्य ही भवन हैं जिन तक मनुष्य पहुंच ही नहीं सकता पर जो मनुष्य कुदरत का लेखा-जोखा करने के लिए शब्द 'असंख्य' भी कहते हैं, उनके सिर पर भी भार होता है, भाव, वह भी भूल करते हैं, असंख्य शब्द भी काफी नहीं है। यद्यपि अकाल

पुरख की कुदरत का लेखा करने के लिए असंख्य शब्द तो एक तरफ रहा, कोई भी शब्द काफी नहीं हैं पर अकाल पुरख का नाम भी अक्षरों के द्वारा ही लिया जा सकता है, उसका स्तुतिगायन भी अक्षरों के द्वारा ही किया जा सकता है। अकाल पुरख का ज्ञान भी अक्षरों के द्वारा ही विचारा जा सकता है। अक्षरों के द्वारा ही उसके गीत और गुणों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। बोली लिखना और बोलना भी अक्षर के द्वारा ही बताया जा सकता है। इसलिए शब्द 'असंख्य' का प्रयोग किया गया है। वैसे जिस अकाल पुरख ने जीवों के माथे पर संयोग के यह अक्षर लिखे हैं उसके सिर पर कोई लेख नहीं है, भाव कोई मनुष्य उस अकाल पुरख का लेखा नहीं कर सकता। जिस प्रकार अकाल पुरख हुकम करता है, उसी प्रकार जीव अपने संयोग भोगते हैं। यह सारा संसार अकाल पुरख ने बनाया है, यह उसका स्वरूप है, (इहु विसु संसार, तुम देखदे, इहु, हरि का रुपु है, हरि रूपु नदरी आइआ) कोई स्थान या पदार्थ देखें, वहीं अकाल पुरख का स्वरूप दिखाई देता है। सृष्टि का कण-कण अकाल पुरख का स्वरूप है। मेरी क्या हस्ती है कि करतार की कुदरत की विचार कर सकूं। हे अकाल पुरख! मैं तो तेरे पर एक बार भी न्यौछावर नहीं हो सकता। भाव, मेरी हस्ती बहुत ही तुच्छ है। हे निरंकार! तूं सदा स्थिर रहने वाला है। जो तुझे अच्छा लगता है, वही काम अच्छा है भाव तेरी रज़ा में रहना ही हम जीवों के लिए अच्छी बात है।

उन्नीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''असंख नाव असंख थाव।। अगंम अगंम असंख लोअ।।
असंख कहहि सिरि भारु होइ।।''

परमेश्वर की कुदरत बेअंत है उसका कोई अंत नहीं पा सकता। इस पउड़ी में श्री गुरु नानक देव जी ने कुदरत के इसी बेअंत रूप का वर्णन करते हुए उसके लिए 'असंख्य' अक्षर का प्रयोग किया है तथा साथ में यह भी कहा है कि हे परमात्मा। तेरी रचना के लिए 'असंख्य' अक्षर का प्रयोग करने वाले भी अपने सिर पर भार अनुभव करते हैं क्योंकि तेरी रचना 'असंख्य' से भी परे है।

इससे हमें यह शिक्षा लेनी है कि परमात्मा का अंत पाना तो दूर हम उसकी कुदरत का भी अंत नहीं पा सकते।

दूसरी शिक्षा

''जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि।। जिव फुरमाए तिव तिव पाहि।।''

अकाल पुरख द्वारा रची हुई रचना के सिर पर तो लेख लिखे हुए हैं पर परमात्मा जिसने उनके सिर पर लेख लिखे हैं वह स्वयं हर लेखे-जोखे से ऊपर है। वह सबका मालिक है और जिस तरह उसका हुक्म होता है उसी के अनुसार प्राणियों को सब कुछ प्राप्त होता है।

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमारे जीवन में जो कुछ भी घटित हो रहा है वह परमात्मा की आज्ञानुसार ही हो रहा है। हमें इसे सहज भाव से स्वीकार करना है तभी हम परमात्मा के कृपा के पात्र बनेंगे।

तीसरी शिक्षा

''जेता कीता तेता नाउ।। विणु नावै नाही को थाउ।।''

सारी सृष्टि अकाल पुरखु के नाम का ही विस्तृत रूप है। कोई स्थान ऐसा

नहीं है जहाँ उसका नाम विद्यमान न हो, वह सर्वव्यापक है व हाज़रा-हज़ूर अर्थात Omnipresent है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि परमात्मा सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है, हर प्राणी में उसका निवास है। अत: हमें किसी को भी दुख नहीं देना चाहिए तथा सभी प्राणियों में उसके प्रकाश को देखना चाहिए।

गुरुबाणी का फ़रमान है :

''ਬਲਿਹਾਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਵਸਿਆ॥
ਤੇਰਾ ਅੰਤੁ ਨ ਜਾਈ ਲਖਿਆ॥ ੧॥ ਰਹਾਉ॥
ਜਾਤਿ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਜੋਤਿ ਮਹਿ ਜਾਤਾ ਅਕਲ ਕਲਾ ਭਰਪੂਰਿ ਰਹਿਆ॥''

(ਅੰਗ: 469)

''बलिहारी कुदरति वसिआ।। तेरा अंतु न जाई लखिआ।। रहाउ।।
जाति महि जोति जोति महि जाता अकल कला भरपूरि रहिआ।।''

(अंग: 469)

भाव : हे कुदरत में बस रहे करतार! मैं तेरे ऊपर कुरबान हूँ, तेरा अंत नहीं पाया जा सकता। सारी सृष्टि में तेरा ही नूर है, सभी जीवों में तेरा ही प्रकाश है, तू सर्वव्यापक है।

''ਅਵਲਿ ਅਲਹ ਨੂਰੁ ਉਪਾਇਆ ਕੁਦਰਤਿ ਕੇ ਸਭ ਬੰਦੇ॥
ਏਕ ਨੂਰ ਤੇ ਸਭੁ ਜਗੁ ਉਪਜਿਆ ਕਉਨ ਭਲੇ ਕੋ ਮੰਦੇ॥'' (ਅੰਗ: 1349)

''अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे।।
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे।।''

(अंग: 1349)

भाव : सर्वप्रथम खुदा के नूर ने ही संसार उत्पन्न किया है, ये सभी जीव-जंतु परमात्मा की रचना है, प्रभु की ज्योति से ही संसार उत्पन्न हुआ है। इसलिए हमें किसी को बुरा भला नहीं कहना चाहिए।

बीसवीं पउड़ी

भरीऐ हथु पैरु तनु देह।। पाणी धोतै उतरसु खेह।।
मूत पलीती कपड़ु होइ।। दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ।।
भरीऐ मति पापा कै संगि।। ओहु धोपै नावै कै रंगि।।
पुंनी पापी आखणु नाहि।। करि करि करणा लिखि लै जाहु।।
आपे बीजि आपे ही खाहु।। नानक हुकमी आवहु जाहु।। २०।।

उच्चारण : हथु—हथ। **पैरु**—पैर। **तनु**—तन। **उतरसु**—उतरस। **कपड़ु**—कपड़। **होइ**—होय। **साबूणु**—साबूण। **ओहु**—ओह। **धोइ**—धोय। **मति**—मत। **संगि**—संग। **ओहु**—ओह। **रंगि**—रंग। **पापा**—पापां। **आखणु**—आखण। **करि**—कर। **लिखि**—लिख। **बीजि**—बीजि। **हुकमी**—हुकमीं।

पद अर्थ : उतरसु—उतर जाती है। **खेह**—मिट्टी, धूल, मैल। **मूत पलीती**—मूत्र में गंदला हुआ। **दे साबूणु**—साबुण लगा कर। **मति**—बुद्धि। **ओहु**—वह। **धोपै**—धोया जाता है। **रंगि**—अकाल पुरख के नाम के प्रेम के साथ। **आखणु**—कहने मात्र को ही नहीं। **करि करि करणा**—जैसे जैसे कर्म करोगे। **लिखि**—तैसे ही संस्कार अपने मन में उतार कर। **हुकमी**—अकाल पुरख के हुक्म में। **आवहु जाहु**—जन्म-मरण में पड़ा रहेगा।

अर्थ : यदि हाथ, पैर या शरीर गंदा हो जाये तो पानी से धोकर मैल उतर जाती है। परन्तु यदि मनुष्य की बुद्धि पापों से मलीन हो जाये, तो वह पाप, अकाल पुरख के नाम से प्यार करने से ही धोये जा सकते हैं। हे नानक! पुण्य या पाप केवल शब्द ही नहीं है। भाव, केवल कहने मात्र को ही नहीं है। सचमुच ही तूं जैसे कर्म करेगा वैसे ही संस्कार अपने अंदर उतार कर साथ ले जायेगा। जो कुछ तूं स्वयं बीजेगा, उसी का फल स्वयं ही खायेगा।

नोट : पहली पउड़ी में पंक्ति आती है, ''हुकमि रजाई चलणा, नानक लिखिआ नालि।'' दूसरी पउड़ी में वर्णन आया है, ''हुकमी उतमु नीच, हुकमि लिखि, दुख सुख पाईअइह।'' अब इस पउड़ी में उपरोक्त पंक्तियों

वाला ख्याल बिल्कुल साफ किया गया है। सारी सृष्टि अकाल पुरख के नियमों में ही चल रही है। इन नियमों का नाम सतिगुरू जी ने हुकम रखा है। वह नियम यह है कि मनुष्य जैसा-जैसा कर्म करता है, तैसा ही फल भोगता है। उसकी मन की गहराईयों तक वैसे ही अच्छे या बुरे संस्कार बन जाते हैं और उनके अनुसार ही मनुष्य जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है या अकाल पुरख की रज़ा में चलकर अपना जीवन सफल कर लेता है।

पाठ का उच्चारण : (1) 'उतरसु खेह' को उतर से खेह पढ़ना अशुद्ध है।

(2) 'साबूण' का उच्चारण साबण करना अशुद्ध है।

(3) 'जाहु' और 'खाहु' क्रियावाचक शब्दों के 'ह' को लगी छोटे उ की मात्रा का उच्चारण करना है।

बीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''भरीऐ हथु पैरु तनु देह।। पाणी धोतै उतरसु खेह।।
मूत पलीती कपड़ु होइ।। दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ।।
भरीऐ मति पापा कै संगि।। ओहु धोपै नावै कै रंगि।।''

इस पउड़ी में गुरू नानक देव जी ने हमें समझाया है कि यदि शरीर पर मिट्टी लग जाए तो हम उसे पानी से स्वच्छ कर लेते हैं व यदि हमारे वस्त्र मल-मूत्र से अपवित्र हो जाएँ तो हम साबुन से उसे धो लेते हैं। इसके उपरान्त गुरु जी फरमाते हैं कि हमारी मति तो जन्मों से कलुषित है जैसा कि-

''ਜਨਮ ਜਨਮ ਕੀ ਇਸੁ ਮਨ ਕਉ ਮਲੁ ਲਾਗੀ ਕਾਲਾ ਹੋਆ ਸਿਆਹੁ॥
ਖੰਨਲੀ ਧੋਤੀ ਉਜਲੀ ਨ ਹੋਵਈ ਜੇ ਸਉ ਧੋਵਣਿ ਪਾਹੁ॥'' (ਅੰਗਃ 651)
''जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु।।
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु।।'' (अंगः 651)

अब प्रश्न यह उठता है कि मन की मैल कैसे उतारी जाए तो इसका उत्तर देते हुए **गुरु नानक देव जी फ़रमाते हैं कि मन की मैल उतारने का एकमात्र उपाय है कि परमेश्वर के नाम को प्रेम में लीन होकर सिमरना, जपना, समझना एवं विचार करके जीवन में उतारना।**

अब प्रश्न यह है कि हम नाम तो जपते हैं पर हमारे मन की मैल नहीं उतरती तो इसका कारण यह है कि हम प्रेममय हृदय से उसका नाम नहीं लेते और न ही उसके विचारनुसार अपना जीवन ढालते हैं। एक बात ध्यान में रखनी पड़ेगी कि जैसे वस्त्र सिर्फ साबुन से साफ़ नहीं होता उसके लिए पानी की भी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार मन की मैल उतारने के लिए नाम के साथ प्रेम भी आवश्यक है व परमात्मा पर पूर्ण विश्वास भी।

दूसरी शिक्षा

''पुंनी पापी आखणु नाहि।। करि करि करणा लिखि लै जाहु।।
आपे बीजि आपे ही खाहु।।''

'पुण्यात्मा' व 'पापी' कहने मात्र से ही नहीं बनते बल्कि बार-बार किए कर्म जब दिल पर अंकित हो जाते हैं तो धीरे-धीरे वे हमारे मन को प्रभावित कर लेते हैं जिससे कोई 'पुण्यात्मा' व कोई 'पापी' बन जाता है।

अत: हमें सभी कर्म बहुत सोच समझ कर करने चाहिएं क्योंकि किए गए कर्मों का नतीजा हमें खुद भुगतना पड़ता है। हम जो बोएँगें वही पाएँगे। यथा :-

''ਆਪੇ ਬੀਜਿ ਆਪੇ ਹੀ ਖਾਹੁ॥''
''आपे बीजि आपे ही खाहु।।''

इस संबंध में निम्नलिखित गुरुबाणी का फ़रमान भी इस बात को दृढ़ करवाता है कि हम जो कर्म करेंगे हमें वैसा ही फल मिलेगा।

''ਅਜੈ ਸੁ ਰੋਵੈ ਭੀਖਿਆ ਖਾਇ॥'' (ਅੰਗ: 953)
''अजै सु रोवै भीखिआ खाइ।।'' (अंग: 953)

भाव : इतिहास की गाथा के अनुसार राजा अजै ने एक साधु को भिक्षा में लीद दी थी, जो बाद में उन्हें खुद खानी पड़ी। राजा अजै तब बहुत रोए जब भिक्षा में दी हुई लीद खानी पड़ी।

इस सम्बन्ध में एक गुरुबाणी फ़रमान इस तरह भी है :-

''ਜੇਹਾ ਬੀਜੈ ਸੋ ਲੁਣੈ ਕਰਮਾ ਸੰਦੜਾ ਖੇਤੁ॥'' (ਅੰਗ: 134)
''जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु।।'' (अंग: 134)

भाव : यह शरीर मनुष्य के किए कर्मों का खेत है, जो कुछ मनुष्य इस में बीजता है वैसी ही फसल काटता है अर्थात जैसे कर्म करता है वैसे ही फल पाता है।

इक्कीसवीं पउड़ी

तीरथु तपु दइआ दतु दानु।। जे को पावै तिल का मानु।।
सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ।। अंतरगति तीरथि मलि न्हाउ।।
सभि गुण तेरे मै नाही कोइ।। विणु गुण कीते भगति न होइ।।
सुअसति आथि बाणी बरमाउ।। सति सुहाणु सदा मनि चाउ।।
कवणु सु वेला वखतु कवणु कवण थिति कवणु वारु।।
कवणि सि रुती माहु कवणु जितु होआ आकारु।।
वेल न पाईआ पंडती जि होवै लेखु पुराणु।।
वखतु न पाइओ कादीआ जि लिखनि लेखु कुराणु।।
थिति वारु न जोगी जाणै रुति माहु न कोई।।
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई।।
किव करि आखा किव सालाही किउ वरनी किव जाणा।।
नानक आखणि सभु को आखै इक दू इकु सिआणा।।
वडा साहिबु वडी नाई कीता जा का होवै।।
नानक जे को आपौ जाणै अगै गइआ न सोहै।। २१।।

उच्चारण : तीरथु—तीर्थ। **तपु**—तपु। **दइया**—दया। **दतु**—दत। **दानु**—दान। **मानु**—मान। **मनि**—मंन। **अंतरगति**—अंतरगत। **तीरथि**—तीरथ। **मलि**—मल। **सभि**—सभ। **विणु**—विण। **भगति**—भगत। **सुअसति**—सुअस्त। **आथि**—आथ। **सति**—सत। **सुहाणु**—सुहाण। **मनि**—मंन। **कवणु**—कवण। **वखतु**—वखत। **थिति**—थित। **वारु**—वार। **माहु**—माह। **जितु**—जित। **आकारु**—आकार। **लेखु**—लेख। **पुराणु**—पुराण। **वखतु**—वखत। **लिखनि**—लिखन। **लेखु**—लेख। **कुराणु**—कुराण। **थिति**—थित। **वारु**—वार। **रुति**—रुत। **माहु**—मांह। **करि**—कर। **आखणि**—आखण। **सभु**—सभ। **इकु**—इक। **सिआणा**—सयाणा। **आखा**—आखां। **साहिबु**—साहिब। **गइआ**—गइआं। **नाई**—नाईं।

पद अर्थ : जे को पावै—यदि कोई मनुष्य प्राप्त करे। **तिल का**—तिल मात्र। **दतु**—दिया हुआ, प्रदत्त। **सुणिआ**—जिस मनुष्य ने अकाल पुरख का नाम सुन लिया है। **मंनिआ**—जिसका मन उस नाम को सुनकर मान गया है। **कीता भाउ**—जिसने प्रेम किया है। **अंतरगति तीरथि**—आंतरिक तीर्थ पर। **मलि**—मल मल कर। **न्ाउ**—स्नान किया है। **सभि**—सारे। **विणु गुण कीते**—यदि तूं अपने गुण मेरे में उत्पन्न न करे। **सुअसति**—तूं सदा अटल रहे। **बरमाउ**—ब्रह्मा। **सति**—सदा स्थिर। **सुहाणु**—सुन्दर। **मन चाउ**—मन में खिड़ाव। **वेल न पाईआ**—समय न मिला। **पंडती**—पंडितों को। **जि**—नहीं तो। **लेखु**—विषय। **लेखु पुराणु**—इस लिखे (विषय) वाला पुराण। **न पाइयो**—नहीं मिला। **कादीआं**—काज़ियों ने। **लिखनि**—काज़ी लिख देते। **लेखु**—कुरान जैसा लेख। **जा करता**—जो कर्ता। **सिरठी कउ**—संसार को। **साजे**—पैदा करता है। **आपे जाणै सोई**—वह स्वयं ही। **किव करि**—किस तरह। **आखा**—मैं कहूं। **वरनी**—मैं वर्णन करूं। **सभु को**—प्रत्येक जीव। **आखणि आखै**—कहने को तो कहता है। **इक दू इकु सिआणा**—एक दूसरे से योग्य बन कर। **दू**—से। **साहिबु**—मालिक, अकाल पुरख। **नाई**—प्रशंसा। **कीता जा का होवै**—जिस हरी का सब कुछ किया हुआ होता है। **जे को**—यदि कोई मनुष्य। **आपै**—अपनी अकल के बल से। **न सोहै**—शोभा नहीं। **अगै गइआ**—अकाल पुरख के दर पर जा कर।

अर्थ : तीर्थ यात्रा, तप की साधना, जीवों पर दया करना, दिया हुआ दान इन कर्मों के बदले में यदि किसी मनुष्य को कोई महानता मिल भी जाए, तो मामूली-सी मिलती है। जिस मनुष्य ने अकाल पुरख के नाम में सुरति जोड़ी है, जिसका मन नाम में विलीन हो गया है और जिस का मन अकाल पुरख के प्यार से ओत-प्रोत हो, उस मनुष्य ने मानो अपने आंतरिक तीर्थ पर मल मल कर स्नान कर लिया है। भाव, उस मनुष्य ने अपने अंदर बस रहे अकाल पुरख में जुड़ कर अच्छी तरह अपने मन की मैल उतार ली है। हे अकाल पुरख! यदि तूं स्वयं अपने गुण मेरे में पैदा न करे, तो मेरी कोई हस्ती नहीं कि तेरे गुण गा सकूं। यह सब तेरी ही महानता है। हे निरंकार! तेरी सदा जय हो! तूं स्वयं ही माया है, तूं स्वयं ही बाणी हैं, तूं स्वयं ही ब्रह्मा है। भाव इस सृष्टि को बनाने वाले माया, बाणी या ब्रह्मा तेरे से अलग हस्ती वाले नहीं हैं, जो लोगों ने मान

रखे हैं। तूं सदा स्थिर रहने वाला है, सुंदर है, तेरे मन में सदा खिड़ाव है, तूं ही संसार की रचना करने वाला है। वह कौन-सा समय था, कौन-सी तारीख थी, कौन-सा दिन था, वह कौन-सी ऋतु थी और कौन-सा वह महीना था जब यह संसार बना था? यह संसार कब बना है? उस समय का पंडितों को भी पता नहीं चला, नहीं तो इस विषय पर भी एक पुराण लिखा होता। उस समय की काज़ियों को भी खबर न लग सकी, नहीं तो वे लेखा लिख देते जैसा कि उन्होंने आयतें एकत्र करके कुरान लिखी थी।

जब संसार बना था तब कौन-सी तारीख थी, कौन-सा वार था, इस बात को जोगी भी नहीं जानता। कोई मनुष्य नहीं बता सकता कि तब कौन-सी ऋतु थी और कौन-सा महीना था। जो सृजनहार, इस संसार को पैदा करता है, वह स्वयं ही जानता है कि संसार कब रचा गया। मैं किस तरह अकाल पुरख की महानता का वर्णन करूं, किस प्रकार अकाल पुरख की स्तुति करूं, और किस प्रकार उस की कुदरत को समझ सकूं? (अर्थात नहीं वर्णन किया जा सकता) हे नानक! प्रत्येक जीव अपने आप को दूसरे से ज्ञानी समझ कर अकाल पुरख की महानता बताने का यत्न करता है, पर बता नहीं सकता। अकाल पुरख सब से बड़ा है, उसकी महानता ऊंची है। जो कुछ संसार में हो रहा है, उसका किया हुआ हो रहा है। हे नानक! यदि कोई मनुष्य अपनी अक्ल के सहारे प्रभु की महानता का अंत पाने का यत्न करे, वह अकाल पुरख के दर पर जा कर आदर नहीं पाता।

पाठ का उच्चारण : (1) 'तिल का मानु' को 'तिलकामानु' इकट्ठा करके पढ़ना अशुद्ध है। 'अंतरगति' शब्द को 'अंतरि गति' अलग-अलग उच्चारण नहीं करना है।

(2) शब्द, 'नाउ' के 'न' अक्षर के पैर वाला 'ह' लुप्त है। इसलिए इसका उच्चारण न्ाओ करना है।

(3) 'माहु' शब्द का उच्चारण 'माह' करना है माहो नहीं। 'ह' को लगी छोटे 'उ' की मात्रा केवल एकवचन की प्रतीक है।

(4) 'सिरठी' का उच्चारण 'सृष्टि' नहीं करना।

इक्कीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''तीरथु तपु दइआ दतु दानु।। जे को पावै तिल का मानु।।
सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ।। अंतरगति तीरथि मलि न्हाउ।।''

सतगुरु जी इस पउड़ी में फरमाते हैं कि कर्मकाण्डों के अधीन किए गए तीर्थ, तपस्या, दया व गरीबों को दान देने से किसी मनुष्य को थोड़ा सा मान-सम्मान तो मिल सकता है पर इससे मन की मैल नहीं उतर सकती।

अब प्रश्न यह उठता है कि मन की मैल उतारने का क्या उपाय है। इसके उत्तर में गुरु साहिब ने हमें तीन अवस्थाएँ बताई हैं-

प्रथम - जितनी बाणी पढ़नी है उसे ध्यान से सुनना व विचारना।

द्वितीय - सुन कर, समझ कर, विचार की हुई बाणी का मनन करना।

तृतीता - सुन कर, समझ कर, विचार कर बाणी का मनन करते हुए उसे प्रेम, प्रीत व विश्वास से जीवन में कमाना। जिसने इस प्रकार कमाई की है मानो उस मनुष्य ने अपने अंतर में बस रहे अकाल पुरखु रूपी तीर्थस्थान द्वारा स्नान करके मन की मैल उतार दी है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमने भी उपर्युक्त तीनों अवस्थाओं को जीवन में कमाना है। इस तरह हम अपने अंदर बस रहे अकाल पुरखु के साथ जुड़कर अपने मन की मैल को उतार लेंगे।

दूसरी शिक्षा

''सभि गुण तेरे मै नाही कोइ।। विणु गुण कीते भगति न होइ।।''

गुरुदेव पिता जी में इतने गुणों का भंडार होने के बावजूद इतनी विनम्रता है कि वे फरमाते हैं कि मेरी इतनी भी हैसियत नहीं है कि मैं तेरे गुण गा सकूँ। यह सब तेरा ही बड़प्पन है। हे अकाल पुरखु! यदि आप अपने गुण मेरे में उत्पन्न न करें तो मुझसे तेरी भक्ति नहीं हो सकती।

उपर्युक्त पंक्तियों से हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हम में सभी गुण व प्रेममय भक्ति के गुण भी आ जाएँ तो भी हमने विनम्रता को ही धारण रखना है, अहंकार नहीं करना। कभी कोई हमारे गुणों की यदि प्रशंसा भी करे तो भी हमारे मुख से यही निकलना चाहिए :-

"ਮੈ ਨਿਰਗੁਨ ਗੁਣੁ ਨਾਹੀ ਕੋਇ॥ ਕਰਨ ਕਰਾਵਣਹਾਰ ਪ੍ਰਭ ਸੋਇ॥"

(ਅੰਗ: 388)

"मै निरगुन गुणु नाही कोइ।। करन करावनहार प्रभ सोइ।।"

(अंग: 388)

तीसरी शिक्षा

"सुअसति आथि बाणी बरमाउ।। सति सुहाणु सदा मनि चाउ।।"

इस पउड़ी में परमात्मा की सिफत सलाह करते हुए गुरुदेव पिता ने फरमाया है कि परमात्मा तेरी सदा ही जय हो; तुझे मेरा नमस्कार है, तू स्वयं ही माया, स्वयं ही बाणी (शब्द), स्वयं ही ब्रह्मा आदि सब कुछ है। साथ ही यह भी फरमाया है कि वह परमात्मा सत्य व सुंदर है तथा वह सदैव परम-आनंदमय है।

यहाँ ऐसे प्रतीत होता है कि परमात्मा की सिफत सलाह करते हुए गुरु नानक देव जी ने स्वयं व परमात्मा का रिश्ता ऐसे बनाया है कि जैसे कि ब्राह्मण व यजमान का। जब यजमान पंडित को कोई दक्षिणा देता है तो ब्राह्मण उसके बदले में आशीर्वाद अवश्य देता है कि तुम्हारा घर आबाद रहे। तुम्हारी जय हो आदि। यहाँ भी गुरु नानक साहिब परमात्मा का धन्यवाद करते हुए कहते हैं कि आपने मुझे भक्ति का दान दिया है। क्योंकि इनसे पहली पंक्ति है **"ਵਿਣੁ ਗੁਣ ਕੀਤੇ ਭਗਤਿ ਨ ਹੋਇ॥" "विणु गुण कीते भगति न होइ।।" अर्थात उसका धन्यवाद करते हुए उसकी सिफत सलाह करते हैं।**

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि जब भी परमात्मा हमें कोई बखशिश रूपी दात दे तो हम उसकी सिफत सलाह व उसका धन्यवाद अवश्य करें। जैसे-जैसे हमारे हृदय में शुकराना (Gratitude) बढ़ेगा वैसे-वैसे हम खुशियों व उल्लास से भर जाएँगे तथा उसकी और रहमतें हमें प्राप्त होती रहेंगी।

चौथी शिक्षा

''कवणु सु वेला वखतु कवणु कवण थिति कवणु वारु।।
कवणि सि रुती माहु कवणु जितु होआ आकारु।।
वेल न पाईआ पंडती जि होवै लेखु पुराणु।।
वखतु न पाइओ कादीआ जि लिखनि लेखु कुराणु।।
थिति वारु न जोगी जाणै रुति माहु न कोई।।
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई।।''

इस पउड़ी में गुरुदेव पिता सृष्टि की रचना का वर्णन करते हुए फरमाते हैं कि केवल और केवल परमात्मा ही जानते हैं कि सृष्टि की रचना कब व किस समय हुई। सृष्टि की रचना के बारे में बड़े-बड़े विद्ववान, पंडित, काज़ी व योगी आदि अंदाज़े लगा कर थक गए पर इसका भेद नहीं जान पाए। सृष्टि की रचना के बारे जानना तो दूर की बात है, माँ के गर्भ में पल रहे बच्चे में परमात्मा की ज्योति कब प्रवेश करती है, जिससे सृष्टि की उत्पत्ति होती है, इसका भेद भी कोई नहीं जान पाया।

इससे हमने यही शिक्षा ग्रहण करनी है कि अकाल पुरखु का भेद जानना तो दूर, उसकी रचना का भी भेद नहीं पाया जा सकता। सिफत सालाह द्वारा उसमें समाया तो जा सकता है पर उसकी कृति का कोई अंत नहीं पाया सकता।

दूसरी बात-कई लोग अक्सर पंडितों से जन्मकुंडली आदि बनवाते हैं और पंडित लोग इसी बात को आधार बनाते हैं कि जीव सृष्टि पर कब आया। परन्तु जीवात्मा तो उसी समय सृष्टि में प्रवेश कर जाती है जब वह माँ के गर्भ में होती है न कि उस समय जब वह माँ के गर्भ से बाहर निकलती है। तो फिर ज्योतिषयों व पंडितों का जन्मकुंडली बनाने का आधार बिल्कुल गलत साबित होता है क्योंकि जीवात्मा की माँ को भी यह ज्ञात नहीं होता कि ज्योति कब गर्भ में प्रवेश कर गई। वैसे भी गुरु का सिख कभी भी ग्रहों आदि के चक्कर में नहीं पड़ता। सिख उस अकाल पुरखु की पूजा करता है जिससे धरती, आकाश, सभी ग्रह व नक्षण आदि डरते हैं। गुरुबाणी का फ़रमान है :-

''ਡਰਪੈ ਧਰਤਿ ਅਕਾਸੁ ਨਖੵਤ੍ਰਾ ਸਿਰ ਊਪਰਿ ਅਮਰੁ ਕਰਾਰਾ॥
ਪਉਣੁ ਪਾਣੀ ਬੈਸੰਤਰੁ ਡਰਪੈ ਡਰਪੈ ਇੰਦ੍ਰੁ ਬਿਚਾਰਾ॥'' (ਅੰਗ: ੯੯੮)

''डरपै धरति अकासु नख्यत्रा सिर ऊपरि अमरु करारा।।
पउणु पाणी बैसंतरु डरपै डरपै इंद्रु बिचारा।।'' (अंगः 998)

एवं

''ਭੈ ਵਿਚਿ ਸੂਰਜੁ ਭੈ ਵਿਚਿ ਚੰਦੁ॥ ਕੋਹ ਕਰੋੜੀ ਚਲਤ ਨ ਅੰਤੁ॥''

(ਅੰਗਃ 464)

''भै विचि सूरजु भै विचि चंदु।। कोह करोड़ी चलत न अंतु।।
।।'' (अंगः 464)

पाँचवीं शिक्षा

''वडा साहिबु वडी नाई कीता जा का होवै।।
नानक जे को आपौ जाणै अगै गइआ न सोहै।।''

इस पउड़ी की आखिरी पंक्तियों में गुरु नानक पातशाह ने फ़रमाया है कि दुनिया का मालिक सबसे बड़ा है व उसकी शोभा भी सबसे बड़ी है। इस दुनिया में सब कुछ उसकी आज्ञानुसार ही हो रहा है। पर यदि कोई मनुष्य यह समझ ले कि वह स्वयं सब कुछ करने का सार्मथ्य रखता है, परमात्मा कुछ भी करणीय नहीं है तो यह उसकी सबसे बड़ी भूल होगी। ऐसा मनुष्य परमात्मा के दर पर कभी भी शोभा प्राप्त नहीं कर सकता।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमने कभी किसी इंसान की नहीं बल्कि परमात्मा की सिफत सालाह ही करनी है। मनुष्य की उपमा में की गई तारीफ़ उसके मरने के बाद ही मर जाती है। जबकि अकाल पुरखु की उपमा में की गई बढ़ाई कभी नहीं मरती क्योंकि वह स्वयं अविनाशी है और उसकी बढ़ाई (शोभा) भी अविनाशी है।

दूसरा–जो मनुष्य स्वयं को समर्थ मानते हैं व परमात्मा को कर्त्ता पुरखु नहीं मानते, वे परमात्मा के दर पर परवान नहीं होते। ऐसे मनुष्य के बारे में गुरुबाणी का फ़रमान है :–

''ਹਮ ਕੀਆ ਹਮ ਕਰਹਗੇ ਹਮ ਮੂਰਖ ਗਾਵਾਰ॥
ਕਰਣੈ ਵਾਲਾ ਵਿਸਰਿਆ ਦੂਜੈ ਭਾਇ ਪਿਆਰੁ॥'' (ਅੰਗਃ 39)
''हम कीआ हम करहगे हम मूरख गावार।।
करणै वाला विसरिआ दूजै भाइ पिआरु।।'' (अंगः 39)

एवं

''ਆਪਸ ਕਉ ਕਰਮਵੰਤੁ ਕਹਾਵੈ ॥ ਜਨਮਿ ਮਰੈ ਬਹੁ ਜੋਨਿ ਭ੍ਰਮਾਵੈ ॥'' (ਅੰਗ: 278)
''आपस कउ करमवंतु कहावै ।। जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै ।।''
(अंग: 278)

भाव : जो स्वयं को कर्त्ता कहलवाते हैं वे जन्म-मरण के बंधनों में रह कर कई योनियों में भटकते हैं।

इसके विपरीत कई मनुष्य ऐसे भी हैं जो परमात्मा को ही सब कुछ मानते हैं व अपने द्वारा किए गए कार्यों का श्रेय भी परमात्मा को ही देते हैं, वे (बन्धनों से) मुक्ति की प्राप्ति कर लेते हैं जैसा कि गुरुबाणी फ़रमान है :-

''ਜਿਹਿ ਪ੍ਰਾਨੀ ਹਉਮੈ ਤਜੀ ਕਰਤਾ ਰਾਮੁ ਪਛਾਨਿ ॥
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਵਹੁ ਮੁਕਤਿ ਨਰੁ ਇਹ ਮਨ ਸਾਚੀ ਮਾਨੁ ॥'' (ਅੰਗ: 1427)
''जिहि प्रानी हउमै तजी करता रामु पछानि ।।
कहु नानक वहु मुकति नरु इह मन साची मानु ।।''
(अंग: 1427)

इस संबंध में भक्त कबीर द्वारा उच्चारित पंक्तियाँ भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में संकलित हैं :-

''ਕਬੀਰ ਨਾ ਹਮ ਕੀਆ ਨ ਕਰਹਿਗੇ ਨ ਕਰ�ि ਸਕੈ ਸਰੀਰੁ ॥
ਕਿਆ ਜਾਨਉ ਕਿਛੁ ਹਰਿ ਕੀਆ ਭਇਓ ਕਬੀਰੁ ਕਬੀਰੁ ॥'' (ਅੰਗ: 1367)
''कबीर ना हम कीआ न करहिगे ना करि सकै सरीरु
किआ जानउ किछु हरि कीआ भइओ कबीरु कबीरु ।।''
(अंग: 1367)

बाईसवीं पउड़ी

पाताला पाताल लख आगासा आगास।।
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात।।
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु।।
लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु।।
नानक वडा आखीऐ आपे जाणै आपु।। २२।।

उच्चारण : भालि—भाल। **कहनि**—कहन। **पाताला**—पातालां। **आगासा**—आगासां। **असुलू**—असलू। **इकु**—इक। **धातु**—धात। **विणासु**—विणास। **होइ**—होय। **अठारह**—अठारहं। **कतेबा**—कतेबां। **आपु**—आप।

पद अर्थ : पाताला पाताल—पातालों के नीचे और पाताल हैं। **आगासा आगास**—आकाशों के ऊपर और आकाश हैं। **ओड़क**—अंत में। **भालि थके**—ढूंढ-ढूंढ कर थक गए हैं। **कहनि**—कहते हैं। **इक वात**—एक बात, एक स्वर होकर। **सहस अठारह**—अठारह हज़ार आलम। **कतेबा**—ईसाई मत व इस्लाम आदि की चार किताबें, कुरान, अंजील, तौरेत और जंबूर। **असुलू**—मूल। **इक धात**—एक अकाल पुरख। **लेखा होइ**—यदि हिसाब हो सके। **लिखीऐ**—लिख सकते हैं। **लेखै होइ विणासु**—हिसाब का अंत। **आखीऐ**—कहते हैं। जिस अकाल पुरख को। **आपे**—वह अकाल पुरख स्वयं ही। **जाणै**—जानता है। **आपु**—अपने आप को।

अर्थ : पातालों के नीचे और लाखों ही पाताल हैं और आकाशों के ऊपर और लाखों ही आकाश हैं। अनंत ऋषि, मुनि इनके अंतिम किनारों की खोज करके थक गए हैं, पर ढूंढ नहीं सके। इस बात पर सारे वेद एकमत हैं। मुसलमान तथा ईसाईयों आदि की चारो किताबें यह कहती हैं कि कुल अठारह हज़ार आलम हैं, जिनका मूल (Origin) एक अकाल पुरख है पर सच्ची बात तो यह है कि शब्द 'हज़ार' तथा 'लाख' कुदरत की गिनती में प्रयोग नहीं किये जा सकते। क्योंकि उसकी कुदरत हज़ारों और लाखों से परे है। अकाल पुरख की

कुदरत का लेखा तब ही लिखा जा सकता है यदि लेखा हो सके। यह लेखा तो लिखा ही नहीं जा सकता। लेखा करते हुए लेखे का ही खात्मा (अंत) हो जाता है, गिनती के अक्षर ही समाप्त हो जाते हैं। हे नानक! जिस अकाल पुरख को सारे संसार में बड़ा कहा जा रहा है, वह स्वयं ही अपने आप को जानता है कि वह कितना बड़ा है। भाव वह अपनी महानता स्वयं ही जानता है।

बाईसवीं पउड़ी की शिक्षा

''पाताला पाताल लख आगासा आगास।।
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात।।
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु।।
लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु।।
नानक वडा आखीऐ आपे जाणै आपु।। २२।।''

मुस्लिम धर्मानुसार 7 पाताल है व 7 ही आकाश है। पर श्री गुरु नानक देव जी ने यहाँ परमात्मा के बेअंत रूप का वर्णन करते हुए यह बात दृढ़ करवाई है कि केवल 7 पाताल या 7 आकाश ही नहीं बल्कि अनेक आकाश व अनेक ही पाताल हैं। उसकी रचना इतनी बेअंत है कि उसका कोई हिसाब-किताब नहीं लिख सकता और यदि कोई इसका लेखा-जोखा करने की कोशिश भी करे तो गिनती के अक्षर ही समाप्त हो जाएँगे पर उसकी गिनती पूरी नहीं होगी क्योंकि उसकी रचना गिनती से परे है और इसका कोई अंत नहीं पा सकता।

परमात्मा तथा उसकी रची सृष्टि कितनी व्यापक है, इसका अनुमान परमात्मा स्वयं ही लगा सकता है।

इससे हमनें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि कभी भी उस अकाल पुरखु या उसकी सृजना का भेद प्राप्त करने का यत्न नहीं करना है क्योंकि उसकी रचना बेअंत है। इस संबंध में गुरुबाणी का भी फ़रमान है :-

''ਅੰਤ ਨ ਅੰਤਾ ਸਦਾ ਬੇਅੰਤਾ ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਊਚੋ ਊਚਾ॥'' (ਅੰਗ: 821)

''अंत न अंता सदा बेअंता कहु नानक ऊचो ऊचा।।'' (अंग: 821)

भाव : हे नानक! उस परमात्मा का कभी भी भेद (अन्त) नहीं पाया जा सकता, वह सदा ही बेअंत है, ऊँचे से भी ऊँचा है, उस जैसा और कोई नहीं।

इस संबंध में गुरुबाणी का एक और फ़रमान है :-

"ਅਚਰਜੁ ਤੇਰੀ ਕੁਦਰਤਿ ਤੇਰੇ ਕਦਮ ਸਲਾਹ॥" (ਅੰਗ: 1138)

"अचरजु तेरी कुदरति तेरे कदम सलाह।।" (अंग: 1138)

भाव : हे प्रभु! तेरी कुदरत एक आश्चर्य उत्पन्न करने वाली बाज़ी (तमाशा) है तथा तेरे शब्द रूपी चरण प्रशंसनीय हैं।

तेईसवीं पउड़ी

सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ।।
नदीआ अतै वाह पवहि समुंदि न जाणीअहि।।
समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु।।
कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसु मनहु न वीसरहि।। २३।।

उच्चारण : सालाहि—सालाह। **सुरति**—सुरत। **समुंदि**—समुंद। **जाणीअहि**—जाणीअंहि। **सालाही**—सालाहीं। **पवहि**—पवहिं। **नदीआ**—नदीआं। **साह**—शाह। **मालु**—माल। **धनु**—धन। **तुलि**—तुल। **तिसु**—तिस। **मनहु**—मनों।

पद अर्थ : सालाही—प्रशंसा योग्य परमात्मा। **सालाहि**—स्तुति गायन करके। **एती सुरति**—इतनी समझ कि अकाल पुरख कितना बड़ा है। **न पाईआ**—किसी ने नहीं पाई। **अतै**—और, तथा। **वाह**—बहने वाले नाले। **पवहि**—पड़ते हैं। **समुंदि**—समुद्र में। **न जाणीअहि**—नहीं जाने जाते। **समुंद साह सुलतान**—समुद्रों के पातशाह तथा सुल्तान। **गिरहा सेती**—पहाड़ों जितने। **तुलि**—बराबर। **न होवनी**—नहीं होते। **जे तिसु मनहु**—उस चींटी के मन में से। **न वीसरहि**—यदि तूं न भूल जाये, हे हरी!

अर्थ : प्रशंसा योग्य अकाल पुरख की महानताओं को कह-कह कर, किसी मनुष्य ने इतनी समझ नहीं पाई कि अकाल पुरख कितना बड़ा है। स्तुति गायन वाले मनुष्य उस अकाल पुरख में ऐसे लीन हो जाते हैं जैसे नदियां तथा नाले समुद्र में (पड़ते हैं, पर फिर वह अलग से पहचाने नहीं जा सकते), बीच में ही लीन हो जाते हैं और समुद्र की गहराईयां नहीं नाप सकते। समुद्रों के बादशाह तथा सुलतान जिन के खज़ानों में पहाड़ों जितने धन पदार्थों के ढेर हों, प्रभु की स्तुति गायन करने वाली एक चींटी के भी समान नहीं होते। यदि हे अकाल पुरख! उस चींटी के मन में से तूं न भूल जाये।

पाठ का उच्चारण : (1) अतै का उच्चारण अते नहीं करना।

तेईसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ।।
नदीआ अतै वाह पवहि समुंदि न जाणीअहि।।''

पिछली पउड़ीयों में यह समझाया गया था कि अकाल पुरखु व उसकी कुदरत का अंत नहीं पाया जा सकता। अब प्रश्न यह उठता है कि अगर हमने उसका अंत नहीं प्राप्त करना तो फिर हमनें कौन-से ऐसे कर्म करने हैं कि हमारे भीतर से असत्य व झूठ की दीवार टूट जाए व हम उस में अभेद हो सकें।

इसका उत्तर देते हुए सतगुरु जी इस पउड़ी में फ़रमाते हैं कि परमेश्वर की सिफत-सलाह करनी एक ऐसा उपाय है जो हमें अकाल पुरखु के साथ जोड़ देती है। **जिस प्रकार समुद्र में गिरने वाली नदियाँ व नाले उसी का ही रूप हो जाते हैं, पर उसका अंत नहीं पा सकते, इसी प्रकार वे जीवन जो उसकी सिफत सालाह करते रहते हैं, वे उसी का रूप हो जाते हैं पर उस बेअंत का अंत नहीं पा सकते।**

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमें वाहिगुरु जी की सिफत सालाह निरंतर ही करते रहना है। सिफत-सालाह की अभिव्यक्ति निरंतर आवश्यक है, इसमें रुकावट नहीं आनी चाहिए।

इस संबंध में 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों, के बचन याद आ गए। वे अक्सर कहा करते थे कि केवल वही नदियाँ व नाले समुद्र का रूप होकर पूर्णता की प्राप्ति करते हैं जो अपनी यात्रा अपने 'मूल स्वरूप अर्थात समुद्र' की तरफ निरन्तर जारी रखते हैं। जो नदियाँ व नाले रास्ते में ही रूक जाते हैं वे दुर्गन्ध जल से युक्त होकर तालाब में बदल जाते हैं।

भाई साहिब (वीर जी) के ये भी बचन थे कि मोमबत्ती से पूछा गया कि तेरा प्रकाश ऊपर की तरफ ही क्यों जा रहा है? तो मोमबत्ती ने उत्तर दिया कि मैं सूरज की अंश हूँ व उसी में समा जाना चाहती हूँ इसलिए मेरा प्रकाश ऊपर

की तरफ जा रहा है। पानी से पूछा गया कि तेरा बहाव नीचे की ओर क्यों है ? तो पानी ने उत्तर दिया कि मैं समुद्र की अंश हूँ व उसी में समा जाना चाहता हूँ। यदि मोमबत्ती का प्रकाश अपने मूल (Origin) सूरज की तरफ यात्रा करता है और पानी अपने मूल (Origin) समुद्र की तरफ यात्रा करता है तो हे मनुष्य! तू क्यों नहीं अपने मूल (Origin) परमात्मा की तरफ यात्रा करता। **याद रखना! यात्रा निरंतर जारी रहेगी तो ही तू उसी में समा सकेगा। इसलिए वे कहते थे कि गुरु के सिखो! आपने भी अपनी यात्रा अपने 'मूल' (Origin) अकाल पुरखु की तरफ निरंतर जारी रखनी है तभी गुरु प्रसाद की बदौलत आप को परमात्मा में अभेद्यता प्राप्त होगी अर्थात हम उसमें विलीन होंगे।**

इस संदर्भ में भाई वीर सिंह द्वारा रचित कविता ''इच्छा बल ते डूंघीयाँ शामां'' याद आ गई जिनकी निम्नलिखित पंक्तियाँ बहुत ही उचित (सार्थक) हैं:-

''सीने खिच जिनां ने खाधी, ओ कर आराम नहीं बैहंदे।
नेहों वाले नैनां की नींद, ओइ दिने रात पए वैहंदे।
इको लगन लगी लई जांदी, है टोर अनंत उनां दी।
वसलों उरे मुकाम न कोई, सो चाल पए नित रैहंदे।''

भाव : जिनको परमात्मा की लगन लग जाती है, वे कभी आराम से नहीं बैठते। उनकी आँखों में नींद कहां ? वे दिन रात अपने प्रिय से मिलाप के लिए तड़पते हैं क्योंकि उनकी मंजिल एक ही है-पति रूपी परमात्मा से मेल। इसके लिए वे हर समय परमात्मा को प्राप्त करने के लिए अपनी यात्रा जारी रखते हैं और मन में अरदास करते रहते हैं :

''ਹਉ ਤੁਮਰੀ ਕਰਉ ਨਿਤ ਆਸ ਪ੍ਰਭ ਮੋਹਿ ਕਬ ਗਲਿ ਲਾਵਹਿਗੇ॥''

(ਅੰਗਃ 1321)

''हउ तुमरी करउ नित आस प्रभ मोहि कब गलि लावहिगे।।''

(अंगः 1321)

दूसरी शिक्षा

''समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु।।
कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसु मनहु न वीसरहि।।''

इस पउड़ी की आखिरी पंक्तियों में गुरुदेव पिता फ़रमाते हैं कि वे राजा व महाराजा जिनके पास समुद्र व पहाड़ों जितना भी धन क्यों न हो, पर यदि वे परमात्मा को याद नहीं करते तो वे उस चींटी (गरीब प्राणी) के बराबर भी नहीं होते जो हर समय परमात्मा में लीन रहती है। क्योंकि चींटी ने वह 'नाम रूपी धन' संग्रहित किया हुआ है जो मरणोपरांत भी उसके साथ जाएगा पर राजा द्वारा संग्रहित माल धन यही रह जाएगा।

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि दुनिया की धन संपदा कमाने में हम इतने व्यस्त न हो जाएं कि हम परमात्मा को स्मरण करना ही भूल जाएँ। हमें यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि दुनिया का धन हम चाहे जितना भी संग्रहित कर लें पर शरीर त्यागने के बाद वह यही रह जाएगा और वह हमारी आत्मा के साथ नहीं जाएगा।

इस संदर्भ में गुरुबाणी का फ़रमान है:-

''ਕਾਚਾ ਧਨੁ ਸੰਚਹਿ ਮੂਰਖ ਗਾਵਾਰ॥ ਮਨਮੁਖ ਭੂਲੇ ਅੰਧ ਗਾਵਾਰ॥
ਬਿਖਿਆ ਕੈ ਧਨਿ ਸਦਾ ਦੁਖੁ ਹੋਇ॥ ਨਾ ਸਾਥਿ ਜਾਇ ਨ ਪਰਾਪਤਿ ਹੋਇ॥
ਸਾਚਾ ਧਨੁ ਗੁਰਮਤੀ ਪਾਏ॥ ਕਾਚਾ ਧਨੁ ਫੁਨਿ ਆਵੈ ਜਾਏ॥'' (ਅੰਗ: 665)

''काचा धनु संचहि मूरख गावार।। मनमुख भूले अंध गावार।।
बिखिआ कै धनि सदा दुखु होइ।। ना साथि जाइ न परापति होइ।।
साचा धनु गुरमती पाए।। काचा धनु फुनि आवै जाए।।''
(अंग: 665)

कच्चे धन की बजाय हमें सच्चा धन संग्रहित करना चाहिए। यही शिक्षा गुरुदेव पिता हमें बार-बार दे रहें हैं क्योंकि यह ऐसा धन है जो हमारे लोक-परलोक दोनों को सँवार देता है व इस सच्चे हरि-धन को कमाने का उपाय है- 'साध-संगति'। इस संदर्भ में गुरुबाणी का फ़रमान है :-

''ਹਰਿ ਧਨੁ ਸੰਚੀਐ ਭਾਈ॥ ਜਿ ਹਲਤਿ ਪਲਤਿ ਹਰਿ ਹੋਇ ਸਖਾਈ॥ ਰਹਾਉ॥
ਸਤਸੰਗਤੀ ਸੰਗਿ ਹਰਿ ਧਨੁ ਖਟੀਐ ਹੋਰ ਥੈ ਹੋਰਤੁ ਉਪਾਇ ਹਰਿ ਧਨੁ ਕਿਤੈ ਨ ਪਾਈ॥''

(ਅੰਗ: 734)

''हरि धनु संचीऐ भाई।। जि हलति पलति हरि होइ सखाई।। रहाउ।।
सतसंगती संगि हरि धनु खटीऐ होर थै होरतु उपाइ हरि धनु कितै न पाई।।''

(अंग: 734)

'नाम धन' एक ऐसा धन है जो वहाँ भी हमारा सहायक होता है जहाँ न हमारी माँ, ना पिता, न पुत्र, न मित्र, न भाई सहायक होते हैं। इस संदर्भ में गुरुबाणी का फ़रमान है :-

''ਜਹ ਮਾਤ ਪਿਤਾ ਸੁਤ ਮੀਤ ਨ ਭਾਈ॥ ਮਨ ਊਹਾ ਨਾਮੁ ਤੇਰੈ ਸੰਗਿ ਸਹਾਈ॥''

(ਅੰਗ: 264)

''जह मात पिता सुत मीत न भाई।। मन ऊहा नामु तेरे संगि सहाई।।''

(अंग: 264)

इस लिए हमें सदैव सच्चा धन संग्रहित करने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। अत: हमें सदा 'सत्संगति' करनी चाहिए क्योंकि हरि-धन की प्राप्ति का साधन केवल एक ही है - 'सत्संगति' (साध-संगति)।

चौबीसवीं पउड़ी

अंतु न सिफती कहणि न अंतु।। अंत न करणै देणि न अंतु।।
अंतु न वेखणि सुणणि न अंतु।। अंत न जापै किआ मनि मंतु।।
अंतु न जापै कीता आकारु।। अंतु न जापै पारावारु।।
अंत कारणि केते बिललाहि।। ता के अंत न पाए जाहि।।
एहु अंतु न जाणै कोइ।। बहुता कहीऐ बहुता होइ।।
वडा साहिबु ऊचा थाउ।। ऊचे ऊपरि ऊचा नाउ।।
एवडु ऊचा होवै कोइ।। तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ।।
जेवडु आपि जाणै आपि आपि।।
नानक नदरी करमी दाति।। २४।।

उच्चारण : अंतु—अंत। **कहणि**—कहन। **देणि**—देण। **वेखणि**—वेखण। **सुणणि**—सुणण। **मनि**—मन। **मंतु**—मंत। **सिफती**—सिफतीं। **आकारु**—आकार। **अंतु**—अंत। **पारावारु**—पारावार। **कारणि**—कारण। **बिललाहि**—बिललाहिं। **जाहि**—जाहिं। **एहु**—ऐह। **अंतु**—अंत। **कोइ**—कोय। **होइ**—होय। **साहिबु**—साहिब। **थाउ**—थांउ। **ऊपरि**—ऊपर। **एवडु**—एवड। **तिसु**—तिस। **सोइ**—सोय। **नाउ**—नांउ। **जेवडु**—जेवड। **आपि**—आप। **दाति**—दात।

पद अर्थ : सिफती—प्रशंसाओं का। **करणै**—बनाई हुई कुदरत का। **देणि**—देने में, वस्तुएं देने से। **न जापै**—नहीं पाया जा सकता। **मंतु**—सलाह। **पारावारु**—तट, पार और इस छोर का किनारा। **बिललाहि**—बिलखते हैं। **न पाए जाहि**—ढूंढे नहीं जा सकते। **ऐहु अंत**—यह सीमाबंदी। **बहुता होइ**—और बड़ा। **ऊचे ऊपरि ऊचा**—ऊँचे से ऊँचा। **नाउ**—नाम, शोभा। **एवडु**—इतना बड़ा। **जेवडु**—जितना बड़ा। **आपि आपि**—केवल स्वयं ही। **नदरी**—मेहर की नज़र (करने वाला हरि)। **करमी**—कृपा द्वारा। **दाति**—बख्शिश।

अर्थ : अकाल पुरख के गुणों की कोई सीमा नहीं है। गिनने से भी उसके गुणों का पारावार नहीं पाया जा सकता। गुण गिने नहीं जा सकते। अकाल पुरख की रचना तथा प्रदत्त वस्तुओं का अंत नहीं पाया जा सकता। देखने तथा सुनने से भी उसके गुणों का पारावार नहीं पाया जा सकता। उस अकाल पुरख, परमपिता परमात्मा के मन में कौन-सी सलाह है—इस बात का भी अंत नहीं पाया जा सकता। अकाल पुरख ने यह संसार (जो दिखाई दे रहा है) बनाया है, पर इसका अंत (तट, पार और इस एवं उस छोर का कोई किनारा) नहीं दिखलाई देता। कई मनुष्य अकाल पुरख की सीमाबंदी ढूंढने के लिए बिलख रहे हैं, पर उसकी सीमाबंदी का पारावार नहीं पाया जा सकता। उसका कोई अंत नहीं है। अकाल पुरख के गुणों की यह सीमाबंदी, जिसकी अनंत जीव खोज कर रहे हैं, का कोई मनुष्य पारावार नहीं पा सकता। ज्यों-ज्यों यह बात कहते जायें कि वह बड़ा है, त्यों-त्यों वह और बड़ा, और बड़ा प्रतीत होने लग जाता है। अकाल पुरख बड़ा है। उसका टिकाना ऊंचा है। उसका नाम भी ऊंचा है। यदि कोई अन्य, उस जितना बड़ा हो, वही उस ऊंचे अकाल पुरख को समझ सकता है कि वह कितना बड़ा है। अकाल पुरख स्वयं ही जानता है कि वह (स्वयं) कितना बड़ा है। हे नानक! प्रत्येक तरह की कृपा, मेहर की नज़र करने वाले अकाल पुरख की बख्शिश से ही मिलती है।

पाठ का उच्चारण : (1) करणै, जापै, कहीअै, होवै, जाणै शब्दों का उच्चारण बड़ी ऐ (ै) की मात्रा से करना है।

(2) एहु का शुद्ध उच्चारण ऐह है, ऐहो नहीं। औंकड़ अर्थात् छोटा उ (ु) की मात्रा केवल एकवचन की सूचक है जो उच्चारण के समय नहीं बुलाई जाती।

चौबीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''अंत कारणि केते बिललाहि।। ता के अंत न पाए जाहि।।
एहु अंतु न जाणै कोइ।। बहुता कहीऐ बहुता होइ।।''

गुरुदेव पिता जब इस पउड़ी में अकाल पुरखु द्वारा दी गई बख्शीशों का ज़िक्र करते हैं तो हमें समझाते हैं कि परमात्मा के मन का भेद कोई नहीं जान सकता कि उस के मन में क्या है। सतगुरु के अनुसार उसके द्वारा की गई मेहर, बख्शीश, वरदान तथा सृजनता का कोई अंत व भेद नहीं प्राप्त कर सकता। उसका भेद जानने के लिए सभी प्रयत्न करके हार गए पर उसका अंत नहीं जान पाये। जितना अधिक हम उसका वर्णन करते हैं, वह उतना ही और व्यापक प्रतीत होने लगता है।

इससे हमने यही शिक्षा प्राप्त करनी है कि हमने उसका भेद या अंत प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करना है। हमारा लक्ष्य उस अकाल पुरखु में अभेद होना है न कि उसका भेद या अंत जानना।

दूसरी शिक्षा

''वडा साहिबु ऊचा थाउ।। ऊचे ऊपरि ऊचा नाउ।।
एवडु ऊचा होवै कोइ।। तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ।।''

अकाल पुरखु सबसे ऊँचा व सर्व व्यापक है। अगर कोई अकाल पुरखु जितना महान व ऊँचा होगा तभी वह उसके गुणों को जान सकेगा।

इस सृष्टि में कोई भी व्यक्ति इतना ऊँचा या महान नहीं जो कि अकाल पुरखु का भेद प्राप्त कर सके या उसका अंत जान सके। पर यह निश्चित है कि अगर कोई विनिम्रता धारण कर ले तो आध्यात्मिक स्तर पर सबसे ऊँचा उठ जाता है। जैसा कि गुरुबाणी फ़रमान है :-

''ਆਪਸ ਕਉ ਜੋ ਜਾਣੈ ਨੀਚਾ॥ ਸੋਊ ਗਨੀਐ ਸਭ ਤੇ ਊਚਾ॥'' (ਅੰਗ: 266)
''आपस कउ जो जाणै नीचा।। सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा।।''
(अंग: 266)

पच्चीसवीं पउड़ी

बहुता करमु लिखिआ ना जाइ।। वडा दाता तिलु न तमाइ।।
केते मंगहि जोध अपार।। केतिआ गणत नहीं वीचारु।।
केते खपि तुटहि वेकार।।
केते लै लै मुकरु पाहि।। केते मूरख खाही खाहि।।
केतिआ दूख भूख सद मार।। एहि भि दाति तेरी दातार।।
बंदि खलासी भाणै होइ।। होरु आखि न सकै कोइ।।
जे को खाइकु आखणि पाइ।। ओहु जाणै जेतीआ मुहि खाइ।।
आपे जाणै आपे देइ।। आखहि सि भि केई केइ।।
जिस नो बखसे सिफति सालाह।।
नानक पातिसाही पातिसाहु।। २५।।

उच्चारण : करमु—करम। **जाइ**—जाय। **तिलु**—तिल। **तमाइ**—तमाय। **वीचारु**—वीचार। **खपि**—खप। **मंगहि**—मंगहिं। **केतिआ**—केतिआं। **मुकरु**—मुकर। **खाहि**—खाहिं। **एहि**—एह। **दाति**—दात। **केतिआ**—केतिआं। **बंदि**—बंद। **होइ**—होय। **होरु**—होर। **आखि**—आख। **कोइ**—कोय। **खाइकु**—खायक। **आखणि**—आखण। **ओहु**—ओह। **मुहि**—मुंह। **खाइ**—खाय। **जेतीआ**—जेतीआं। **देइ**—देय। **केइ**—केय। **सिफति**—सिफत। **पातिसाही**—पातशाहीं। **पातसाहु**—पातशाह। **बखसे**—बखशे।

पद अर्थ : करमु—बख्शिश। **तिलु**—तिल जितनी भी। **तमाइ**—लालच। **जोध अपार**—असंख्य शूरवीर। **खपि तुटहि**—खप खप कर नाश होते हैं। **मुकरु पाहि**—मुनकर हो जाते हैं। **दातार**—देनहार अकाल पुरख। **बंदि**—माया के मोह से। **खलासी**—छुटकारा। **भाणै**—अकाल पुरख की रज़ा में चलने से। **होरु**—रज़ा से उलट कोई और तरीका। **कोइ**—कोई मनुष्य। **खाइकु**—मूर्ख। आखणि पाइ—कहने का यत्न करे। **देइ**—देता है। **सि भि**—यह बात भी। **केई केइ**—कई मनुष्य। **पातिसाही पातिसाहु**—पातशाहों का पातशाह।

अर्थ : अकाल पुरख बहुत 'दातें' (बखशिशें) देने वाला है। उसको ज़रा भी लालच नहीं। उसकी कृपा इतनी बड़ी है कि लिखी नहीं जा सकती। अनंत शूरवीर तथा कई अन्य ऐसे हैं, जिनकी संख्या पर विचार नहीं किया जा सकता, अकाल पुरख के दर पर मांग रहे हैं। कई जीव उसकी दातों का प्रयोग करके, विकारों में ही खप खप कर नाश हो जाते हैं। अनंत जीव अकाल पुरख के दर से पदार्थ प्राप्त करके मुनकर हो जाते हैं। भाव, कभी शुक्राने में आकर, यह नहीं कहते कि सब पदार्थ, प्रभु आप स्वयं दे रहा है। अनेकों मूर्ख, पदार्थ लेकर खाते ही जाते हैं पर दातार प्रभु को याद नहीं रखते। अनेकों जीवों के भाग्य में सदा दुख, कलेश तथा भूख, मार ही लिखी है। पर हे देनहार अकाल पुरख! यह भी तेरी कृपा ही है क्योंकि इन दुखों कलेशों के कारण ही मनुष्य को रज़ा में, तेरे हुक्म में, चलने की समझ पड़ती है। माया के मोह रूपी बंधन से छुटकारा, अकाल पुरख की रज़ा (ईश्वरेच्छा) में चलने से ही होता है। रज़ा (ईश्वरेच्छा) के बिना कोई अन्य तरीका, कोई भी नहीं बता सकता कि रज़ा में चले बिना मोह से छुटकारे का कोई और साधन भी हो सकता है। भाव है, कि नहीं हो सकता। परन्तु कोई मूर्ख, माया के मोह से छुटकारे का कोई और साधन बताने का यत्न करे, तो वही जानता है जितनी चोटें वह इस मूर्खता के कारण अपने मुंह पर खाता है। भाव 'झूठ' से बचने के लिए एक ही तरीका है, कि मनुष्य 'ईश्वरेच्छा' में चले। पर यदि कोई मूर्ख कोई और तरीका ढूंढता है वह कहीं और अधिक दुखी होता है। सारे अकृतघ्न (Ungrateful) भी नहीं है। अनेकों मनुष्य यह बात भी कहते हैं कि अकाल पुरख स्वयं ही जीवों की आवश्यकताओं को जानता है और स्वयं ही नियामतें (बखशिशें) देता है। हे नानक! जिस मनुष्य को अकाल पुरख अपनी स्तुति प्रदान करता है, वह पातशाहों का पातशाह बन जाता है। स्तुति-गायन ही सबसे ऊंची दात है।

पाठ का उच्चारण : (1) 'होरि, आखि न सके कोइ।' पंक्ति में 'होर' के पश्चात विश्राम देना है, 'आखि' के पश्चात् नहीं। यहां पर 'होरि' का अर्थ कोई और तरीका है, कोई और व्यक्ति नहीं।

पच्चीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''बहुता करमु लिखिआ ना जाइ।। वडा दाता तिलु न तमाइ।।''

परमात्मा द्वारा दिए वरदान अनंत हैं, जिनका उल्लेख करना असंभव है। उसके द्वारा दिया गया निरोग शरीर ही एक ऐसा वरदान है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। हम बोल सकते हैं, देख सकते हैं, सुन सकते हैं, हाथों द्वारा कार्य कर सकते हैं, चल सकते हैं, यह कोई छोटा वरदान नहीं है।

इससे संबंधित एक छोटी सी घटना का स्मरण आ गया। एक बार एक व्यक्ति किसी गुरमुख के पास जाता है। वह व्यक्ति बहुत दिनों से भूख से ग्रसित था व उसके वस्त्र भी मैले-कुचैले व फटे थे। वह उन गुरमुख जन से प्रार्थना करता है कि मैंने बहुत दिनों से भोजन नहीं किया, मुझे भोजन करवाएँ। गुरमुख उसके लिए खाना मँगवाते हैं तथा उसे प्रभु का धन्यवाद करके भोजन करने के लिए कहते हैं। वह व्यक्ति खाने की थाली को एक ओर करके कहता है कि मैं परमात्मा का धन्यवाद क्यों करूँ। उसने मुझे दिया ही क्या है। गुरमुख उसकी तरफ देख कर मुस्करा कर कहते हैं कि ठीक है, कोई बात नहीं, चाहे तुम परमात्मा का धन्यवाद न करो पर भोजन ग्रहण कर लो। वह व्यक्ति भोजन कर लेता है। गुरमुख उसे कहते हैं कि वह थोड़े दिन उनके पास ही रुक जाए। वह रुक जाता है तथा गुरमुख उसे तीनों समय भोजन करवाते हैं व नए वस्त्र भी लेकर देते हैं। कुछ दिनों बाद उसकी सेहत भी ठीक हो जाती है व नए वस्त्र पहनकर उसे भी अच्छा लगता है।

वह गुरमुख के पास आकर उनका धन्यवाद करते हुए कहता है कि आपका बहुत धन्यवाद कि आपने मेरा ध्यान रखा, अब मुझे इज़ाज़त दीजिए, और यह भी कहता है कि यदि मेरे लायक कोई सेवा हो तो मुझे अवश्य बताना। यह सुनकर गुरमुख कहते हैं कि क्या सेवा करोगे ? वह व्यक्ति उत्तर देता है कि जो आप कहोगे वह करूँगा जी। गुरमुख कहते हैं कि दस लाख रुपए ले लो और अपनी एक आँख दे दो। वह सुनकर हैरान हो जाता है कि मैं अपनी आँख कैसे दे सकता हूँ। तो गुरमुख कहते हैं कि ठीक है, यदि आँख

नहीं दे सकते तो दस लाख के बदले एक गुर्दा दे दो। वह व्यक्ति हैरान होकर कहता है कि आप इस प्रकार की बातें क्यों कर रहे हैं ? वे गुरमुख कहते हैं कि जब तुम आए थे, तो हमने तुम्हें परमात्मा का धन्यवाद करके भोजन ग्रहण करने के लिए कहा था, तो तुमने उत्तर दिया था कि तुम परमात्मा का धन्यवाद नहीं करोगे क्योंकि उसने तुम्हें कुछ दिया ही नहीं है। क्या तुम्हें परमात्मा ने ये अनमोल वस्तुएं नहीं दी हैं, जो तुम दस-दस लाख रुपए लेकर भी देने के लिए तैयार नहीं हो। गुरमुख उसे समझाते हुए कहते हैं कि जो चीज़ें तुम इतना मूल्य लेकर भी देना नहीं चाहते वे तुम्हें परमात्मा ने मुफ्त में दी हैं और जब उसने तुम्हें यह अनमोल वस्तुएँ दी हैं, उसने नि:स्वार्थ दी तथा यह भी नहीं सोचा कि यह मनुष्य मेरा कुछ सँवारेगा भी या नहीं, यह उसके अमूल्य उपहार है।

इससे हमें यही शिक्षा ग्रहण करनी है कि जो परमात्मा हमें इतने अमूल्य वरदान नि:स्वार्थ देते हैं, तो हमें भी हर समय उनका धन्यवाद करना चाहिए और दूसरी बात यह कि जैसे परमात्मा नि:स्वार्थ से हमें अमूल्य चीज़ें देते हैं, वैसे ही हमें भी नि:स्वार्थ भाव से सबकी मदद करनी चाहिए।

दूसरी शिक्षा

''बंदि खलासी भाणै होइ।। होरु आखि न सकै कोइ।।''

यदि हम चाहते हैं कि हम बंधन-मुक्त एवं हम जीवन-मुक्त हो जाएँ तो एक यही उपाय है कि हम परमात्मा की रज़ा में ही जीवन जीना सीख लें। हमें वह जिस प्रकार भी रखे हम हर पल उसका धन्यवाद करें क्योंकि इसी से हमारा जन्म-जन्मातंरों का कर्ज़ा उतर जाता है।

गुरमुखों के वचन हैं कि हम गृहस्थी हैं, हमनें जंगलों में नहीं जाना, धूनियाँ नहीं जलानी, उल्टे नहीं लटकना। तो परमात्मा को रिझाने व उसकी कृपा प्राप्त करने का एक ही उपाय है - 'हर समय सिर्फ उसका धन्यवाद, धन्यवाद ही करना।'

परमात्मा के प्रति धन्यवाद व आभार से संबंधित एक ओर कथा स्मरण आ गई। एक बार दो व्यक्ति भक्ति कर रहे थे। उनके पास भगवान का दूत आता है और कहता है कि मैं प्रभु से मिलने जा रहा हूँ और यदि तुमने उस तक कोई संदेश भेजना है तो मुझे बताएँ।

उन दोनों व्यक्तियों ने कहा कि हमारा संदेश देकर उनसे (प्रभु से) पूछना कि वे हमें दर्शन कब देंगे। दूत वहाँ से चला जाता है और जब वो वापस आता है तो उन दोनों व्यक्तियों ने पूछा कि क्या तुमने परमात्मा को हमारा संदेश दिया था? दूत ने कहा कि मैंने संदेश दिया था, पर परमात्मा ने कहा है कि जिस वृक्ष के नीचे तुम दोनों भक्ति कर रहे हो, उसके जितने पत्ते हैं, उतने वर्ष अभी तुम्हें और भक्ति करनी होगी, तभी मैं तुमें दर्शन दूँगा। यह सुनकर पहला व्यक्ति रोष में आकर कहने लगा कि परमात्मा से कहो कि मेरे साथ हिसाब-किताब करें। मैंने इतने वर्ष उनकी तपस्या की, मुझे दर्शन क्यों नहीं देने। उसके यह कहते ही आकाशवाणी होती है कि यदि तुझे हिसाब चाहिए तो यह है कि जितने वर्ष तुम इस शिला (पत्थर) पर बैठ के भक्ति कर रहे हो, उतने ही वर्ष इस शिला को अपने सिर पर उठाओ। तभी तुम्हारा हिसाब पूरा होगा क्योंकि इस पत्थर ने भी तुम्हारा भार इतने वर्षों तक उठा के रखा है। यह सुनकर वह मनुष्य काँप उठा और कहने लगा कि चाहे मुझे दर्शन न दीजिए, पर मुझे क्षमा कर दीजिए, मेरे से यह शिला न उठवाना।

देवदूत ने दूसरे व्यक्ति को भी यही संदेश दिया कि परमात्मा तुम्हें तभी दर्शन देंगे जब तुम इस वृक्ष के पत्तों की संख्या के बराबर वर्षों तक उनकी भक्ति करोगे। यह सुनते ही दूसरा व्यक्ति खुशी से झूम उठा व भगवान के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने लगा कि हे प्रभु! तुम्हारा कोटि-कोटि धन्यवाद। तुम मुझे दर्शन तो दोगे चाहे इतने वर्ष बीत जाएँ। वह दूत पूछने लगा कि तुम इतना क्यों झूम रहे हो? परमात्मा ने तो तुम्हें अभी कितने और वर्ष भक्ति करने के लिए कहा है। तो उस व्यक्ति ने कहा कि मुझे इसी बात की खुशी है कि उसकी मुझ पर दया है, वह कभी न कभी तो मुझे दर्शन देंगे, मैं इसीलिए बार-बार उनका धन्यवादी हूँ। तभी दूत ने देखा कि परमात्मा उसी क्षण प्रकट हो जाते हैं व उस व्यक्ति को दर्शन दे देते हैं। वह व्यक्ति बार-बार प्रभु के प्रति आभार प्रकट करने लगता है। दूत ने परमात्मा से कहा कि आपने तो इसे वृक्ष के पत्तों की संख्या के बराबर वर्षों तक भक्ति करने के लिए कहा था फिर एकाएक इसे दर्शन कैसे दे दिए। उसका उत्तर देते हुए परमात्मा बोले, ''देखो! वृक्ष का कोई पत्ता ही नहीं रहा। इसके धन्यवाद-धन्यवाद करते ही वृक्ष के सारे पत्ते झड़ गए और इसे रत्ती-भर भी इंतज़ार करने की आवश्यकता नहीं पड़ी।''

इससे हमनें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि जैसे-जैसे हम परमात्मा का आभार प्रकट करते हैं वैसे-वैसे हमारा जन्म-जन्मांतरों का कर्ज़ उतर जाता है।

परमात्मा से मिलाप का एक यही उपाय है कि हर क्षण उसके प्रति धन्यवाद प्रकट करें व उसकी रज़ा में रहें।

तीसरी शिक्षा

''जिस नो बखसे सिफति सालाह।। नानक पातिसाही पातिसाहु।।''

उस परमात्मा की अनुकंपा, मेहर की बात क्या की जाए, उसकी सिफत सालाह (गुणगान) की ही इतनी अपार महिमा है कि जिस को वह (परमात्मा) अपनी सिफत सालाह (गुणगान) बख्श देता है, वो व्यक्ति तो फिर पातशाहों का पातशाह बन जाता है, जैसे कि भक्त रविदास चमड़े का कार्य करते हुए, पातशाहों के पातशाह बन गए। और चारों वर्णों के लोग उनेक चरणों पर आकर नमस्कार करने लगे। इस सम्बन्ध में गुरबाणी का फ़रमान है कि :-

''ਰਵਿਦਾਸੁ ਚਮਾਰੁ ਉਸਤਤਿ ਕਰੇ ਹਰਿ ਕੀਰਤਿ ਨਿਮਖ ਇਕ ਗਾਇ॥
ਪਤਿਤ ਜਾਤਿ ਉਤਮੁ ਭਇਆ ਚਾਰਿ ਵਰਨ ਪਏ ਪਗਿ ਆਇ॥'' (ਅੰਗਃ 733)

''रविदासु चमारु उसतति करे हरि कीरति निमख इक गाइ।।
पतित जाति उतमु भइआ चारि वरन पए पगि आइ।।'' (अंगः 733)

छब्बीसवीं पउड़ी

अमुल गुण अमुल वापार।। अमुल वापारीए अमुल भंडार।।
अमुल आवहि अमुल लै जाहि।। अमुल भाइ अमुला समाहि।।
अमुलु धरमु अमुलु दीबाणु।। अमुलु तुलु अमुलु परवाणु।।
अमुलु बखसीस अमुलु नीसाणु।। अमुलु करमु अमुलु फुरमाणु।।
अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ।।
आखि आखि रहे लिव लाइ।।
आखहि वेद पाठ पुराण।। आखहि पड़े करहि वखिआण।।
आखहि बरमे आखहि इंद।। आखहि गोपी तै गोविंद।।
आखहि ईसर आखहि सिध।। आखहि केते कीते बुध।।
आखहि दानव आखहि देव।। आखहि सुरि नर मुनि जन सेव।।
केते आखहि आखणि पाहि।। केते कहि कहि उठि उठि जाहि।।
ऐते कीते होरि करेहि।। ता आखि न सकहि केई केइ।।
जेवडु भावै तेवडु होइ।। नानक जाणै साचा सोइ।।
जे को आखै बोलु विगाड़ु।।
ता लिखीअै सिरि गावारा गावारु।। २६।।

उच्चारण : आवहि—आवहिं। **जाहि**—जाहें। **भाई**—भाय। **समाहि**—समाहिं। **अमुलु**—अमुल। **धरमु**—धर्म। **दीबाणु**—दीबाण। **तुलु**—तुल। **परवाणु**—परवाण। **बखसीस**—बखशीश। **नीसाणु**—नीशाण। **करमु**—कर्म। **फुरमाणु**—फुरमाण। **आखि**—आख। **जाइ**—जाय। **लाइ**—लाय। **अमुलु**—अमुल। **आखहि**—आखहिं। **करहि**—करहिं। **वखिआणि**—वखिआण। **गोपी**—गोपीं। **ईसर**—ईशर। **सुरि**—सुर। **आखहि**—आखहिं। **मुनि**—मुन। **आखणि**—आखण। **आखहि**—आखहिं। **उठि**—उठ। **होरि**—होर। **पाहि**—पाहिं। **आखि**—आख। **केइ**—केय। **जाहि**—जाहिं। **जेवडु**—जेवड। **तेवडु**—तेवड। **होइ**—होय। **बोलु**—बोल। **विगाड़ु**—विगाड़। **सिरि**—सिर। **सोइ**—सोय। **ता**—तां। **गावारा**—गावारां। **गावारु**—गावार।

पद अर्थ : अमुल—अमूल्य, जिसका मूल्य न पाया जा सके। **भंडार**—खज़ाने। **भाइ**—प्रेम में। **समाहि**—अकाल पुरख में लीन है। **धरमु**—नियम, कानून। **दीबाणु**—कचहिरी। **तुलु**—तोल, तराज़ू। **परवाणु**—तोलने वाला बाट (weight & measures)। **बखसीस**—रहिमत। **नीसाणु**—अकाल पुरख की कृपा का निशान। **करमु**—कृपा। **फुरमाणु**—हुकम। **अमुलो अमुलु**—अमूल्य से भी अमूल्य। **आखि आखि**—अंदाज़ा लगा लगा कर। **रहे**—थक गए हैं। **लिव लाइ**—लिव लगा कर। **आखहि**—वर्णन करते हैं। **वेद पाठ**—वेदों के मंत्र। **पड़े**—पढ़े हुए मनुष्य। **करहि वखिआण**—व्याख्यान करते हैं। **बरमे**—कई ब्रह्मा। **इंद**—इंद्र देवते। **तै**—और। **गोविंद**—कई कान्हां। **ईसर**—शिव। **कीते**—अकाल पुरख के पैदा किए हुए। **बुध**—महात्मा बुद्ध। **दानव**—राक्षस, दैत्य। **देव**—देवता लोग। **सुरि नर**—देवता स्वभाव वाले। **सेव**—सेवक। **आखणि पाहि**—कहने का यत्न करते हैं। **उठि उठि जाहि**—जहान से चले जा रहे हैं। **होरि**—अन्य बेअंत जीव। **करेहि**—यदि तूं पैदा कर दे। **केई केइ**—कोई भी मनुष्य। **जेवडु**—जितना। **भावै**—चाहता है। **तेवडु**—उतना बड़ा। **साचा सोइ**—वह सदा स्थिर रहने वाला अकाल पुरख। **बोल विगाड़ु**—बोल कर बिगाड़ने वाला, बड़बोला। **लिखीअै**—लिखा जाता है। **सिरि गावारा गावारु**—मूर्खों का मूर्ख, महामूर्ख।

अर्थ : अकाल पुरख के गुण अमूल्य हैं। भाव, गुणों का मोल नहीं पड़ सकता। इन गुणों का व्यापार करना भी अमोलक है। उन मनुष्यों का भी मूल्य नहीं पड़ सकता जो अकाल पुरख के गुणों का व्यापार करते हैं। गुणों के खज़ाने भी अमोलक हैं। उन मनुष्यों का मूल्य भी नहीं पड़ सकता जो इस व्यापार के लिए संसार में आते हैं। वह भी बहुत भाग्यवान हैं जो यह सौदा खरीद कर ले जाते हैं। जो मनुष्य अकाल पुरख के प्रेम में रमें हुए हैं और जो मनुष्य उस अकाल पुरख में लीन हुए पड़े हैं, वह भी अमोलक हैं। अकाल पुरख के कानून तथा राज दरबार अमोलक हैं। वह तराजू अमोलक है और वह बाट (weight & measures) अमोलक हैं जिससे जीवों के अच्छे बुरे कार्यों को वह तोलता है। उसकी कृपा तथा दयादृष्टि के निशान भी अमोलक हैं। अकाल पुरख की कृपा तथा हुक्म भी मूल्य से परे हैं। किसी का भी अंदाज़ा नहीं लग सकता। अकाल पुरख सब अनुमानों से परे है। उसका कोई अंदाज़ा नहीं लगा सकता।

जो मनुष्य ध्यान जोड़ कर, अकाल पुरख का अंदाज़ा लगाते हैं, वह अंत में असफल रह जाते हैं। वेदों के मंत्र तथा पुराण, अकाल पुरख का अनुमान लगाते हैं। विद्वान मनुष्य भी, जो दूसरों को उपदेश करते हैं, अकाल पुरख का वर्णन करते हैं। कई ब्रह्मा, कई इंद्र कई गोपियां और कान्हा अकाल पुरख का अंदाज़ा लगाते हैं। कई शिव तथा सिद्ध पुरुष, अकाल पुरख के पैदा किए हुए अनंत बुद्ध, राक्षस और देवता स्वभाव वाले मनुष्य, मुनी लोग तथा सेवक, अकाल पुरख का अंदाज़ा लगाते हैं। बेअंत जीव अकाल पुरख का अंदाज़ा लगा रहे हैं और बेअंत ही लगाने का प्रयत्न कर रहे हैं, बेअंत जीव अंदाज़ा लगा कर, इस संसार से चले जा रहे हैं। संसार में इतने बेअंत जीव जो इस वक्त संसार में मौजूद हैं वो भी अदाज़ा लगा रहे हैं पर हे हरि! यदि तूं और भी बेअंत जीव पैदा कर दे, तो भी कोई जीव तेरा अंदाज़ा नहीं लगा सकता। हे नानक! परमात्मा जितना चाहता है उतना ही बड़ा हो जाता है अर्थात अपनी कुदरत बढ़ा लेता है। वह सदा स्थिर रहने वाला हरि, स्वयं ही जानता है कि वह कितना बड़ा है। यदि कोई बड़बोला मनुष्य बताने लगे कि अकाल पुरख इतना बड़ा है, तो वह मनुष्य मूर्खों का भी मूर्ख गिना जाता है।

पाठ का उच्चारण : (1) बखसीस, नीसाणु, फुरमाणु शब्दों का उच्चारण बखशीश, नीशाण, फुरमाण करना है।

छब्बीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''अमुल गुण अमुल वापार।। अमुल वापारीए अमुल भंडार।।
अमुल आवहि अमुल लै जाहि।। अमुल भाइ अमुला समाहि।।''

इस पउड़ी में धन्य श्री गुरु नानक देव जी फरमाते हैं कि अकाल पुरखु के गुण अमूल्य हैं, उनका कोई मोल नहीं। इन गुणों का व्यापार करने वाले मनुष्य भी अमूल्य हैं। उसके बनाए नियम, अदालत, तराजू, तोलने वाले बाट, दया, अकाल पुरखु की बख्शीश, बख्शीश के चिह्न, आदेश आदि आदि सभी अमूल्य हैं। उसकी किसी भी वस्तु का मूल्य नहीं आँका जा सकता।

इस पउड़ी में गुरुदेव पिता ने यह भी फ़रमाया है कि वे मनुष्य भाग्यशाली होते हैं जो इन अमूल्य गुणों का व्यापार करते हैं। वे मनुष्य भी अमूल्य हैं जो उस अकाल पुरखु के प्रेम में रह कर उसी में लीन हुए रहते हैं।

इससे हमनें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हम अकाल पुरखु से अभेद होना चाहते हैं तो हमें उससे हृदय से सच्ची (साँची) प्रीत करनी होगी, जैसा कि गुरु गोबिंद सिंह जी का फ़रमान है :-

''साचु कहौ सुन लेहु सभै जिन प्रेमु कीओ तिन ही प्रभु पाइओ।।''
''साचु कहौ सुन लेहु सभै जिन प्रेमु कीओ तिन ही प्रभु पाइओ।।''

मनुष्य की जिससे प्रीत होती है वह उसकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करता है। इसी प्रकार यदि हमें परमात्मा का प्रेम प्राप्त करना है तो परमेश्वर की प्रत्येक आज्ञा का पालन करें तथा कोई भी ऐसा कार्य न करें जो गुरु की आज्ञा के विपरीत हो क्योंकि गुरु व परमात्मा एक हैं व गुरु के वचन ही परमात्मा के वचन हैं। यथा :-

''ਨਾਨਕ ਸੋਧੇ ਸਿੰਮ੍ਰਿਤਿ ਬੇਦ॥ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਗੁਰ ਨਾਹੀ ਭੇਦ॥'' (ਅੰਗ: 1142)
''नानक सोधे सिम्रिति बेद।। पारब्रहम गुर नाही भेद।।'' (अंग:

1142)

ज्यों-ज्यों हम गुरु के वचनों को मान कर जीवन में लाएँगे, त्यों-त्यों ही परमात्मा से हमारी प्रीत बढ़ती जाएगी व हम इस पदवी पर पहुँच जाएँगे, **''अमुल भाइ अमुला समाहि''** अर्थात जो मनुष्य अकाल पुरखु से प्रेम करते हैं, वह अकाल पुरखु में ही लीन रहते हैं और अमूल्य हैं।

गुरु साहिब ने गुरुबाणी में यह भी फ़रमाया है कि परमात्मा के प्रति प्रीत ही सच्ची प्रीत है एवं सर्वश्रेष्ठ है और यदि परमात्मा के अलावा हम किसी अन्य को आपने हृदय स्थल पर रखेंगे तो यह निरर्थक है। जैसे :-

''प्रीति प्रीति गुरीआ मोहन लालना॥ जपि मन गोबिंद एकै अवरु नही को लेखै संत लागु मनहि छाडु दुबिधा की कुरीआ॥'' (अंगः 746)

''प्रीति प्रीति गुरीआ मोहन लालना।।
जपि मन गोबिंद एकै अवरु नही को लेखै
संत लागु मनहि छाडु दुबिधा की कुरीआ ।।'' (अंगः 746)

भक्त रविदास जी ने भी इस संबंध में फ़रमाया है :

''साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी॥ तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी॥''
(अंगः 659)

''साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी।। तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी।।''
(अंगः 659)

अर्थात सभी तरफ से मन को मोड़ कर हमने उसे परमात्मा की ओर ही ले कर जाना है। **जैसे-जैसे हमारी परमात्मा के प्रति प्रीत बढ़ेगी, वह और गहरी होती जाएगी और फिर धीरे-धीरे उसकी कृपा से हम उसी में अभेद हो जाएँगे।**

दूसरी शिक्षा

''अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ।।''

इस पउड़ी में गुरुदेव पिता जी ने यह फरमाया है कि वह अकाल पुरखु इतनी बड़ी हस्ती है कि कई ब्रह्मा, कई इंद्र, कई गोपियाँ व कई कृष्ण भी उसका अन्त प्राप्त नहीं कर सकते। वे भी अंत प्राप्त करने की कोशिश में थक गए। वह अकाल पुरखु सभी मनुष्यों से भिन्न है तथा उसका कोई आज तक आदि-अंत नहीं प्राप्त कर सका है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमने जीवन में कभी भी उस परमात्मा का, उसकी बख्शीशों का, उसकी दया व मेहर का अंत प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करना है क्योंकि यह हम मनुष्यों के वश से दूर की बात है।

इस पउड़ी में गुरु नानक देव जी ने हमें सावधान करते हुए यहाँ तक कह दिया कि यदि कोई बातूनी (ज्यादा बोलने वाला मनुष्य) यह दावा करे कि उसने अकाल पुरखु का रहस्य जान लिया है तो वह महामूर्ख है। **''ਜੇ ਕੋ ਆਖੈ ਬੋਲੁ ਵਿਗਾੜੁ॥ ਤਾ ਲਿਖੀਐ ਸਿਰਿ ਗਾਵਾਰਾ ਗਾਵਾਰੁ॥'' ''जे को आखै बोलु विगाड़ु।। ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारु।।''**

सताईसवीं पउड़ी

सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले।।
वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे।।
केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे।।
गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे।।
गावहि चितु गुपतु लिखि जाणहि लिखि लिखि धरमु वीचारे।।
गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे।।
गावहि इंद इदासणि बैठे देवतिआ दरि नाले।।
गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे।।
गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे।।
गावनि पंडित पड़नि रखीसर जुगु जुगु वेदा नाले।।
गावहि मोहणीआ मनु मोहनि सुरगा मछ पइआले।।
गावनि रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले।।
गावहि जोध महाबल सूरा गावहि खाणी चारे।।
गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे।।
सेई तुधुनो गावहि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले।।
होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे।।
सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई।।
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई।।
रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिन उपाई।।
करि करि वेखै कीता आपणा जिव तिस दी वडिआई।।
जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई।।
सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई।। २७।।

उच्चारण : दरु—दर। **घरु**—घर। **जितु**—जित। **समाले**—समालें। **असंखा**—असंखां। **सिउ**—सिउं। **पउणु**—पउण। **बैसंतरु**—बैसंतर। **धरमु**—धर्म। **चितु**—चित। **गुपतु**—गुपत। **लिखि**—लिख। **गावहि**—गावहिं। **जाणाहि**—जाणहिं। **गावहि**—गावहिं। **ईसरु**—ईशर। **सोहनि**—

सोहन। **देवतिआ**—देवतिआं। **दरि**—दर। **अंदरि**—अंदर। **गावनि**—गावन। **गावहि**—गावहिं। **गावनि**—गावन। **पंडित**—पंडत। **पढ़नि**—पढ़न। **जुगु**—जुग। **मोहनि**—मोहन। **वेदा**—वेदां। **गावनि**—गावन। **ऊपाए**—उपाए। **अठसठि**—अठसठ। **करि**—कर। **गावहिं**—गावहिं। **महाबल**—महांबल। **तुधु**—तुध। **भावनि**—भावन। **होरि**—होर। **गावनि**—गावन। **चिति**—चित। **आवनि**—आवन। **नानकु**—नानक। **गावहि**—गावहिं। **सचु**—सच्च। **साहिबु**—साहिब। **जाइ**—जाय। **जिनि**—जिन। **नाई**—नाईं। **करि**—कर। **जिनि**—जिन। **रंगी रंगी**—रंगीं रंगीं। **भाती**—भांतीं। **तिसु**—तिसु। **हुकमु**—हुकम। **पातिसाहु**—पातशाह। **साहा**—शाहां। **पाति**—पात। **साहिबु**—साहिब। **रहणु**—रहण।

पद अर्थ : केहा—कैसा, बड़ा आश्चर्यजनक। **समाले**—तूं संभाल कर रहा है। **नाद**—राग। **वावणहारे**—बजाने वाला। **परी सिउ**—रागणियों सहित। **कहीअनि**—कहे जाते हैं। **दुआरे**—तेरे दर पर। **बैसंतरु**—आग। **ईसरु**—शिव। **बरमा**—ब्रह्मा। **देवी**—देवियों। **सोहनि**—शोभायमान हैं। **इंद**—इंद्र देवता। **इंदासणि**—इंद्र के आसन पर। **देवितआ दर नाले**—देवताओं सहित। **विचारे**— विचार कर। **सती**—दानी। **वीर करारे**—बलशाली शूरवीर। **पढ़नि**—पढ़ते हैं। **रखीसर**—बड़े-बड़े ऋषि। **जुगु-जुग**—हरेक युग में, सदा। **वेदा नाले**—वेदों सहित। **मोहणीआ**—सुंदर स्त्रियां। **मछ**—मात लोक में। **पइआले**—पाताल में। **उपाए तेरे**—तेरे पैदा किए हुए। **अठसठि**—अठाहठ। **तीरथ नाले**—तीर्थों सहित। **जोध**—योद्धा। **महाबल**—बहुत बल वाले। **सूरा**—शूरवीर। **खाणी चारे**—चारों खाणियां, भाव सारी रचना, अंडज, जेरज, सेतज, उतभुज। **खंड**—ब्रह्मांड का टुकड़ा, भाव प्रत्येक धरती। **मंडल**—चक्र। ब्रह्मांड का एक चक्कर जिसमें एक सूर्य, एक चंद्रमा तथा एक धरती आदि गिने जाते हैं। **वरभंडा**—सारी सृष्टि। **करि-करि**—रच कर। **धारे**—टिकाए हुए, सहारे। **सेई**—वही जीव। **तुधु भावनि**—तुझे अच्छे लगते हैं। **रते**—रसे हुए। **रसाले**—रसीए। **होरि केते**—अनेकों और जीव। **मै चिति न आवनि**—मेरे चित (स्मरण) में नहीं आते। **किआ वीचारे**—क्या विचार करें। स्थिर रहने वाला, अटल। **नाई**—स्तुति। **होसी**—होगा, स्थिर रहेगा। **जाइ न**—पैदा नहीं होता। **न जासी**—न ही मरेगा। **जिनि**—जिस अकाल

पुरख ने। **रचाई**—पैदा की है। **रंगी रंगी**—कई रंगों की। **भाती**—कई किस्मों की। **करि करि**—पैदा करके। **जिनसी**—जिनसों की। **जिनि**—जिस अकाल पुरख ने। **वेखै**—संभाल करता है। **कीता आपणा**—अपना रचा हुआ संसार। **जिव**—जैसे। **वडिआई**—रज़ा। **करसी**—करेगा। **न करणा जाई**—नहीं किया जा सकता। **साहा पाति साहिबु**—शाहों का पातशाह। **रहणु**—रहना शोभा देता है। **रजाई**—अकाल पुरख की रज़ा में।

अर्थ : वह दर-घर कैसा है अर्थात बहुत ही आश्चर्यजनक है जहां बैठकर, हे निरंकार! तूं सारे जीवों की संभाल कर रहा है। तेरी इस रची हुई कुदरत में अनेकों तथा असंख्य बाजे, वाद्य तथा राग हैं, बेअंत ही जीव उन वाद्यों को बजाने वाले हैं, रागणियों सहित बेअंत ही राग गाए जा रहे हैं और अनेकों ही जीव इन रागों के गाने वाले हैं, जो तेरा गायन कर रहे हैं। हे निरंकार! पवन, पानी, अग्नि तेरा गुणगान कर रहे हैं। धर्मराज, जिसका हिन्दू मत की धार्मिक पुस्तकों में वर्णन आता है, तेरे दर पर खड़ा तेरी स्तुति कर रहा है। तथाकथित चित्र-गुप्त भी, जो जीवों के अच्छे बुरे कर्मों का लेखा लिखना जानते हैं और जिनके लिखे हुए लेखे पर धर्मराज विचार करता है, तेरे ही गुणों का गायन कर रहे हैं। हे अकाल पुरख! तथाकथित देवियाँ, शिव तथा ब्रह्मा, जो तेरे संवारे हुए हैं, तेरा गायन कर रहे हैं। कई इंद्र सिंहासन पर बैठे हुए देवताओं सहित तेरे दर पर, तेरा स्तुति गायन कर रहे हैं। सिद्ध लोग समाधियां लगा कर तुझे गा रहे हैं। साध-जन विचार कर करके तेरी स्तुति गायन कर रहे हैं। जटाधारी, दान करने वाले तथा संतोष वाले पुरुष तेरे गुण गा रहे हैं और बहुत बल वाले शूरवीर तेरी ही प्रशंसा कर रहे हैं। हे अकाल पुरख! पंडित तथा महाऋषि, जो वेदों को पढ़ते हैं, वेदों सहित तेरा गायन कर रहे हैं। सुंदर स्त्रियां जो स्वर्ग, मृत्यु लोक तथा पाताल में, भाव हर स्थान पर मनुष्य के मन को मोह लेती हैं, तेरी स्तुति गायन कर रही हैं। हे निरंकार! तेरे पैदा किए हुए रतन, अठाहठ तीर्थों सहित, तेरा गायन कर रहे हैं। बड़े बल वाले योद्धा तथा शूरवीर तेरा यश गायन कर रहे हैं। चारों ही खाणियों के जीव-जंतु तेरा गायन कर रहे हैं। सारी सृष्टि के सारे खण्ड और चक्र, जो तूने पैदा करके टिका रखे हैं, तेरा गायन करते हैं। हे अकाल पुरख! वास्तव में तो वही तेरे प्रेम में रमे हुए रसीए, भक्तजन तेरा गुण-गायन करते हैं, भाव उनकी ही गायन सफल है जो तुझे अच्छे लगते हैं। अनेकों अन्य

जीव तुझे गा रहे हैं, जो मेरे से गिने भी नहीं जा सकते। भला, नानक उसका क्या विचार कर सकता है ? जिस अकाल पुरख ने यह सृष्टि पैदा की है, वह इस समय मौजूद है, सदा रहेगा। न वह पैदा हुआ है और न ही मरेगा। वह अकाल पुरख सदा स्थिर है, वह मालिक, उसकी महानता व सच्चाई सदा ही अटल है। जिस अकाल पुरख ने कई रंगों, किस्मों और जिन्सों की माया रच दी है। वह जैसे उसकी रज़ा है, भाव जितना बड़ा वह स्वयं है उतने विशाल हृदय से संसार को रच कर, अपने पैदा किए हुए की संभाल भी कर रहा है। जो कुछ अकाल पुरख को अच्छा लगता है, वही वह करेगा। किसी जीव द्वारा अकाल पुरख को हुक्म नहीं किया जा सकता। उसको यह नहीं कह सकते—ऐसे नहीं, ऐसे कर। अकाल पुरख पातशाह है, पातशाहों का भी पातशाह है। हे नानक! जीवों को उसकी रज़ा में रहना ही शोभा देता है।

पाठ का उच्चारण : (1) 'सो दरु' दो शब्द हैं। इनका उच्चारण सोदरु इकट्ठा करना अशुद्ध है।

(2) 'सोई सोई, सदा सच, साहिब साचा, साची नाई' पंक्ति में लगे विश्रामों को ध्यान में रखकर पाठ करना चाहिए। देखिए

(3) 'पइआले' को 'पिआले' पढ़ना अशुद्ध पाठ करना है।

(4) इस पउड़ी के पाठ करने के समय 'रहरासि साहिब' वाले शब्द के पाठ के अंतर को ध्यान में रखना ज़रूरी है। (इस सम्बन्ध में देखें पृष्ठ नं. 189)

सताईसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले।।
वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे।।
केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे।।

.....

.....

गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे।।''

इस पउड़ी में गुरुदेव पिता ने फ़रमाया है कि वह दर कैसा है, वह घर कैसा है जहाँ बैठकर 'वो' (परमात्मा) हमें पालता है। इस सृष्टि में अनेक व अनगिनत वाद्य व राग हैं और असंख्य जीव उनको बजाने वाले हैं।

इसी पउड़ी में निरंकार की सिफत सालाह (गुणगान) करते हुए गुरुदेव पिता जी फरमाते है कि इस कायनात (ब्राह्मांड) में अकाल पुरखु की हस्ती इतनी बड़ी है कि उसके गुणों का व्याखान (बखान) पवन, पानी, वायु, धर्मराज, शिव, ब्रह्मा, देवगण, योद्धा आदि सभी करते हैं अर्थात उसकी आज्ञानुसार चलते हैं। इस पउड़ी में यह भी फरमाया है कि दुनिया की चारों खानियाँ (श्रेणियाँ) अंडज, जेरज, सेतज, उत्भुजि के सभी जीव उसी परमात्मा के गीत गा रहे हैं। यह सृष्टि व इस सृष्टि के सभी खंड व चक्र जोकि अकाल पुरखु की आज्ञानुसार स्थित हैं, वे सभी 'उस की' महिमा का ही गुणगान कर रहे हैं। अर्थात 'उस की' आज्ञानुसार चल रहे हैं।

इससे हमें यह शिक्षा मिलती है कि अकाल पुरखु की हस्ती सर्वोच्च है। वह असीम शक्ति से परिपूर्ण है, उसी ने दुनिया के खंड, ब्रह्मंड को अपनी शक्ति से आधार दिया है व 'उसी के' आदेशानुसार सभी गतिमान हैं।

गुरबाणी में यह भी फ़रमाया गया है कि बड़े-बड़े राजधिराज़ भी उसी अकाल पुरखु की आज्ञा के पाबंद है व संपूर्ण सृष्टि भी उसके वश में है।

अर्थात वह अकाल पुरखु इतनी बड़ी हसती है कि इस दुनिया का एक पत्ता भी उसकी मर्ज़ी के बिना नहीं हिल सकता। यथा :-

''ਜਾ ਕੈ ਵਸਿ ਖਾਨ ਸੁਲਤਾਨ॥ ਜਾ ਕੈ ਵਸਿ ਹੈ ਸਗਲ ਜਹਾਨ॥
ਜਾ ਕਾ ਕੀਆ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਹੋਇ॥ ਤਿਸ ਤੇ ਬਾਹਰਿ ਨਾਹੀ ਕੋਇ॥''

(ਅੰਗ: 182)

''जा कै वसि खान सुलतान।। जा कै वसि है सगल जहान।।
जा का कीआ सभु किछु होइ।। तिस ते बाहरि नाही कोइ।।''

(अंग: 182)

इसलिए हमने केवल एक अकाल पुरखु की ही अराधना करनी है जो कि सबसे बड़ी हस्ती है।

दूसरी शिक्षा

''होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे।।''

श्री गुरु नानक देव जी ने इस पउड़ी में परमात्मा के गुणगान करते हुए यह भी कहा है कि इस सृष्टि की उत्पत्ति की जितनी भी श्रेणियाँ हैं अर्थात जिससे सृष्टि की उत्पत्ति होती है, वे सभी 'तेरे' गीत गा रहे हैं। इस से यह बात तो पूर्णत: स्पष्ट हो जाती है कि संपूर्ण सृष्टि व उसकी उत्पत्ति करने वाली सभी श्रेणियाँ भी उसी के गीत गा रही हैं तो इस बात में कोई संदेह नहीं कि संपूर्ण कायनात में शायद ही ऐसा कोई जीव बचा हो जो उस के गुणगान न कर रहा हो। पर हम अपने गुरुदेव पिता पर न्यौछावर जाते हैं जो इतने विनम्र होकर फरमाते हैं कि हो सकता कि और भी असंख्य जीव हों (यद्यपि इस बात की कोई गुंजाइश नहीं) जो तुम्हारा गुणगान कर रहे हैं पर वे मेरी स्मरणशक्ति से बाहर हैं। इसलिए मैं तेरे गुणों का क्या बखान करूँ अर्थात तेरी रचना (बेअंत) अनंत से भी अनंत है।

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हम उस अकाल पुरखु की रचना का अंत नहीं प्राप्त कर सकते, न ही कोशिश भी करनी है, चाहे हमारे पास ज्ञान का भंडार ही क्यों न हो।

तीसरी शिक्षा

''सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई।।
है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई।।''

यदि इस संसार में कुछ चिरस्थायी अर्थात अटल है तो वह केवल अकाल पुरखु ही है तथा उसकी की गई वडिआई अर्थात् गुणगान भी अटल है। 'वह' परमात्मा पहले भी मौजूद था, 'वह' अब भी है तथा भविष्य में भी चिरस्थायी मौजूद रहेगा।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि जीवन में किसी भी मनुष्य से जुड़ने की बजाय हम उस अकाल पुरखु के साथ अपने मन को जोड़ें जो सदैव सत्य है। किसी की प्रशंसा न कर सिर्फ उस अकाल पुरख के गुणों का ही बखान करें। मनुष्य तो नश्वर है, उसकी की हुई प्रशंसा भी नश्वर है लेकिन अकाल पुरखु के प्रति की हुई स्तुति (गुणगान) सदा कायम रहेंगी क्योंकि 'वह' स्वयं अविनाशी है। अत: उसकी प्रशंसा भी अविनाशी है, उसका कोई विनाश नहीं कर सकता।

चौथी शिक्षा

''करि करि वेखै कीता आपणा जिव तिस दी वडिआई।।
जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई।।
सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई।।''

श्री गुरु नानक देव जी पउड़ी के अंत में फ़रमाते हैं कि वह अकाल पुरखु सृष्टि की रचना करके उसका पालन भी कर रहा है। वह अपनी इच्छानुसार जीवनों को चला रहा है अर्थात जो कुछ हो रहा है 'उसी की' इच्छा से ही हो रहा है और जिन जीवों को उसी की रज़ा में खुश रहना आ जाता है वह अपने भीतर की असत्य की दीवार को तोड़ देते हैं व सत्य का रूप बन कर 'उसी का' रूप हो जाते हैं।

इस से हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि परमात्मा ने हमें यह जीवन किसी विशेष पात्र के अभिनय (Role) के लिए दिया है व हमारी

भलाई इसी में है जब हम उसकी इच्छानुसार उसी पात्र का अभिनय खुशी से करें।

उदाहरणार्थ यदि परमात्मा किसी व्यक्ति को प्रोफैसर बनाना चाहता है पर वह व्यक्ति IAS अफ़सर बनना चाहता है। और इसके लिए वह दिन-रात अनथक परिश्रम करता है व बढ़िया कोचिंग भी लेता है। इस के बाद भी यदि वह बार-बार IAS की परीक्षा में फेल हो जाए तो उस निराश नहीं होना चाहिए व स्वयं को यह समझाना चाहिए कि शायद परमात्मा ने उसका सृजन ही किसी अन्य कार्य के लिए किया है और यह सोचकर वह यदि प्रोफैसर बनने के लिए निर्धारित परीक्षा पास कर लेता है तो उसे इसी बात में संतुष्ट रहना चाहिए कि परमात्मा ने उसके लिए यही लक्ष्य निर्धारित किया है और यदि मैं उसकी इच्छा के विरुद्ध IAS अफसर बन भी जाता तो हो सकता है कि मेरे से कोई गलत काम हो जाता जिससे मेरी नौकरी को भी खतरा हो सकता था। इसलिए बिना रोष किए उसे खुशी-खुशी प्रोफैसर ही बन जाना चाहिए।

इस संबंध में गुरबाणी का फ़रमान है :

"ਹੁਕਮੈ ਬੁਝਿ ਨਿਹਾਲੁ ਖਸਮਿ ਫੁਰਮਾਇਆ॥
ਜਿਸੁ ਹੋਆ ਆਪਿ ਕ੍ਰਿਪਾਲੁ ਸੁ ਨਹ ਭਰਮਾਇਆ॥
ਜੋ ਜੋ ਦਿਤਾ ਖਸਮਿ ਸੋਈ ਸੁਖੁ ਪਾਇਆ॥
ਨਾਨਕ ਜਿਸਹਿ ਦਇਆਲੁ ਬੁਝਾਏ ਹੁਕਮੁ ਮਿਤ॥
ਜਿਸਹਿ ਭੁਲਾਏ ਆਪਿ ਮਰਿ ਮਰਿ ਜਮਹਿ ਨਿਤ॥" (ਅੰਗ: 523)

"हुकमै बुझि निहालु खसमि फुरमाइआ।।
जिसु होआ आपि क्रिपालु सु नह भरमाइआ।।
जो जो दिता खसमि सोई सुखु पाइआ।।
नानक जिसहि दइआलु बुझाए हुकमु मित।।
जिसहि भुलाए आपि मरि मरि जमहि नित।।" (अंग: 523)

भाव : पति (प्रभु) ने जो आदेश दिया, उस आदेश को समझ कर वह (गुरमुख) सदा खिला (प्रसन्न) रहता है। जिस मनुष्य पर प्रभु स्वयं मेहरबान रहता है वह भटकता नहीं है। प्रभु का दिया हुआ सब कुछ उसे सुखमय प्रतीत हुआ है। हे नानक! जिस मनुष्य पर मित्र-प्रभु मेहरबान होता है, उसे अपने

आदेश पालन योग्य बुद्धि बख्शता है। पर जिस-जिस जीव को भूलों में डालता है वह नित्य जन्म-मरण के चक्र में रहते हैं।

नोट :

1. इस पउड़ी की इतनी ज्यादा महानता है कि इसे 'नितनेम' में दो बार पढ़ने का आदेश दिया गया है ताकि गुरु के सिख को दृढ़ हो जाए कि अकाल पुरखु ही सबसे महान है, सभी देवी-देवता भी उसका गुणगान करते हैं, सब कुछ 'उसके' वश में है एवं सिख को भी उसकी रज़ा में ही प्रसन्न रहना चाहिए।
2. जपु जी साहिब व रहरासि साहिब की बाणी में आए 'सोदरु' के दोनों स्वरूपों में भिन्नता है जो कि पृष्ठ नं. 189 में दर्शायी गई है।

अठाईसवीं पउड़ी

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति।।
खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति।।
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु।।
आदेसु तिसै आदेसु।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु।। २८।।

उच्चारण : संतोख—संतोख। **सरमु**—श्रम। **पतु**—पत। **करहि**—करहिं। **बिभूति**—बिभूत। **कालु**—काल। **काइआ**—कायां। **जुगति**—जुगत—जुगत। **परतीति**—प्रतीत। **मुंदा**—मुंदा। **मनि**—मन। **जगु**—जग। **जीतु**—जीत। **आदेसु**—आदेस। **आदि**—आद। **अनीलु**—अनील। **अनाहति**—अनाहत। **जुगु**—जुग। **वेसु**—वेस।

पद अर्थ : मुंदा—मुंद्राएं। **सरमु**—उद्यम, मेहनत। **पतु**—पात्र, खप्पर। श्री गुरू ग्रंथ साहिब में यह शब्द तीन रूपों में आता है 'पति', 'पत' तथा 'पतु'। पंजाबी में चाहे यह एक ही शब्द प्रतीत होता है, पर शब्द तीन अलग-अलग हैं। तीनों ही संस्कृत में से आए हैं। शब्द 'पति' का संस्कृत में अर्थ है 'खसम' या 'मालिक'। पंजाबी में इसका एक और अर्थ भी प्रयोग किया जाता है, इज्ज़त, आबरू।

शब्द 'पतु' एक-वचन है। संस्कृत में 'पात्र', जिसका अर्थ है बर्तन, प्याला, खप्पर। इसका बहु-वचन 'पत्ते' हैं पर इस संदर्भ में यह शब्द 'पत' श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में नहीं आया। **करहि**—यदि तूं बनाए। **बिभूति**—गोबर की राख। **खिंथा**—गोदड़ी। **कालु**—मृत्यु। **कुआरी काइआ**—कुवांरा शरीर, विषय विकारों से बचा हुआ शरीर, विकारों से अछूती काया। **जुगति**—योग की युक्ति, योग मत की रहित। **परतीत**—श्रद्धा, यकीन। **आई पंथी**—योगियों के १२ पंथ, सम्प्रदाय हैं, उनमें से सबसे ऊँचा 'आई पंथ' माना जाता है। **आई पंथी**—आई पंथ वाला, आई पंथ से संबंध रखने वाला। **सगल जीव**—सारे जीव। **जमाती**—एक ही पाठशाला में, एक ही श्रेणी में पढ़ने वाले, एक स्थान

पर मिल बैठने वाले सज्जन मित्र। **मनि जीतै**—मन को जीतने से, यदि मन जीता जाए। इसी प्रकार के वाक्यांश श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में अनेकों स्थानों पर आते हैं, जैसे : **नाइ विसरिऐ**—यदि प्रभु का नाम भूल जाये। **नाई मंनिऐ**—यदि नाम मान लें। **आदेसु**—प्रणाम। **तिसै**—उसी अकाल पुरख को। **आदि**—आरंभ से। **अनीलु**—कलंक रहित, पवित्र, शुद्ध स्वरूप। **अनादि**—जिसका कोई आरम्भ नहीं। **अनाहति**—नाश रहित, एक रस। **जुगु जुगु**—सदा। **वेसु**—रूप।

अर्थ : हे योगी! यदि तूं संतोष को अपनी मुंद्रा बनाए, मेहनत को खप्पर तथा झोली, और अकाल पुरख के ध्यान की राख को शरीर पर मले, मृत्यु का भय तेरी गोदड़ी हो, शरीर को विकारों से बचा कर रखना तेरे लिए योग की मर्यादा हो और श्रद्धा को तूं डंडा बनाए, तो तेरे अंदर से झूठ की दीवार टूट सकती है। जो मनुष्य सारी सृष्टि के जीवों को अपना सज्जन समझता है, असल में वही आई पंथी वाला है। यदि अपना मन जीत लिया जाए तो सारा संसार ही विजयी हो जाता है, भाव यह कि संसार की माया, परमात्मा से तोड़ नहीं सकती। अत: झूठ की दीवार को दूर करने के लिए केवल उस अकाल पुरख को प्रणाम करो, जो सब का मूल है, जो शुद्ध स्वरूप है, जिसका कोई किनारा, शुरूआत एवं पारावार (अन्त) नहीं पाया जा सकता, जो नाशरहित है और जो सदा एकरस रहता है।

पाठ का उच्चारण : (1) खिंथा कालु, कुआरी काइया जुगति, डंडा परतीति तुक का उच्चारण लगे हुए अर्ध विश्राम चिन्ह (,) का ध्यान रखकर करना है।

अठाईसवीं पउड़ी की शिक्षा

इस पउड़ी का उपदेश सिर्फ जोगियों (योगियों) के लिए ही नहीं बल्कि सारी मनुष्यता के लिए है। गुरुबाणी का फ़रमान है- **''ਪਰਥਾਇ ਸਾਖੀ ਮਹਾ ਪੁਰਖ ਬੋਲਦੇ ਸਾਝੀ ਸਗਲ ਜਹਾਨੈ ॥'' (ਅੰਗ: 647) ''परथाइ साखी महा पुरख बोलदे साझी सगल जहानै।।'' (अंग: 647)**

इस पउड़ी से हमें निम्नलिखित शिक्षाएँ मिलती हैं :-

पहली शिक्षा

''मुंदा संतोखु'' - 'संतोष' रूपी मुंदरा (कुंडल)

यदि हम अपने भीतर की असत्य की दीवार को तोड़ कर परमात्मा के साथ मिलाप करना चाहते हैं तो हमें 'संतोष रूपी आभूषण' धारण करने पड़ेंगे। जोगी (योगी) अपने कानों में आभूषण पहनते हैं जो समस्त संसार को दिखाई देते हैं। पर गुरु के सिख ने अपने मन को संतोष रूपी आभूषण धारण करवाने है जो बाह्य रूप से तो दिखाई नहीं देते पर गुरु के सिख के प्रतिदिन के व्यवहार से अवश्य ही प्रकट होते हैं। **'संतोष' के आभूषण का 'पहला स्वरूप' है कि हे परमात्मा ने जो भी मुझे दिया है, उसके लिए 'उसका' कोटि-कोटि धन्यवाद। 'संतोष' रूपी आभूषण का 'दूसरा स्वरूप' है कि जो परमात्मा ने मुझे नहीं दिया उसके लिए किसी भी प्रकार का उलाहना परमात्मा को नहीं देना व उसकी रज़ा में ही खुश रहना है।**

इस से संबंधित एक कहानी का स्मरण आ गया। यह कहानी उस समय की है कि जब गुलाम प्रथा का बहुत ज्यादा प्रचलन था। एक मालिक अपने लिए गुलाम खरीद कर लाता है व उससे पूछता है कि बताओ तुम कितने बजे उठोगे, क्या खाओगे, क्या पहनोगे, कब जागोगे आदि-आदि। इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए गुलाम कहता है कि मेरी क्या इच्छा है, मैं तो आप का खरीदा हुआ गुलाम हूँ। आप जब कहेंगे मैं जागूगाँ, जब कहेंगे खाना खाऊँगा और जो आप देंगे वही वस्त्र पहनूँगा। यह सुनकर मालिक बहुत प्रसन्न होता है। जो भी

उसका मालिक कहता था, गुलाम उसके आदेश का पालन करता था। इस प्रकार दो-तीन वर्ष व्यतीत हो जाते हैं। वह गुलाम कभी भी अपने मालिक को उलटा जबाव नहीं देता। मालिक को भी वह गुलाम बहुत अच्छा लगने लगता है क्योंकि वह उसके हुक्म को ज्यों का त्यों मानता था।

एक दिन मालिक उसे अपने साथ भ्रमण करने के लिए कहता है और वह गुलाम अपने मालिक के साथ चला जाता है क्योंकि वह कभी भी अपने मालिक को किसी भी बात के लिए मना नहीं करता था। जब वह भ्रमण के लिए जाते हैं तो मालिक एक विदेशी फल देखता है। उसने पहले कभी भी इतना सुंदर फल नहीं देखा था। मालिक सोचता है कि इसे खरीद कर वह अपने गुलाम को खिलाए क्योंकि उसने 'उसकी' बहुत सेवा की है व कभी भी किसी भी कार्य से मुँह नहीं मोड़ा। वह व्यक्ति उस फल को खरीद कर अपने हाथों से काट कर अपने गुलाम को खाने के लिए देता है। गुलाम 'सत्यवचन' कहकर उस फल को खाने लगता है। फल खाते हुए उसके चेहरे के हाव-भाव से मालिक को ऐसा प्रतीत होता है कि यह फल बहुत स्वादिष्ट है।

मालिक सोचता है कि शायद फल बहुत ही स्वादिष्ट होगा जो यह बड़े शौंक से खा रहा है। मालिक सोचता है कि बाकी फल को खाकर मैं भी इसका स्वाद चखता हूँ और जैसे ही वह बचे हुए फल को अपने मुँह में डालता है, तुरंत बाहर फेंक देता है क्योंकि वह बहुत ही कड़वा फल था। साथ ही वह अपने गुलाम से पूछता है कि तुम इस कड़वे फल को इतने स्वाद से क्यों खा रहे थे। तुमने एक बार भी इस फल को खाने से मना क्यों नहीं किया? तो उस गुलाम ने उत्तर दिया, ''मैंने जिस मालिक के द्वारा दिए इतने वर्षों से उसकी मेहर रूपी स्वादिष्ट पदार्थों का स्वाद चखा है तो आज उसके द्वारा दिए कड़वे फल को कैसे स्वाद से न ग्रहण करूँ। उसे कड़वा कैसे कहूँ।''

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि जिस परमात्मा ने हमें जीवन में इतने सुख, वरदान दिए हैं और परमात्मा न करे यदि कभी जीवन में दुख भी आ जाए तो भी अपने मालिक (अपने परमात्मा) को उलाहना नहीं देना है।

दूसरी शिक्षा

''सरमु पतु झोली'' - 'मेहनत' (उद्यम) रूपी झोली

गुरु के सिख को अपने जीवन में 'संतोष रूपी आभूषण' तो धारण करना ही है पर इसका अर्थ यह नहीं कि अपनी जीविका के लिए वह परिश्रम ही न करे। यहाँ 'सरमु' शब्द हिन्दी के शब्द 'श्रम' से लिया गया है जिसका अर्थ है - उद्यम, मेहनत। जिस प्रकार गुरु जी जोगी (योगी) को उपदेश दे रहें हैं कि तू मेहनत को अपना पात्र बना, उसी प्रकार हमारे लिए भी उपदेश है कि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हमें भी आत्म निर्भर होना है। सिख धर्म के यह तीन सुनहरी नियम हैं कि 'किरत करो', (श्रम करो) 'नाम जपो' व 'मिल बाँट कर खाओ'। इसमें 'श्रम' करने के सिद्धांत को पहले उपदेश के रूप में दृढ़ करवाया गया है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि श्रम ज़रूर करना है, जीवन में बेकार नहीं बैठना है क्योंकि श्रम हमें स्व:र्निभर बनाता है व श्रम द्वारा की गई कमाई का दसवें हिस्से के रूप में निकाला गया धन भलाई या परोपकार के लिए 'दसवन्ध' के रूप में निकालने का सिख को आदेश भी है।

तीसरी शिक्षा

''धिआन की करहि बिभूति'' - 'ध्आन' रूपी विभूति (राख)

जोगी (योगी) अपने शरीर पर विभूति (राख) लगाता है। पर गुरु के सिख ने परमात्मा के 'ध्यान रूपी विभूति' को अपनाना है।

इस का भाव यह है कि सभी कर्म करते हुए अपना 'ध्यान' निरंकार के साथ जोड़ कर रखना। इससे संबंधित भक्त नामदेव जी का एक शब्द श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में संकलित है, जिसमें वे उदाहरण देते हुए कहते हैं कि जैसे एक माँ अपने बच्चे को पालने में डाल कर स्वयं घर के कार्यों में व्यस्त रहती है, पर उसका 'ध्यान' सदा अपने बच्चे में ही रहता है वैसे ही सांसारिक कार्य करते हुए हमें भी अपना ध्यान परमात्मा के चरणों में ही रखना है :-

''ਕਹਤ ਨਾਮਦੇਉ ਸੁਨਹੁ ਤਿਲੋਚਨ ਬਾਲਕੁ ਪਾਲਨ ਪਉਢੀਅਲੇ॥
ਅੰਤਰਿ ਬਾਹਰਿ ਕਾਜ ਬਿਰੂਧੀ ਚੀਤੁ ਸੁ ਬਾਰਿਕ ਰਾਖੀਅਲੇ॥'' (ਅੰਗ: 972)
''कहत नामदेउ सुनहु तिलोचन बालकु पालन पउढीअले।।
अंतरि बाहरि काज बिरूधी चीतु सु बारिक राखीअले।।''
(अंग: 972)

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमें भी उपयुर्कत युक्ति अपनानी है व सांसारिक कार्यों में व्यस्त होने के बाद भी अपना 'ध्यान' सिर्फ परमात्मा में ही रखना है।

चौथी शिक्षा

''खिंथा कालु'' - 'मौत' रूपी गोदड़ी (चोग़ा)

जोगी (योगी) अपने शरीर पर 'खिंथा' अर्थात् (खुला, ढीला-ढाला चोग़ा) धारण करता है तथा इसी का उदाहरण देते हुए गुरु जी हमें उपदेश देते हुए कह रहें हैं कि हमने भी 'मृत्यु रूपी' ऐसा चोग़ा धारण करना है अर्थात हमें सदा यह स्मरण रहना चाहिए कि हम इस दुनिया में सिर्फ एक मेहमान की भांति है व समयानुसार यहाँ से चले जाना है।

यदि हमें मृत्यु याद रहेगी तो हम कभी भी कोई गलत कार्य नहीं करेंगे। संसार में आज लोग पाप कर्मों में इतने विलीन शायद इसीलिए हैं क्योंकि वे मृत्यु को भूल चुके हैं। जो व्यक्ति यह याद रखता है कि शरीर नश्वर है, वह परमात्मा के निर्मल भय में रह कर नाम सिमरन करेगा व भले कर्म करेगा।

इससे संबंधित गुरुमुखों से सुनी एक बात मैं आपसे सांझा कर रहा हूँ। एक बार एक व्यक्ति किसी गुरुमुख के पास जाता है व उनसे कहता कि मेरा मन न भक्ति में लगता है न भले कार्यों में। कृपा कर बताइए कि आप इतनी भक्ति व भले कार्य कैसे कर लेते हैं। गुरुमुख उस व्यक्ति की तरफ देखकर कहते हैं कि अब भला तुम्हारा मन भक्ति की ओर कैसे जाएगा क्योंकि कल सांय तो तुम्हारी मृत्यु हो जाएगी। यह सुनते ही वह व्यक्ति भयग्रस्त हो जाता है व उसका चेहरा पीला (डर से) हो जाता है। वह गुरुमुख के पास से उठ कर बाहर आ जाता है व लगातार 'वाहेगुरु, वाहेगुरु' का जाप करना आरंभ कर देता है। घर आते तक वह

परमात्मा का ही सिमरन करता है व घर पहुँचते ही एक अलग कमरे में बैठकर भक्ति आंरभ कर देता है।

उसके परिवारजन उससे पूछते हैं कि आज आप लगातार नाम ही क्यों जप रहे हो? वह उत्तर देते हुए कहता है कि आज मैं किसी गुरुमुख के पास गया था। उन्होंने मुझे बताया कि कल सांय तक मेरी मृत्यु हो जाएगी। मैंने अपने पूरे जीवन में प्रभु का नाम नहीं लिया है अत: मैं अपने बाकी बचे जीवन में परमात्मा की भक्ति व परमार्थ (भलाई) करना चाहता हूँ। अगले दिन वह परमार्थ व भक्ति में ही लीन रहता है और जैसे ही संध्याकाल आरंभ होता है, वह परिवारजनों को कहता है कि अब मैं मरने वाला हूँ मेरे पास बैठकर सारे 'वाहेगुरु, वाहेगुरु' जपो। सभी नाम जपना आरंभ कर देते हैं तभी वह गुरमुख प्यारे उनके घर आ जाते हैं। उन्हें देखते ही वह व्यक्ति प्रसन्न हो जाता है व कहता है कि अच्छा हुआ, आप भी मेरे पास आ गए हैं। आप भी मेरे पास बैठ के नाम जपिए क्योंकि मेरा आखिरी समय आ गया है।

वह गुरुमुख उसकी तरफ हँसते हुए देखकर कहते हैं कि जन्म व मृत्यु तो परमात्मा के हाथ में है। तुमने मुझे कहा था कि मेरा मन भक्ति व परमार्थ में नहीं लगता पर मुझे बताओ जब से तुमने अपनी मृत्यु के बारे में सुना है क्या तुम्हारा मन भक्ति व परमार्थ में नहीं लगा? तो वह व्यक्ति उत्तर देता है कि मृत्यु के भय से मेरा मन कहीं इधर-उधर गया ही नहीं और केवल भक्ति व परमार्थ के कार्यों में ही लगा रहा।

गुरुमुख उस व्यक्ति को कहते हैं कि यदि हम हर पल मृत्यु को याद रखेंगे तो हमेशा हमारा मन सिमरन में भी लगेगा व हम दूसरों की भलाई भी करेंगे। इसलिए हमें सदैव परमात्मा का नाम लेना चाहिए क्योंकि मौत कभी भी आ सकती है और मृत्यु के बाद हमारी आत्मा के साथ केवल परमात्मा का नाम ही हमारे साथ जाता है। जैसे कि गुरुबाणी फ़रमान है :-

''ਜਹ ਮਹਾ ਭਇਆਨ ਦੂਤ ਜਮ ਦਲੈ॥ ਤਹ ਕੇਵਲ ਨਾਮੁ ਸੰਗਿ ਤੇਰੈ ਚਲੈ॥''

(ਅੰਗ: 264)

''जह महा भइआन दूत जम दलै।। तह केवल नामु संगि तेरै चलै।।''

(अंग: 264)

पाँचवी शिक्षा

''कुआरी काइआ जुगति'' - 'कुवाँरा शरीर' अर्थात वासनओं से रहित शरीर (निर्लिप्त शरीर)

''ऐका नारी जती होए''- इस से भाव है कि शरीर को सभी व्यसनों से बचा कर रखना व 'पतिव्रता स्त्री' व 'स्त्रीवता पुरष' का जीवन व्यतीत करना।

जो सिख श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी की आज्ञानुसार 'अमृत' ग्रहण कर लेता है उसका विकारों से बचना स्वाभाविक ही है क्योंकि चार बजर कुरहितों में एक बजर कुरहित यह भी है कि पर-स्त्री, पर-पुरुष का संग नहीं करना। इसीलिए हमें हर स्थिति में 'अमृत' की दाति प्राप्त करनी है ताकि हमारा सभी व्यसनों से बचाव हो सके।

छठी शिक्षा

''डंडा परतीति''

जिस प्रकार जोगी (योगी) अपने हाथ में डंडा रखता है वैसे ही गुरु के सिख ने भी परमात्मा के ऊपर अटूट श्रद्धा व भरोसे को अपना डंडा बनाना है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी हैं कि हमनें अपना पूरा विश्वास केवल व केवल 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' के ऊपर ही रखना है। यदि हमारा पूरा भरोसा गुरु जी पर होगा तो वह भी हमारे भरोसे की लाज रखेंगे और मुँह माँगी मुरादें हमारी झोली में डालेंगे।

इससे संबंधित गुरुमुख प्यारों के बचन स्मरण आ गए। वे कहते थे कि जिस सिख की आस श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से पूरी नहीं हुई उसकी कहीं और से भी पूरी नहीं होगी।

इससे संबंधित एक साखी श्री गुरु अर्जुन देव जी के समय की है जो आपसे सांझी कर रहा हूँ। काबुल में गुरु जी के दो सिख भाई भाना जी व भाई रेख देव सिखी का प्रचार करते थे। वह सरकारी मोदी थे। वे सबकी सेवा करते थे तथा उनका व्यवहार भी बहुत अच्छा था। वे ज़रूरतमंदों की मदद करते थे तथा भूखों को भोजन खिलाते थे। उन्हें मोदीखाने में काम करते हुए पाँच वर्ष हो गए

थे। कुछ लोग चाहते थे कि मोदीखाने में काम करने का अवसर उन्हें प्राप्त हो। अत: उन्होंने षडयंत्र रच कर उनके बाट (weight) बदल दिए व शिकायत कर दी कि दोनों सिख कम तोलते हैं। नवाब ने बाट मँगवाए। दोनों सिखों ने मन में गुरु जी के समक्ष अरदास की कि उनकी लाज बच जाए। जब नवाब ने बाट को परखा तो वह सही निकले। कहते हैं जब बाट की परख की जा रही थी तो संगत में बैठे गुरु अर्जुन देव जी को किसी ने पाँच पैसे भेंट किए थे। गुरु जी वे पैसे कभी दाँयें हाथ पर रख लेते थे व कभी बाएँ हाथ पर। जब सिखों ने पूछा कि आप बार-बार ऐसा क्यों कर रहे हैं तो आपने कहा कि अपने सिखों की लाज रख रहा हूँ।

सातवीं शिक्षा

''आई पंथी सगल जमाती''

यह बात वर्णनीय है कि जोगियों (योगियों) के 12 संप्रदाए हैं तथा उनमें से सर्वोत्तम संप्रदाए (पंथ) 'आई पंथी' है। गुरु नानक देव जी उपदेश देते हुए यह बात दृढ़ करवाते हैं कि सर्वोत्तम संप्रदाए वाला मनुष्य वह नहीं जो 'आई पंथी' (योगियों का उत्तम संप्रदाए) से संबंधित हो बल्कि वह है जो समस्त मनुष्यता से प्रेम करे।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमने भी समस्त मनुष्यता से बिना भेदभाव के प्यार करना है व सबकी मदद करनी है क्योंकि अकाल पुरखु की ज्योति सबमें विद्यमान है।

आठवीं शिक्षा

''मनि जीतै जगु जीतु।।''

गुरु जी इस पउड़ी में यह शिक्षा दे रहे हैं कि जिस व्यक्ति ने अपने मन को जीत लिया, समझो उसने समस्त संसार को जीत लिया है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस चंचल मन को कैसे जीता जाए व उसकी चंचलता को कैसे रोका जाए। इसका उत्तर है कि सर्वप्रथम हमें मन के स्वभाव को समझना पड़ेगा।

इससे संबंधित एक कहानी सांझी कर रहा हूँ। एक राजा के पास एक बकरा था। उसे जितनी भी घास खिलाई जाती पर उसका पेट कभी न भरता। वह हर समय खाता ही रहता और बार-बार घास माँगता ही रहता। राजा के कर्मचारी परेशान हो जाते कि यह बकरा तो सभी से भिन्न है, सारा दिन खाता रहता है, इसका पेट कभी भरता ही नहीं। हम इसे घास खिला-खिला कर थक जाते हैं। वे राजा को कहते हैं कि इसे चाहे दिन-रात खिलाया जाए पर उसका पेट कभी भी भरता नहीं है।

राजा अपनी प्रजा में ऐलान करवा देता है कि जो व्यक्ति इसकी भूख को तृप्त कर देगा उसे इनाम दिया जाएगा। बहुत लोग उसकी क्षुधा (भूख) को शांत करने की कोशिश करते हैं, पर सब व्यर्थ जाता है। सब निराश हो चले जाते हैं। यह देख राजा फिर से ऐलान करता है कि जो व्यक्ति इसकी भूख शांत करेगा उसे मुहमाँगा इनाम दिया जाएगा।

एक व्यक्ति वहाँ आकर कहता है कि मैं इसकी भूख को शांत कर दूँगा। पर आप को इसे कुछ दिनों के लिए मेरे हवाले करना पड़ेगा। राजा मान जाता है व उस व्यक्ति को वह बकरा दे देता है। व्यक्ति उस बकरे को घर लाकर तीन निर्धारित समय पर उसकी खुराक के रूप में उसे घास डालता है। बकरा अपनी पुरानी आदत के अनुसार जब और घास माँगता है तो वह व्यक्ति उसे थोड़ी सी घास खिलाता है पर साथ ही उसके सिर पर डंडे से प्रहार करता है। बार-बार ऐसा करने पर बकरे को पता लग जाता है कि जब भी मैं तीन निर्धारत समय से ज्यादा समय पर घास खाऊँगा तो सिर पर डंडे से प्रहार होगा। इस भय से वह निर्धारित समय के ईलावा घास खाना बंद कर देता है। कुछ समय पश्चात वह उसे राजा के पास ले जाता है तथा कहता है कि मैंने इसकी भूख को शांत कर दिया है। इसे extra घास खिलाकर देखिए यह नहीं खाएगा।

राजा के कर्मचारी उसे तीन निर्धारित समय के इलावा extra घास खिलाने का प्रयत्न करते हैं पर वह घास नहीं खाता। राजा व उसके कर्मचारी बहुत हैरान होते हैं कि बकरे ने तीन निर्धारित समय के इलावा घास खाना कैसे त्याग दिया, इसकी क्षुधा कैसे शांत हो गई। राजा उस व्यक्ति से उसकी तृप्ति का उपाय पूछता है कि उसने उसकी भूख को कैसे शांत किया? तब वह व्यक्ति उत्तर देता है कि जब भी यह बकरा निर्धारित समय के ईलावा घास खाता था

तो मैं उसके सिर पर डंडे से प्रहार करता था और ऐसा करने से यह extra घास खाना छोड़ देता था। इस प्रकार बार-बार करने से इसके मन में भय उत्पन्न हो गया कि extra घास खाने से सिर पर डंडे का प्रहार होगा व इस प्रकार इसने extra घास खाना बंद कर दिया।

हमारे मन की स्थिति भी बकरे की भाँति ही है। मन को जितनी अधिक भौतिक पदार्थों की घास डालेंगे वह और लालसा करेगा तथा कभी भी तृप्त नहीं होगा। जब इस मन को 'गुर शब्द' का प्रहार लगेगा तभी वह व्यसनों (विकारों) से दूर जाएगा तथा तृप्त भी हो जाएगा।

इस अतृप्त मन को जीतने के लिए हमें इसे गुरु के हवाले करना पड़ेगा तथा मन पर 'शब्द रूपी ज्ञान' का 'हथौड़ा' चलाना पड़ेगा तभी वह अपने निज घर में आकर टिकेगा। मन को जीतने के लिए हमें 'जपुजी साहिब' की अंतिम पउड़ी में बताई निम्न युक्ति अपनानी पड़ेगी :-

''जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु।। अहरणि मति वेदु हथीआरु।।''

अर्थात अपनी मन की मति पर गुरु के ज्ञान का हथौड़ा चलाना पड़ेगा तभी मन की रचना उत्तम रूप से रचित होगी। ज्यों-ज्यों गुरु का शब्द हमारे मन पर प्रहार करेगा, हमारे अन्दर से असत्य (झूठ) की दीवार टूट जाएगी व हम परमात्मा में गुरु कृपा द्वारा अभेद (एकीकार) हो जाएँगे।

उन्नतीसवीं पउड़ी

भुगति गिआनु दइआ भंडारणि घटि घटि वाजहि नाद।।
आपि नाथु नाथी सभ जा की रिधि सिधि अवरा साद।।
संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि लेखे आवहि भाग।।
आदेसु तिसै आदेसु।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु।। २९।।

उच्चारण : भुगति—भुगत। **गिआनु**—ज्ञान। **दइआ**—दया। **भंडारणि**—भंडारण। **घटि**—घट। **आपि**—आप। **नाथु**—नाथ। **रिधि**—रिध। **सिधि**—सिध। **संजोगु**—संजोग। **विजोगु**—विजोग। **दुइ**—दोय। **वाजहि**—वाजहिं। **चलावहि**—चलावहिं। **आवहि**—आवहिं। **आदेसु**—आदेस। **आदि**—आद। **अनीलु**—अनील। **अनादि**—अनाद। **अनाहति**—अनाहत। **जुगु**—जुग। **वेसु**—वेस।

पद अर्थ : भुगति—चूरमा। **भंडारणि**—भंडारा बांटने वाली। **घटि घटि**—प्रत्येक शरीर में। **वाजहि**—बज रहे हैं। **नाद**—शब्द। जोगी भंडारा खाते समय एक नादी बजाते हैं, जो उन्होंने अपने गले में लटकाई होती है। **आपि**—स्वयं अकाल पुरख। **नाथी**—नत्थी हुई, वश में। **सभ**—सारी। **रिधि सिधि**—रिद्धियां, सिद्धियां। **लेखे**—किए गए कर्मों के लेखे के अनुसार। **भाग**—अपने-अपने हिस्से।

अर्थ : हे जोगी! यदि अकाल पुरख की सर्वव्यापकता का ज्ञान तेरे लिए भंडारा चूरमा हो, दया इस ज्ञान रूपी भंडारण को बांटने वाली हो। प्रत्येक जीव के अंदर जो ज़िंदगी की रौ (स्वासों की गति) चल रही है, भंडारा सेवन करते समय यदि तेरे अंदर यह नादी बज रही हो, तेरा नाथ स्वयं अकाल पुरख हो, जिस के वश में सारी सृष्टि है, तो तेरे अन्दर से झूठ की दीवार टूट कर परमात्मा के साथ तेरी दूरी मिट सकती है। योग साधना के द्वारा प्राप्त की हुई रिद्धियां-सिद्धियां व्यर्थ हैं। रिद्धियां-सिद्धियां किसी और दिशा में ले जाने वाले स्वाद हैं। अकाल पुरख की 'संयोग' सत्ता तथा 'विजोग' सत्ता, दोनों मिलकर इस संसार

की क्रिया को चला रहे हैं। भाव, पिछले संयोगों के कारण परिवारों आदि के जीव यहां आकर एकत्र होते हैं। रज़ा में फिर बिछुड़ कर, अपनी-अपनी बारी से यहां से चले जाते हैं व सभी जीवों के लिए किए गए कर्मों के लेखे अनुसार दर्जा-ब-दर्जा, सुख दुख के झोंके मिल रहे हैं। यदि यह विश्वास बन जाए तो अंदर से झूठ की दीवार टूट जाती है। अत: झूठ की दीवार तोड़ने के लिए केवल अकाल पुरख को प्रणाम करो जो सब का मूल है, जो शुद्ध स्वरूप है, जिसका कोई मूल नहीं मिल सकता, जो नाश-रहित है और जो सदा एक समान रहता है।

उन्नतीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''भुगति गिआनु दइआ भंडारणि।।''

अर्थात परमात्मा की सर्वव्यापकता का 'ज्ञान रूपी भंडारा' (चूरमा) हो जिसे 'दया' के घर में बैठ कर बाँटा जाए।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि गुरु से हमें जो भी पारलौकिक ज्ञान प्राप्त होता है, उसे हमने दया रूपी भंडारे के माध्यम से सर्वत्र बाँटना है। परमात्मा के ज्ञान को हम जितना बाँटते हैं, वह बढ़ता जाता है, कभी कम नहीं होता।

इससे संबंधित गुरुबाणी का फ़रमान है :

''ਖਾਵਹਿ ਖਰਚਹਿ ਰਲਿ ਮਿਲਿ ਭਾਈ॥ ਤੋਟਿ ਨ ਆਵੈ ਵਧਦੋ ਜਾਈ॥''

(ਅੰਗ: 186)

''खावहि खरचहि रलि मिलि भाई।। तोटि न आवै वधदो जाई।।''

(अंग: 186)

आईए! हम भी समस्त सिखों को श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से प्राप्त ज्ञान से अवगत करवाएँ ताकि कोई भी सिख कब्र, श्मशान को न पूजे, वहम, भ्रम न करे, नशे व अन्य कुरीतियों से दूर रहे। हर सिख एक ऐसा आदर्श इंसान बने जिसकी जीवन-शैली को देख कर अन्य धर्मों के लोग भी सिख धर्म को अपनाएँ।

आपके साथ एक छोटी सी कहानी सांझा कर रहा हूँ। एक बार एक खोजी को ऐसे खजाने का पता चलता है जो इसके गाँव से बाहर था। वह वहाँ जाकर देखता है कि वहाँ खजाने का बहुत बड़ा भंडार है तथा उस खजाने की विशेषता यह थी कि वहाँ से जितना भी खजाना निकाल लो वह फिर से भर जाता था। कभी भी कम नहीं होता था।

उस खोजी ने जब यह देखा तो उसके मन में विचार आया कि मेरे गाँव के लोग बहुत गरीब हैं, यदि मैं उन्हें इस खज़ाने के रहस्य के बारे में बता दूँगा तो उनकी गरीबी दूर हो जाएगी व वे लोग खुशहाल ज़िंदगी जिएँगे।

खोजी को कुछ वर्षों के लिए अपने गाँव से विदेश जाना पड़ रहा था तथा उसके मन में विचार आता है कि विदेश जाने से पहले यदि मैं खज़ाने के बारे में एक पुस्तक लिखकर गाँव वालों को दे जाऊँ तो सबका भला होगा। वह किताब लिखनी आरंभ कर देता है तथा उस पुस्तक में खजाने तक पहुँचने के लिए सभी पड़ावों का भी जिक्र कर देता है। पुस्तक तैयार कर वह ग्रामवासियों को देकर कहता है कि इसे पढ़ कर अमल में उतार लेना, तुम्हारी गरीबी दूर हो जाएगी।

जब खोजी विदेश से वापिस आता है तो उसके मन में ये विचार उठ रहे थे कि अब मेरे गाँव के लोग अमीर बन चुके होंगे। किसी को कोई तंगी नहीं होगी तथा सभी खुशहाल होंगे। पर जब वह गाँव में पहुँचता है तो देखता है कि गाँव के लोग अब भी गरीबी में जीवन-यापन कर रहे हैं। उनकी यह हालत देखकर कर वह पूछता है कि जाने से पहले मैं तुम्हें एक पुस्तक देकर गया था जिसमें खज़ाने का जिक्र था। क्या तुमने उस पुस्तक को पढ़ा नहीं? तो ग्रामवासी कहते हैं कि हमने पुस्तक तो नहीं पढ़ी पर आइए आपको दिखाते हैं कि हम आपकी पुस्तक का कितना सत्कार करते हैं। वे उस अन्वेषक (खोजी) को एक कमरे में ले जाते हैं जहाँ उन्होंने उसकी पुस्तक को रेशमी कपड़ों में लपेट कर संभाल कर रखा हुआ था एवं उसके आगे हर रोज़ नत्मस्तक भी होते थे। वह यह देख कर आश्चर्यचकित रह जाता है कि उन्होंने सिर्फ उसकी पुस्तक को आदर दिया है, संभाला है पर उसमें जो लिखा है उसमें से कुछ भी नहीं पढ़ा। अगर वे उसे पढ़ कर उसके दिखाए पथ पर चलते तो आज उनकी ज़िंदगी कुछ और ही होती।

इससे हमने यह शिक्षा लेनी है कि हम श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को केवल बाहर का ही सतिकार न दें बल्कि इसमें दी हुई शिक्षाओं पर अमल करें एवं इस अमूल्य खजाने को पढ़ कर उसका लाभ उठाएँ, पाठ पर विचार करें व उसे अपने जीवन में उतारें तभी हम 'सचिआर' बन सकेंगे।

दूसरी शिक्षा

''घटि घटि वाजहि नाद''

प्रत्येक प्राणी के अंदर जो जिंदगी की लय चल रही है वह परमात्मा की 'जोत स्वरूप' ही है। परमात्मा एक होकर भी अनेक है। यदि परमात्मा एक

होकर भी अनेक है तो यह स्पष्ट है कि प्रत्येक जीव के अंदर उसी का निवास है और यदि प्रत्येक जीव के अंदर उसी का निवास है तो हमें सदैव यह बात याद रखनी चाहिए कि हम किसी भी जीव के साथ छल-कपट व धोखा न करें व न ही किसी जीव का दिल दुखाएँ क्योंकि परमात्मा का निवास हर प्राणी के भीतर है।

तीसरी शिक्षा

''आपि नाथु नाथी सभ जा की।।''

समस्त सृष्टि का स्वामी वह अकाल पुरखु स्वयं ही है तथा यह सृष्टि उसके वश में है। इसका अर्थ है कि सृष्टि उसी के आदेशानुसार चलती है तथा हमें भी उसके आदेशानुसार चलना है। उसके अलावा किसी और की पूजा नहीं करनी क्योंकि वह अकाल पुरखु सबसे बड़ा है।

चौथी शिक्षा

''रिधि सिधि अवरा साद।।''

योगी लोग योग अभ्यास द्वारा रिद्धि-सिद्धि प्राप्त कर लोगों को भ्रमित कर अपनी जय-जयकार करवाते थे। गुरु जी समझाते हैं कि योग-साधना के द्वारा प्राप्त रिद्धियाँ-सिद्धियाँ व्यर्थ हैं। ये सब हमें कुमार्ग पर ले जाती हैं तथा अहंकार को जन्म देती हैं। इससे हमने यह शिक्षा लेनी है कि हमने माया के तीन गुण— तम, रज व सत् से ऊपर उठकर चौथे पद (सहज अवस्था) तक पहुँचने के लिए प्रयत्नशील रहना है।

पाँचवी शिक्षा

''संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि लेखे आवहि भाग।।''

अकाल पुरखु की 'संयोग सत्ता' व 'वियोग सत्ता' दोनों मिलकर इस संसार की गाड़ी को चला रही हैं। पर हम यह आम देखते हैं कि अकाल पुरखु की

'संयोग सत्ता' से जब घर में बच्चे का जन्म होता है तो लोग आवश्यकता से अधिक प्रसन्न होकर फूले नहीं समाते व अकाल पुरखु का धन्यवाद करना ही भूल जाते हैं। **हमने अपने जीवन में सदा यह बात स्मरण रखनी है कि 'संयोग सत्ता' द्वारा ही हमें किसी वस्तु की प्राप्ति होती है। इसलिए इन चीज़ों की प्राप्ति पर हमें सदैव परमात्मा का धन्यवाद ही करना है तथा अहंकार नहीं करना।**

इसी प्रकार अकाल पुरखु की 'वियोग सत्ता' के फलस्वरूप जब घर में किसी की मृत्यु हो जाती है तो लोग दहाड़ मार-मार कर रुदन करते हैं, भगवान को उलाहना देते हैं, जोकि गुरुबाणी के सिद्धान्त के विपरीत है। इसलिए गुरु के सिख को सदैव दुख-सुख में एक समान रहना है क्योंकि दुख-सुख परमात्मा के आदेशानुसार ही मिलते हैं। जैसा कि गुरुबाणी का फ़रमान है :

''ਸੁਖੁ ਦੁਖੁ ਦੋਨੋ ਸਮ ਕਰਿ ਜਾਨੈ ਅਉਰੁ ਮਾਨੁ ਅਪਮਾਨਾ॥
ਹਰਖ ਸੋਗ ਤੇ ਰਹੈ ਅਤੀਤਾ ਤਿਨਿ ਜਗਿ ਤਤੁ ਪਛਾਨਾ॥'' (ਅੰਗ: 219)
''सुखु दुखु दोनो सम करि जानै अउरु मानु अपमाना।।
हरख सोग ते रहै अतीता तिनि जगि ततु पछाना।।'' (अंग: 219)

तीसवीं पउड़ी

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु।।
आदेसु तिसै आदेसु।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु।। ३०।।

उच्चारण : जुगति—जुगत। **तिनि**—तिन। **परवाणु**—परवाण। **इकु**—इक। **दीबाणु**—दीबाण। **तिसु**—तिस। **फुरमाणु**—फुरमाण। **ओहु**—ओह। **नदरि**—नदर। **एहु**—एह। **विडाणु**—विडाण। **आदेसु**—आदेस। **आदि**—आद। **अनीलु**—अनील। **अनादि**—अनाद। **अनाहति**—अनाहत। **जुगु**—जुग। **वेसु**—वेस।

पद अर्थ : एका—अकेली। **माई**—माया। **जुगति**—युक्ति से। **विआई**—प्रसूत हुई। **परवाणु**—प्रत्यक्ष। **संसारी**—घर गृहस्थी वाला। **भंडारी**—भंडार बांटने वाला। **लाए**—लगाता है। **दीबाणु**—कचहरी। **जिव**—जैसे। **तिसु**—उस अकाल पुरख को। **चलावै**—संसार का काम चलाता है। **फुरमाणु**—हुक्म। **ओहु**—अकाल पुरख। **ओना**—जीवों को। **नदरि न आवै**—दिखाई नहीं देता है। **विडाणु**—आश्चर्यजनक कौतक (खेल) ।

अर्थ : हिंदू मत में यह विचार आम प्रचलित है कि अकेली माया किसी युक्ति से प्रसूत हुई और प्रत्यक्ष तौर पर उसके तीन पुत्र हुए। उनमें से एक ब्रह्मा, घर गृहस्थी वाला बन गया भाव जीव जंतुओं को उत्पन्न करने लगा। एक विष्णु, भण्डारे का मालिक बन गया भाव जीवों को रिज़क देने का काम करने लग गया और एक शिव, कचहरी लगाता है, भाव जीवों का संहार करता है तथा मारने वाला है। गुरू साहिबान उपरोक्त मान्यता का खंडन करते हुए कहते हैं कि वास्तव में बात यह है ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी अपनी इच्छा से नहीं बल्कि अकाल पुरख के हुक्म के अनुसार ही चलते हैं अर्थात जैसे उस अकाल

पुरख को अच्छा लगता है और जैसे उसका हुक्म होता है, वैसे ही वह स्वयं संसार के काम को चला रहा है। अत: ब्रह्मा, विष्णु और शिव के हाथ में कुछ नहीं है। यह बहुत आश्चर्यजनक कौतक (खेल) है कि वह अकाल पुरख सभी जीवों को देख रहा है, पर जीवों को अकाल पुरख दिखाई नहीं देता है। अत: ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि के स्थान पर केवल उस अकाल पुरख को प्रणाम करो, जो सबका मूल है, जो शुद्ध स्वरूप है, जिसका कोई अन्त नहीं पा सकता, जो नाश रहित है और जो सदा ही एक समान रहता है। उस प्रभु से दूरी मिटाने का यही एक साधन है।

पाठ का उच्चारण : जैसे ओहु का उच्चारण ओह है, इसी प्रकार एहु का उच्चारण एह ही करना है, एहो नहीं करना।

तीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।।''

हिन्दू धर्म के अनुसार ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों संसार की कार चलाते हैं। गुरु साहिब ने इस उपर्युक्त मान्यता के प्रति इस तरह फ़रमाया है कि ब्रह्मा, विष्णु व महेश भी जो संसार की कार चलाते हैं वह अकाल पुरखु के आदेशानुसार ही सब कार्य करते हैं न कि अपनी मर्जी से।

इससे हमने यह शिक्षा लेनी है कि सिख ने केवल अकाल पुरखु को ही मानना है क्योंकि अकाल पुरखु ही सबसे बड़ी हस्ती है।

दूसरी शिक्षा

''ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु।।''

अर्थात वह मालिक सब जीवों को देख रहा है पर हैरानगी की बात है कि प्राणियों को वह दिखाई नहीं देता। अगर सभी प्राणियों को भी वह अकाल पुरखु दिखाई देता होता तो दुनिया में कोई भी गलत काम नहीं होता।

इससे संबंधित एक कहानी आप से सांझी कर रहा हूँ। एक संन्यासी था। उसके पास बहुत सी जायदाद थी। उसके अनेक शिष्य थे पर उनमें से दो शिष्य उसके बहुत करीब थे।

संन्यासी जब भी अपने शिष्यों को उपदेश देता तो एक बात को हर बार दोहराता कि ''परमात्मा हर जगह मौजूद है तथा वे प्रत्येक क्षण हमें देख रहा है।'' इस प्रकार उपदेश देते हुए कई वर्ष व्यतीत हो गए। पर वह संन्यासी हर बार उपदेश देते हुए यही बात दृढ़ करवाता था कि ''भगवान हर जगह है तथा हर क्षण हमें देख रहा है।''

जब संन्यासी वृद्ध हो गया तथा काफी बीमार रहने लगा तो उसे यह महसूस हुआ कि उसका आखिरी समय अब नजदीक है। उसने सोचा कि यदि अपने जीवित रहते अपने दोनों प्रिय शिष्यों में से किसी एक को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दूँ तो बहुत अच्छा होगा। यह सोचकर संन्यासी ने उनकी परीक्षा लेने का विचार किया ताकि उसे ज्ञात हो कि जो उपदेश व प्रतिदिन उनको दृढ़ करवाता है वे उस पर कितना चलते हैं।

इसके लिए संन्यासी ने दो कबूतर मँगवाए। इसके बाद उसने अपने दोनों शिष्यों को पास बुलाकर कहा कि तुम दोनों में से एक को मैं अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता हूँ पर इसके लिए तुम्हें मेरी एक शर्त को पूरा करना है। तुम दोनों ये एक-एक कबूतर ले लो और इसे वहाँ ले जाकर मारना है जहाँ तुम्हें कोई न देख रहा हो। तुम दोनों में से जो इसे मार कर मेरे पास पहले पहुँच जाएगा, उसी को मैं अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दूंगा।

वे दोनों शिष्य कबूतर को लेकर एकान्त में चले गए। एक शिष्य ने कुछ दूरी पर एक सुनसान जगह देखी। वहाँ लोगों का आना जाना नहीं था। उसने वहाँ कबूतर को मार दिया व बहुत शीघ्रता से संन्यासी के पास वापिस आ गया।

दूसरा शिष्य बहुत दूर एक जंगल में चला गया। वहाँ जाकर उसने देखा कि यहाँ कोई नहीं देख रहा है पर जैसे ही वह कबूतर को मारने लगता है तभी उसे ख्याल आता है कि संन्यासी ने तो वहाँ मारने के लिए कहा था जहाँ कोई न देख रहा हो। परन्तु यह कबूतर तो मुझे देख रहा है व मैं भी इसे देख रहा हूँ। यह ध्यान आते ही उसने अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली व इससे पहले कबूतर की भी आँखों पर पट्टी बाँध दी ताकि वे दोनों एक दूसरे को न देख सकें। जैसे ही वह उसे मारने की कोशिश करने लगा तो उसे संन्यासी के यह वचन याद आ गए कि ''परमात्मा हर स्थान पर है तथा सदैव तुम्हें देख रहा है।''

ये सब स्मरण में आते ही वह कबूतर को मारे बिना संन्यासी के पास पहुँच जाता है। संन्यासी उससे पूछते हैं कि तुमने इस कबूतर को मारा क्यों नहीं? शिष्य उत्तर देता है कि आपने ही कहा था कि इसे वहाँ मारना जहाँ कोई तुम्हें देख न रहा हो। पर गुरुवर इस संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं है जहाँ ईश्वर मौजूद न हो। अतः मैं इस कबूतर को नहीं मार सका। यह सुनकर वह संन्यासी बहुत प्रसन्न होते हैं तथा कहते हैं कि तुमने मेरे उपदेशों

को अपने जीवन में पूर्णत: उतारा है, अत: मैं बहुत प्रसन्न हूँ व तुम्हें अपना उत्तराधिकारी घोषित करता हूँ।

इस कहानी से हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमें परमात्मा को हर स्थान पर, हर समय अपने अंग-संग ही महसूस करना है। और अगर इस बात को अपने भीतर दृढ़ कर लें तो कभी गलत कार्य हमारे हाथों से नहीं हो पाएगा।

इक्तीसवीं पउड़ी

आसणु लोइ लोइ भंडार।।
जो किछु पाइआ सु एका वार।।
करि करि वेखै सिरजणहारु।।
नानक सचे की साची कार।।
आदेसु तिसै आदेसु।।
आदि अनीलु अनादि अनाहति
जुगु जुगु एको वेसु।। ३१ ।।

उच्चारण : आसणु—आसण। **लोइ**—लोए। **किछु**—किछ। **पाइआ**—पाया। **करि**—कर। **सिरजणहारु**—सिरजणहार। **नानकु**—नानक।

पद अर्थ : आसणु—टिकाना। **लोइ लोइ**—हरेक भवन में। **पाइआ**—उस अकाल पुरख ने डाल दिया है। **करि करि**—जीवों को पैदा कर कर के। **वेखै**—संभाल करता है। **साची**—सदा अटल रहने वाली।

अर्थ : अकाल पुरख के भंडारों का टिकाना प्रत्येक भवन में है, अर्थात हरेक भवन में अकाल पुरख के भंडारे चल रहे हैं। जो कुछ अकाल पुरख ने उन भंडारों में डाला है, एक बार में ही डाल दिया है अर्थात् उसके भंडारे असीमित हैं। सृष्टि को पैदा करने वाला अकाल पुरख जीवों को पैदा करके उनकी संभाल भी कर रहा है। हे नानक! सदा स्थिर रहने वाले अकाल पुरख, ईश्वर, की सृष्टि की संभाल करने वाली यह क्रिया सदा अटल है, भाव त्रुटि रहित है। अत: केवल उस अकाल पुरख ईश्ववर को प्रणाम करो जो सबका मूल है, जो शुद्ध स्वरूप है, जिसका कोई मूल नहीं, जो नाश रहित है और जो सदा ही एक समान रहता है। यही है तरीका, जिससे उस प्रभु से दूरी मिटाई जा सकती है।

इक्तीसवीं पउड़ी की शिक्षा

''आसणु लोइ लोइ भंडार।। जो किछु पाइआ सु एका वार।।
करि करि वेखै सिरजणहारु।। नानक सचे की साची कार।।''

अर्थात जब जीवात्मा इस संसार में आता है तो परमात्मा उसके पालन-पोषण का पूरा प्रबंध एक ही बार में कर देता है। वह जीवों की उत्पत्ति के साथ ही उनको संभाल भी रहा है। नानक जी कहते हैं कि सृष्टि को संभालने का अकाल पुरखु का यह नियम सदैव अटल है।

पर हैरागनी की बात यह है कि मनुष्य जोकि अपना जीवनायापन करने का सामर्थय रखता है, फिर भी चिन्तित रहता है कि मेरा गुज़ारा कैसे होगा? मेरे बच्चों का जीवन कैसे गुजरेगा? मेरी मृत्युपरांत मेरी पत्नी का हाल कैसा होगा आदि-आदि। उसे इस बात का ज्ञान ही नहीं है कि परमात्मा ने हम सब के जन्म के साथ ही हमारे भाग्य के भंडार भी एक बार में ही भेज दिए हैं। सत्य तो यह है कि जीवों के जन्म से पहले ही परमात्मा ने उनके रिज़क (भोजन) का प्रबंध किया होता है तथा जो जीव पानी में होते हैं परमात्मा वहाँ भी उन्हें भोजन उपलब्ध करवा देता है। जैसा कि गुरबाणी फरमान हैं :-

''ਨਾਨਕ ਚਿੰਤਾ ਮਤਿ ਕਰਹੁ ਚਿੰਤਾ ਤਿਸ ਹੀ ਹੇਇ॥
ਜਲ ਮਹਿ ਜੰਤ ਉਪਾਇਅਨੁ ਤਿਨਾ ਭਿ ਰੋਜੀ ਦੇਇ॥
ਓਥੈ ਹਟੁ ਨ ਚਲਈ ਨਾ ਕੋ ਕਿਰਸ ਕਰੇਇ॥
ਸਉਦਾ ਮੂਲਿ ਨ ਹੋਵਈ ਨਾ ਕੋ ਲਏ ਨ ਦੇਇ॥'' (ਅੰਗ: 955)
''नानक चिंता मति करहु चिंता तिस ही हेइ।।
जल महि जंत उपाइअनु तिना भि रोजी देइ।।
ओथै हटु न चलई ना को किरस करेइ।।
सउदा मूलि न होवई ना को लए न देइ।।'' (अंग: 955)

भाव : हे नानक! अपनी रोज़ी के लिए चिंता ना करो, यह चिंता तो उस प्रभु को स्वयं ही है। उसने जो जीव पानी में पैदा किए हैं उनको भी रिज़क दिया है। पानी में न कोई दुकान चलती है, न कोई वाही (खेती) करता है। न

वहाँ कोई सौदा करता है और न ही कोई लेन देन का व्यापार करता है फिर भी पानी में रहने वाले जीवों को भोजन मिलता रहता है।

इससे संबंधित एक कथा आपसे सांझी कर रहा हूँ। एक बार एक राजा अपने लिए एक भव्य (आलीशान) महल तैयार करवाता है जिसे बनने में कई वर्ष लग जाते हैं। गृह प्रवेश करने के समय वह एक महात्मा को बुलाता है। महात्मा (महानपुरुष) उस महल की बहुत तारीफ करते हैं। राजा स्वयं को महान दर्शाने की कोशिश करते हुए कहता है कि इस महल के बनवाने के कारण ही कई लोगों को काम (रोज़गार) मिला जिससे उनकी रोज़ी-रोटी चलती रही है। अगर मैं यह निर्माण न करवाता तो उनका जीवनयापन (गुज़ारा) न होता।

यह बात सुनकर महापुरुष को महसूस हो जाता है कि राजा अहंकार से ग्रसित है। राजा को शिक्षा देने के लिए वह राजा को कहते हैं कि अपने सेवकों को वह पत्थर तोड़ने के लिए कहें जो महल के बाहर पड़ा है। जैसे ही उन्होंने वह पत्थर तोड़ा तो उसमें से एक जीवित कीड़ा निकला जिसके मुँह में दाना था। राजा व उसके कर्मचारी यह देखकर हैरान रह जाते हैं।

महापुरुष राजा से कहते हैं कि क्या इस कीट को भी तुम्हीं अन्न दे रहे थे क्योंकि यह तुम्हारे ही महल के पत्थर से निकला है। यह सुनकर राजा बहुत शर्मिन्दा होता है। उसे ज्ञान हो जाता है कि वह किसी को भी कुछ भी देने में समर्थ नहीं है। सब जीवों का ध्यान परमात्मा ही कर रहा है, वह सब तक उनकी आजीविका (रिज़क) भी पहुंचा रहा है। अत: किसी को भी चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है। गुरुबाणी का फ़रमान है :-

"सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु काहे मन भउ करिआ॥" (अंगः 10)

''सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु काहे मन भउ करिआ।।''

(अंगः 10)

भाव : हे मन! तूं क्यों डरता है? पालनहार प्रभु हरेक जीव को स्वयं ही रिजक पहुंचाता है।

इससे हमनें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमें काम अवश्य करना है पर चिन्तित नहीं होना कि मेरा क्या होगा? क्योंकि जिस सृजनहार ने यह सृष्टि रचित की है वही उसका ध्यान भी रख रहा है और सृष्टि को संभालने का उसका यह कार्य सदा अटल है।

बत्तीसवीं पउड़ी

इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस।।
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस।।
एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस।।
सुणि गला आकास की कीटा आई रीस।।
नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस।। ३२।।

उच्चारण : होइ—होहिं। **लखु**—लख। **एकु**—एक। **नामु**—नाम। **होवहि**—होवहिं। **आखीअहि**—आखीअहिं। **एतु**—एतु। **राहि**—राह। **पति**—पत। **सुणि**—सुण। **पवड़ीआ**—पवड़ीआं। **गला**—गलां। **कीटा**—कीटां।

पद अर्थ : इक दू जीभौ—एक जुबान (जीभ) से। **होहि**—हो जाएं। **लख वीस**—बीस लाख। **गेड़ा**—चक्कर। **आखीअहि**—कहा जाये। **जगदीस (जगदीश)**—अकाल पुरख, ईश्वर। **एतु राहि**—अकाल पुरख को मिलने वाले रास्ते में। **पति पवड़ीआ**—पति को मिलने के लिए जो सीढ़ियां हैं। **चड़ीऐ**—चढ़ सकते हैं। **होइ इकीस**—अपना अपनत्व गंवा कर। **सुणि**—सुन कर। **कीटा**—चींटियों को। **नदरी**—अकाल पुरख की कृपा दृष्टि से। **पाईऐ**—पातें हैं। **कूड़ै**—झूठे मनुष्य की। **कूड़ी ठीस**—झूठी गप्प।

अर्थ : यदि एक जुबान (जीभ) से लाख जुबानें (जीभें) हों जाएं और लाख जुबानों से बीस लाख बन जाएं, इन बीस लाख जुबानों से यदि अकाल पुरख, ईश्वर के एक नाम को लाखों बार लें, भाव यदि मनुष्य यह ख्याल करे कि मैं अपने प्रयास से इस तरह नाम सुमिरन करके अकाल पुरख ईश्वर को पा सकता हूं, तो यह झूठा अहंकार है। तो यह झूठे मनुष्य की झूठी ही गप्प है, इस रास्ते में भाव परमात्मा से दूरी समाप्त करने वाली राह में अकाल पुरख को मिलने के लिए जो सीढ़ियां हैं, उन पर अपना आप गंवा कर ही चढ़ सकते हैं। लाखों जुबानों से भी, गिनती के सुमिरन से कुछ नहीं बनता। अहं भाव दूर किए बिना यह गिनती के पाठों का प्रयास ऐसे हैं, मानो आकाश की बातें सुनकर

चींटियों को भी यह शौक आ गया हो कि हम भी आकाश पर पहुंच जाएं। हे नानक! यदि अकाल पुरख कृपा दृष्टि करे, तो ही उसको मिला जा सकता है, नहीं तो झूठे मनुष्य की अपने आप की, स्वयं की झूठी प्रशंसा करनी कि मैंने सुमिरन किया, इसलिए परमात्मा मुझे मिला है तो यह केवल झूठी गप्प ही है।

बत्तीसवीं पउड़ी की शिक्षा

''इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस।।
लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस।।
एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस।।
सुणि गला आकास की कीटा आई रीस।।
नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस।।''

जीव ने उस परमात्मा का सिमरन बार-बार करना है, लाखों-करोड़ों बार करना है क्योंकि इसी विधि से हमारा मिलाप परमात्मा से होना है। पर यदि कोई जीव इस भ्रम में रहे कि परमात्मा से उसका मिलाप सिर्फ उसके सिमरन के प्रयास से होगा तो यह उस जीव का झूठा अहंकार है। जीव व परमात्मा का जब भी मिलाप होगा वह परमात्मा की मेहर, दया से होगा न कि जीव के प्रयत्न, मेहनत द्वारा।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यदि परमात्मा से हमारा मिलाप उस की दया व मेहर से ही होना है तो हमें नाम जपने की क्या आवश्यकता है ? इसका उत्तर है कि हमने नाम सिमरन का कड़ा श्रम तो करना ही है पर यह भी याद रखना है कि इस प्रयत्न पर जब उसकी अनुकंपा (दया, मेहर) होगी तो ही हमारा मिलाप होगा।

उदाहरणार्थ कोई किसान यह कहे कि मैं गेहूँ उत्पन्न न करूँ पर मेरे घर में गेहूँ की बोरियाँ आ जाएँ तो उसकी यह सोच गलत होगी क्योंकि उसने गेहूँ पैदा करने की मेहनत तो की ही नहीं। गेहूँ तो उसी के घर ही आएगा जो उसे श्रम द्वारा उत्पन्न करेगा। इसी प्रकार उसी जीव का परमात्मा से मिलाप होगा जिसने सिमरन किया है वही परमात्मा की दया का पात्र होगा।

पर यह बात सदैव याद रखनी है कि हम जितना भी नाम सिमरन क्यों न करे, अहंकार नहीं करना, अपना (अहं) भाव गँवाना है और कभी भी यह नहीं

कहना है कि मैंने किया और मैं कर रहा हूँ। जो मनुष्य सदा 'मैं-मैं' की रट लगाते हैं, उन्हें गुरुबाणी में 'मूर्ख व गँवार' कहा गया है। यथा :-

''ਹਮ ਕੀਆ ਹਮ ਕਰਹਗੇ ਹਮ ਮੂਰਖ ਗਾਵਾਰ॥'' (ਅੰਗ: 39)

''हम कीआ हम करहगे हम मूरख गावार।।'' (अंग: 39)

इसके विपरीत जो मनुष्य आप-भाव (अहम्) गँवा कर, अपनी 'मैं' व 'मेरी' को मिटा देते हैं, उनके मुख से सदैव यह पंक्तियाँ निकलती हैं :

''ਕਬੀਰ ਨਾ ਹਮ ਕੀਆ ਨ ਕਰਹਿਗੇ ਨ ਕਰਿ ਸਕੈ ਸਰੀਰੁ॥
ਕਿਆ ਜਾਨਉ ਕਿਛੁ ਹਰਿ ਕੀਆ ਭਇਓ ਕਬੀਰੁ ਕਬੀਰੁ॥''

(ਅੰਗ: 1367)

''कबीर ना हम कीआ न करहिगे ना करि सकै सरीरु।।
किआ जानउ किछु हरि कीआ भइओ कबीरु कबीरु।।''

(अंग: 1367)

तेतीसवीं पउड़ी

आखणि जोरु चुपै नह जोरु।।
जोरु न मंगणि देणि न जोरु।।
जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु।।
जोरु न राजि मालि मनि सोरु।।
जोरु न सुरती गिआनि वीचारि।।
जोरु न जुगती छुटै संसारु।।
जिसु हथि जोरु करि वेखै सोइ।।
नानक उतमु नीचु न कोइ।। ३३।।

उच्चारण : आखणि—आखण। **जोरु**—ज़ोर। **मंगणि**—मंगण। **देणि**—देण। **जीवणि**—जीवण। **मरणि**—मरण। **राजि**—राज। **मालि**—माल। **मनि**—मन। **सोरु**—शोर। **जोरु**—ज़ोर। **गिआनि**—ज्ञान। **वीचारि**—वीचार। **संसारु**—संसार। **जिसु**—जिस। **हथि**—हथ। **करि**—कर। **सोइ**—सोय। **उतमु**—उत्तम। **नीचु**—नीच। **कोइ**—कोय।

पद अर्थ : आखणि—कहने में। **चुपै**—चुप रहने में। **जोरु**—सामर्थ्य। **सोरु**—शोर। **सुरती**—आत्मिक जागृति में। **गिआनि**—ज्ञान प्राप्त करने में। **वीचारि**—विचार करने में। **जुगती**—युक्ति में। **छुटै**—मुक्त होता है। **जिसु हथि**—जिस अकाल पुरख, ईश्वर के हाथ में। **करि वेखै**—सृष्टि को रचकर संभाल रहा है। **सोइ**—वही अकाल पुरख।

अर्थ : बोलने में तथा चुप रहने में भी हमारा अपना कोई वश नहीं है। न ही मांगने में हमारी मन मर्ज़ी चल सकती है और न ही देने में। जीवन और मरने में भी हमारी कोई सामर्थ्य काम नहीं आती है। उस राज्य तथा माल के प्राप्त करने में भी हमारा कोई ज़ोर नहीं चलता, जिस राज्य तथा माल के कारण हमारे मन में शोर होता है, अहंकार होता है। आत्मिक जागृति में, ज्ञान में और विचार में रहने की भी हमारी कोई सामर्थ्य नहीं है। उस युक्ति में रहने के लिए भी हमारा नियन्त्रण नहीं है, जिस के कारण जन्म व मरने का चक्र समाप्त हो

जाता है। वही अकाल पुरख रचना को रच कर उसकी हर प्रकार से संभाल करता है, जिस के हाथ में सारा सामर्थ्य है। हे नानक! अपने आप में न कोई मनुष्य उत्तम है और न ही नीच। भाव, जीवों को सदाचारी या दुराचारी बनाने वाला वह प्रभु स्वयं ही है, यदि सुमिरन की बरकत से यह निश्चय बन जाये, तो ही परमात्मा से जीव की दूरी दूर होती है।

पाठ का उच्चारण : नहिं, सुरतीं, जुगतीं का उच्चारण बिंदी सहित करना है। ज़ोर का उच्चारण पैर में बिंदी सहित ज़ोर करना है। 'सो' शब्द वाले 'स' जो कि पंजाबी वर्णमाला के अनुसार पैर में बिंदी लग जाने पर 'श' बन जाता है, का उच्चारण 'श' से शोर करना है।

तेतीसवीं पउड़ी की शिक्षा

''आखणि जोरु चुपै नह जोरु।। जोरु न मंगणि देणि न जोरु।।
जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु।। जोरु न राजि मालि मनि सोरु।।
जोरु न सुरती गिआनि वीचारि।। जोरु न जुगती छुटै संसारु।।
जिसु हथि जोरु करि वेखै सोइ।। नानक उतमु नीचु न कोइ।।''

जैसा कि हमने पहले पढ़ा है कि अच्छे मार्ग या बुरे मार्ग पर चलना हमारे बस में नहीं।

उदाहरणार्थ हम फ़िल्मों व नाटकों में देखते हैं कि फ़िल्म/नाटक के डायरेक्टर अलग-अलग पात्रों को अलग-अलग रोल देते हैं। इसी प्रकार अकाल पुरखु ने इस दुनिया का सृजन कर हर जीव को अलग-अलग रोल दिया हुआ है। उसने संसार को खेल बनाया है तथा वह स्वयं बाजीगर है। इस सम्बन्ध में गुरुबाणी का फ़रमान है :-

''बाजीगर डंक बजाई॥ सभ खलक तमासे आई॥'' (अंगः 655)
''बाजीगर डंक बजाई।। सभ खलक तमासे आई।।'' (अंगः 655)

इसलिए समझने वाली बात यह है कि जब स्वयं परमात्मा ने ही संसार रूपी खेल को रचा है और सभी 'उसके' (परमात्मा के) आदेशानुसार ही पात्र का अभिनय कर रहे हैं तो यह स्पष्ट है कि सब कुछ उसी के आदेशानुसार ही हो रहा है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमनें किसी को कुछ भी बुरा-भला नहीं करना, क्योंकि सब उस की बनाई कृति (रचना) है। अतः सब कुछ उस के आदेशानुसार ही सब कुछ हो रहा है।

इस संबंध में गुरुबाणी का फ़रमान है :

''ना को मूरखु ना को सिआणा॥ वरतै सभ किछु तेरा भाणा॥'' (अंगः 98)
''ना को मूरखु ना को सिआणा।। वरतै सभ किछु तेरा भाणा।।''
(अंगः 98)

चौंतीसवीं पउड़ी

राती रुती थिती वारु।। पवण पाणी अगनी पाताल।।
तिसु विचि धरती थापि रखी धरमसाल।।
तिसु विचि जीअ जुगति के रंग।। तिन के नाम अनेक अनंत।।
करमी करमी होइ वीचारु।। सचा आपि सचा दरबारु।।
तिथै सोहनि पंच परवाणु।। नदरी करमि पवै नीसाणु।।
कच पकाई ओथै पाइ।। नानक गइआ जापै जाइ।। ३४।।

उच्चारण : विचि—विच। **थापि**—थाप। **तिसु**—तिस। **जुगति**—जुगत। **राती**—रातीं। **रुती**—रुतीं। **थिती**—थितीं। **अगनी**—अगनीं। **होइ**—होय। **वीचारु**—वीचार। **आपि**—आप। **दरबारु**—दरबार। **सोहनि**—सोहन। **परवाणु**—परवाणु। **करमि**—करम। **नीसाणु**—नीशाण। **करमी**—करमीं। **पाइ**—पाय। **गइआ**—गया। **जाइ**—जाय।

पद अर्थ : धरमसाल—धर्म कमाने का स्थान। **के रंग**—कई रंगों के। **करमी करमी**—जीवों के किए हुए कर्मों के अनुसार। **सोहनि**—शोभा देते हैं। **परवाणु**—प्रत्यक्ष रूप से। **करमि**—कृपा द्वारा। **पवै नीसाणु**—निशाण पड़ जाता है। **कच**—कच्चापन। **पकाई**—पक्कापन। **पाइ**—पाई जाती है। **गइआ**—पहुँच कर ही। **जापै जाइ**—जाना जाता है।

अर्थ : इन अनेकों नामों व रंगों वाले जीवों के अपने-अपने किए कर्मों के अनुसार 'अकाल पुरख' परम पिता परमात्मा के दर पर निर्णय होता है जिसमें कोई भूल नहीं होती, क्योंकि न्याय करने वाला अकाल पुरख स्वयं सच्चा है, उसका दरबार भी सच्चा है। इस दरबार में संत जन प्रत्यक्ष तौर पर शोभायमान होते हैं और कृपा दृष्टि करने वाले परमपिता परमात्मा, अकाल पुरख की कृपा द्वारा उन संत जनों के माथे पर महानता का निशान चमकता हुआ दिखाई पड़ता है। यहां संसार में किसी का बड़ा या छोटा कहलवाना मायने नहीं रखता। असल बात तो यह है कि सभी मनुष्यों का कच्चापन व पक्कापन, ईश्वर के दर पर ही जाकर मालूम पड़ता है। हे नानक! ईश्वर के दर पर जाने से ही समझ आती है कि वास्तव में कौन पक्का है और कौन कच्चा है।

नोट : पुर्वोक्ति विचार आत्मिक राह में जीव की प्रथम अवस्था है, जहां पर यह अपने कर्त्तव्य को पहचानता है। इस आत्मिक अवस्था का नाम 'धर्म खण्ड' है।

पाठ का उच्चारण : 'नीसाणु' शब्द को, जो कि पंजाबी वर्णमाला के अनुसार 'स' के पैर के नीचे बिंदी लगने से 'श' बन जाता है, 'श' से 'नीशाण' पढ़ना है।

चौंतीसवीं पउड़ी की शिक्षा

''राती रुती थिती वार।। पवण पाणी अगनी पाताल।।
तिसु विचि धरती थापि रखी धरमसाल।।
तिसु विचि जीअ जुगति के रंग।। तिन के नाम अनेक अनंत।।
करमी करमी होइ वीचारु।। सचा आपि सचा दरबारु।।
तिथै सोहनि पंच परवाणु।। नदरी करमि पवै नीसाणु।।
कच पकाई ओथै पाइ।। नानक गइआ जापै जाइ।।''

जैसा कि इस पउड़ी के विस्तारपूर्वक दिए अर्थों में हमने पीछे पढ़ा है कि यह धरती धर्म को संचित (कमाने) का स्थान है व अपने-अपने कर्मों के अनुसार ही अकाल पुरखु के घर हमें फल मिलता है।

इस संसार में किसी मनुष्य का बड़ा या छोटा कहलवाने का कोई अर्थ नहीं। वास्तविकता यह है कि अकाल पुरख के घर जाकर ही पता लगेगा कि कौन मनुष्य असल में बड़ा है और कौन छोटा है अर्थात उसके दर पर ही पता लगेगा कि कौन पक्का है व कौन कच्चा है।

इसलिए हमें सदैव यह याद रखना चाहिए कि हम कोई भी ऐसा काम न करें जिससे अकाल पुरखु के दर पर जाकर हमें शर्मिन्दा होना पड़े क्योंकि उसकी दरगाह पर ही यह फैसला होना है कि पक्का कौन है व कच्चा कौन है? यथा : **''कच पकाई ओथै पाइ।। नानक गइआ जापै जाइ।।''**

इसलिए हमें दुनिया की झूठी प्रशंसा के पीछे लगकर कोई गलत काम नहीं करना चाहिए व केवल वही कर्म करने चाहिएँ जिससे हम परमात्मा की दरगाह पर कबूल हो सकें।

यह मानव-शरीर हमें 84 लाख योनियों के बाद प्राप्त हुआ है। अत: हमें इस सुनहिरी मौके का लाभ उठाना चाहिए।

इस संबंध में 'पंथ रत्न' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा खन्ने वाले, (वीर जी) अक्सर यह बात कहा करते थे कि मानव देह मिलना ऐसे समझो जैसे कि यह हमारा Final Match है। इससे पहले हमारे कई Quarter-final Match हुए, Semi-final Match हुए और

उसके बाद हमें परमात्मा की असीम कृपा से मानव देह प्राप्त हुई व उसने हमें Final Match में पहुँचा दिया। अब यदि हमनें इस सुनहिरी मौके का फ़ायदा न उठाया, नाम का सिमरन न किया, अच्छे कर्म न किए तो हम फिर से चौरासी लाख योनियों के चक्र में फँस जाएँगे।

'वीर जी' यह भी कहा करते थे कि कभी किसी मनुष्य ने किसी भैंस को यह नहीं कहा कि यदि तू भैंस है तो भैंस बन अर्थात भैंस वाले कर्म कर। किसी कुत्ते को यह नहीं कहा कि यदि तू कुत्ता है तो तू कुत्ते वाले कर्म कर। सभी जीव अपनी योनिनुसार अपने कर्म बिना शिक्षा के कर रहे हैं पर आश्चर्य वाली बात है कि सिर्फ इंसान को ही यह भूल गया है कि इंसान होकर इसने इंसानियत वाले कर्म करने हैं। इसीलिए उसे कहा जाता है 'तू इन्सान है, इंसान वाले कर्म कर।'

इसलिए यह बात याद रखनी है कि यदि हम इंसान हैं तो नाम जपें, बंदगी करें, नेक कर्म करें तभी परमात्मा के दर पर हम कबूल होगें।

पैंतीसवीं पउड़ी

धरम खंड का एहो धरमु।।
गिआन खंड का आखहु करमु।।
केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस।।
केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस।।
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस।।
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस।।
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस।।
केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद।।
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद।।
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु।। ३५।।

उच्चारण : धरमु—धर्म। **गिआन**—ज्ञान। **खंड**—खंड। **आखहु**—आख्हो। **करमु**—कर्म। **घाड़ति**—घाड़त। **घड़ीअहि**—घड़ीअहिं। **कान**—कान्ह। **केतीआ**—केतीआं। **भूमी**—भूमीं। **मुनि**—मुन। **अंतु**—अंत। **सुरती**—सुरतीं।

पद अर्थ : धरमु—मंतव्य। **आखहु**—वर्णन करो, समझ लो। **करमु**—काम, कर्त्तव्य। **एहो**—यही जो ऊपर बताया गया है। **केते**—अनंत। **वैसंतर**—अग्नियां। **महेस**—कई शिव। **घाड़ति घड़ीअहि**—बनावट घड़ी जा रही है। **के वेस**—कई वेषों में। **करम भूमी**—काम करने की भूमियां, धरतियां। **मेर**—मेरु पर्वत। **धू**—ध्रुव भक्त। **इंद**—इन्द्र देवता। **मंडल देस**—भवन चक्र। **बुध**—अवतार। **देवी वेस**—देवियों के पहरावे। **दानव**—राक्षस। **मुनि**—ऋषि। **रतन समुंद**—रत्न और समुद्र। **पात**—पातशाह। **नरिंद**—राजा। **सुरती**—लिव, सुरति।

अर्थ : धर्मखंड का केवल यही कर्त्तव्य है जो ऊपर बताया गया है। अब ज्ञान खंड का कर्त्तव्य भी समझ लो जो अगली पंक्तियों में हैं। परमपिता परमात्मा, अकाल पुरख की रचना में कई प्रकार की पवन, पानी तथा अग्नियां हैं, कई

कृष्ण हैं, तथा कई शिव हैं। कई ब्रह्मा पैदा किये जा रहे हैं, जिनके कई रूप, रंग तथा कई वेष हैं। अकाल पुरख, परमपिता परमात्मा की कुदरत में अनंत धरतियां हैं, अनंत मेरु पर्वत, ध्रुव भक्त तथा उनके उपदेश हैं। अनंत इंद्र देवता, अनंत चन्द्रमा, अनंत सूर्य तथा अनंत चक्र हैं। अनंत सिद्ध हैं, अनंत बुद्ध अवतार हैं, अनंत नाथ हैं और अनंत देवियों के पहरावे हैं। अकाल पुरख की रचना में अनंत देवता दैत्य हैं, अनंत मुनि हैं, अनंत प्रकार के रत्नों के समुद्र हैं। जीव रचना की अनंत खाणियां हैं, जीवों की बोलियां भी चार नहीं अनंत वाणियां हैं, अनंत पातशाह तथा राजे हैं, अनंत प्रकार के ध्यान हैं, जो जीव, मन द्वारा लगाते हैं,अनंत सेवक हैं। हे नानक! इनका कोई अंत नहीं पाया जा सकता।

नोट : सतगुरू जी पउड़ी ३४ से ३७ तक मनुष्य की आत्मिक अवस्था के पांच हिस्सों का वर्णन करते हैं : धर्म खण्ड, ज्ञान खण्ड, श्रम खण्ड, कर्म खण्ड और सच खण्ड।

इन चार पउड़ियों में यह वर्णन आता है कि प्रभु की कृपा द्वारा मनुष्य साधारण दशा से ऊँचा होकर कैसे प्रभु के संग, एक रूप हो जाता है। पहले मनुष्य दुनिया के विषय विकारों से मुड़कर 'आत्मा' की ओर झाँकता है और यह सोचता है कि मेरे जीवन का प्रयोजन क्या है, मैं संसार में क्यों आया हूं, मेरा कर्त्तव्य क्या है ? इस अवस्था में मनुष्य यह विचार करता है कि इस धरती पर जीव धर्म कमाने के लिए आये हैं। अकाल पुरख के दर पर जीवों के अपने अपने किये गए कर्मों के अनुसार निर्णय होता है। जिन गुरसिखों पर अकाल पुरख की कृपा होती है वे उसकी हजूरी में शोभायमान होते हैं। यहां पर दुनियां में, आदर या निरादर का कोई मूल्य नहीं है। वही आदर वाले हैं जो अकाल पुरख, परमपिता परमात्मा के दर पर स्वीकार्य हैं।

ज्यों-ज्यों मनुष्य की सुरति ऐसे विचारों में जुड़ती है त्यों-त्यों उसके अंत:करण से स्वार्थ की गांठ खुलती जाती है। मनुष्य पहले माया में मस्त रहने के कारण अपने आप को या अपने परिवार को ही अपना जानता था, और इससे परे अन्य किसी विचार में नहीं पड़ता था। अब जब वह अपने धर्म को पहचान जाता है, तो अपनी जानकारी को और बढ़ाने का प्रयास करता है। विद्या तथा विचार के बल पर, परमपिता परमात्मा, अकाल पुरख की अनंत प्रकृति का नक्शा आंखों के सामने लाने लग जाता है। ज्ञान की अंधेरी आ जाती

है, जिसके फल स्वरूप सब भ्रम, वहम उड़ जाते हैं। ज्यों-ज्यों अंतर्रात्मा में अध्यातम विद्या द्वारा समझ बढ़ती है, त्यों-त्यों उसे वह आनंद मिलता है जो पहले माया के पदार्थों में नहीं मिलता था। आत्मिक रास्ते में इस अवस्था का नाम 'ज्ञान खंड' है।

पर इस राह पर पड़ कर केवल यहीं पर ही जीव रुक नहीं जाता। गुरुबाणी की विचार उस को उद्यम की ओर प्रेरित करती हैं। केवल अकल से समझ लेना काफी नहीं है। मन का पहला स्वभाव, पहली बुरी आदतें केवल 'समझ' द्वारा ही नहीं हट सकतीं। इस पहली बनावट को, इन पहले संस्कारों को तोड़ कर, अंदर नवीन आकार को बनाना है, अन्दर ऊँची सुरति वाले नवीन संस्कारों को जमाना है। 'अमृत वेला' (प्रभात काल) में जागना आदि—यह परिश्रम करना है। 'ज्ञान खंड' में पहुंचा हुआ व्यक्ति ज्यों-ज्यों मेहनत करता है, ज्यों-ज्यों गुरमति वाला नया संघर्ष करता है, त्यों-त्यों उस के मन को, मानों सुंदर रूप चढ़ता है, काया कंचन जैसी होने लग जाती हैं। चारों ओर प्रकाश होने लगता है। ऊंची सुरति तथा ऊँची अकल हो जाती है। मन में जागृति आ जाती है। मनुष्य की अवस्था देवताओं तथा सिद्धों जैसी हो जाती है। यह 'श्रम खंड' है।

बस फिर क्या है! मालिक की कृपा हो जाती है। अंतर्मन में अकाल पुरख परमपिता बल भर देता है। आत्मा विकारों के कारण डोलती नहीं। बाहर भी सब जगह पर उसे वह सृजनहार ही दिखलाई देता है। मन सदा निरंकार की याद में लीन रहता है। ऐसे मनुष्यों को फिर जन्म मृत्यु का भय नहीं रहता। उनके मन में सदा खिड़ाव ही खिड़ाव रहता है। यह 'कर्म खंड' है। अर्थात वह अकाल पुरख के संग एकमेव हो जाते हैं। उस परम ज्योति की हजूरी में पहुंच जाते हैं, जो सारे जीवों की संभाल कर रहा है और जिसका हुक्म सारी ओर चल रहा है।

पैंतीसवीं पउड़ी की शिक्षा

''धरम खंड का एहो धरमु।। गिआन खंड का आखहु करमु।।
केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस।।
केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस।।
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस।।
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस।।
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस।।
केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद।।
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद।।
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु।।''

इस पउड़ी के विस्तारपूर्वक अर्थ पीछे दिए जा चुके हैं।

जब मनुष्य को इस बात की समझ आ जाती है कि मुझे मनुष्य का शरीर क्यों मिला है और बतौर मनुष्य मेरे क्या कर्त्तव्य हैं तो कर्त्तव्य की समझ आने पर मनुष्य का मन (हृदय) बड़ा विशाल हो जाता है। पहले एक छोटे से परिवार के स्वार्थ में जकड़ा यह जीव बहुत छोटे दिल वाला था जो सिर्फ अपने परिवार से ही प्रेम करता था। अब 'ज्ञान खंड' में प्रवेश करने के बाद उसे यह ज्ञान हो जाता है कि बेअंत (अपार) प्रभु का उत्पन्न किया यह अपार संसार एक बड़ा परिवार है तो वह संकीर्ण विचारों (तंग-दिल) को त्याग कर सभी से अपने परिवार की तरह ही प्रेम करने लग जाता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी में 'मोह' की तुलना कुएँ, कीचड़, फाँसी की रस्सी, महासागर व नींद से की गई है। 'मोह' एक ऐसा विकार है जिस में जीव संकीर्ण विचारों के अधीन होकर केवल अपने परिवार से ही प्रेम करता है। 'ज्ञान खंड' में प्रवेश हुए प्राणी की निशानी यह है कि वह इस संकीर्ण विचाराधारा के विकार को त्याग कर सभी प्राणियों से 'प्रेम' व 'सद्भावना' वाले शुभ गुण का निर्माण करता है और सारी सृष्टि को अपना परिवार समझता

है। यही है सच्चा ज्ञान जो हमें अकाल पुरखु के समीप ले कर जाता है।

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमें संपूर्ण संसार को परमात्मा की अंश समझना है व उसे उतना ही प्रेम करना है जितना हम अपने परिवार से करते हैं।

छत्तीसवीं पउड़ी

गिआन खंड महि गिआनु परचंडु।।
तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु।।
सरम खंड की बाणी रूपु।।
तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु।।
ता कीआ गला कथीआ ना जाहि।।
जे को कहै पिछै पछुताइ।।
तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि।।
तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि।। ३६।।

उच्चारण : गिआनु—ज्ञान। **परचंडु**—प्रचंड। **अनंदु**—अनंद। **महि**—महिं। **रूपु**—रूप। **पछताइ**—पछताय। **ता**—तां। **कथीआ**—कथीआं। **सुरति**—सुरत। **मति**—मत। **मनि**—मन। **बुधि**—बुध। **सुधि**—सुध। **सुरा**—सुरां। **सिधा**—सिधां।

पद अर्थ : महिं—में। **परचंडु**—बलवान। **नाद**—राग। **बिनोद**—तमाशे। **कोड**—कौतुक (नज़ारे)। **अनंदु**—स्वाद। **सरम खंड की**—(श्रम) उद्यम की अवस्था। **बाणी**—बनावट। **रूपु**—सुंदरता। **घाड़ति घड़ीऐ**—बनावट घड़ी जाती है। **बहुत अनूप**—बहुत सुंदर मन। **ता कीआ**—उस अवस्था को। **कथीआ ना जाहि**—कही नहीं जा सकती। **को**—कोई मनुष्य। **कहै**—वर्णन करे। **पिछै**—बताने के पश्चात्। **पछुताइ**—पछताता है। **घड़ीऐ**—घड़ी जाती है। **मनि बुधि**—मन में जागृति। **सुरा की सुधि**—देवताओं की सूझ। **सिधा की सुधि**—सिद्धों वाली अकल।

अर्थ : 'ज्ञान खंड' में (भाव, मनुष्य की ज्ञान अवस्था में) ज्ञान ही बलवान होता है। इस अवस्था में (मानों) सब राग-तमाशों का स्वाद आ जाता है। उद्यम की अवस्था की बनावट सुंदरता है। भाव, इस अवस्था में आकर मन दिनों दिन सुंदर बनना शुरू हो जाता है। इस अवस्था में नवीन बनावट के कारण, मन निर्विकार अर्थात् विकारों रहित हो जाता है। उस अवस्था की बातों

का वर्णन नहीं किया जा सकता। यदि कोई मनुष्य वर्णन करता है तो बाद में पछताता है क्योंकि वह उसका वर्णन करने में असमर्थ रहता है। उस मेहनत वाली ऊँची अवस्था में मनुष्य की सुरति तथा मति, विकसित होती है। भाव, सुरति तथा मति ऊंची हो जाती है और मन में जागृति पैदा हो जाती है। 'श्रम खंड' में देवताओं तथा सिद्धों वाली अकल मनुष्य के अंदर बन जाती है।

छत्तीसवीं पउड़ी की शिक्षा

''गिआन खंड महि गिआनु परचंडु।। तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु।। सरम खंड की बाणी रूपु।। तिथै घाड़ति घड़ीअै बहुतु अनूपु।। ता कीआ गला कथीआ ना जाहि।। जे को कहै पिछै पछुताइ।। तिथै घड़ीअै सुरति मति मनि बुधि।। तिथै घड़ीअै सुरा सिधा की सुधि।।''

इस पउड़ी के अर्थ विस्तृत रूप से पीछे दिए जा चुके हैं।

जैसे कि संसार में यदि हमें कुछ प्राप्त करना हो तो हमें कड़ी मेहनत, उद्यम की आवश्यकता होती है वैसे ही अध्यात्मवाद में भी परिश्रम की आवश्यकता होती है। यह श्रम 'शारीरिक श्रम' नहीं बल्कि 'मन के स्वभाव' को बदलने का 'श्रम' है।

इससे संबंधित भक्त कबीर जी का भी यह शब्द जी गुरु ग्रंथ साहिब जी में संकलित है कि हमारा समस्त अध्यात्मवाद का कर्म केवल व केवल मन से जुड़ा हुआ ही है :-

''ममा मन सिउ कारजु है मन साधे सिधि होइ॥
मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥ (अंगः 342)
''ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ।।
मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ।। (अंगः 342)

भाव : हरेक जीव का संसार में आने का असली कार्य मन से ही है। मन को वश में करने से ही जीव को असल मनोरथ की प्राप्ति होती है। कबीर जी कह रहे हैं कि हरेक जीव का असल काम सिर्फ व सिर्फ मन से ही है। मन जैसा जीव को कोई ओर नहीं मिला जिसके साथ इसका हर क्षण पाला पड़ता हो।

अतः परमात्मा व हमारे मध्य की दूरी को समाप्त करने के लिए हमें जो उद्यम करना है वह मन को तराशने के लिए ही करना है, उसका स्वभाव बदलने के लिए ही करना है।

जैसे पानी का स्वभाव है कि वो ढलान की तरफ़ जाता है वैसे ही गुरु की शिक्षा के अभाव में हमारा मन भी क्षुद्र (घटिया) बातों की तरफ जाता है। जैसे पानी की ऊँचा उठाने के लिए मोटर की आवश्यकता होती है, वैसे ही सुरत/ध्यान व मन की मति को ऊँचा उठाने के लिए गुरु के शब्द की आवश्यकता होती है। इसलिए गुरु साहिब ने जपु जी साहिब की 38वीं पउड़ी में यह बात दृढ़ करवाई है कि हमने अपनी मति को अहरणि बनाकर उस पर परमात्मा के ज्ञान का हथौड़ा चलाना है तभी हमारे मन की उपर्युक्त संरचना होगी :-

''अहरणि मति वेदु हथीआरु।।''

इस संबंध में भक्त कबीर जी का यह शब्द भी श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में आता है :-

''चलु रे बैकुंठ तुझहि ले तारउ॥
हिचहि त प्रेम कै चाबुक मारउ॥'' (ਅੰਗ: 329)
''चलु रे बैकुंठ तुझहि ले तारउ।।
हिचहि त प्रेम कै चाबुक मारउ।।'' (अंग: 329)

इससे हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हम अपने भीतर की असत्य की दीवार तोड़ना चाहते हैं तो हमें अपने 'मन' को 'शब्द गुरु' श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में बताए सिद्धान्तों के अनुसार 'तराशना' पड़ेगा और इस प्रकार हम गुरु की कृपा से स्वयं के भीतर से असत्य की दीवार को तोड़ने में सफलता प्राप्त कर सकेंगे।

सैंतीसवीं पउड़ी

करम खंड की बाणी जोरु।। तिथै होरु न कोई होरु।।
तिथै जोध महाबल सूर।। तिन महि रामु रहिआ भरपूर।।
तिथै सीतो सीता महिमा माहि।। ता के रुप न कथने जाहि।।
ना ओहि मरहि न ठागे जाहि।। जिन कै रामु वसै मन माहि।।
तिथै भगत वसहि के लोअ।। करहि अनंदु सचा मनि सोइ।।
सच खंडि वसै निरंकारु।। करि करि वेखै नदरि निहाल।।
तिथै खंड मंडल वरभंड।। जे को कथै त अंत न अंत।।
तिथै लोअ लोअ आकार।। जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार।।
वेखै विगसै करि वीचारु।। नानक कथना करड़ा सारु।। ३७।।

उच्चारण : जोरु—ज़ोर। **होरु**—होर। **रामु**—राम। **ओहि**—ओह। **मरहि**—मरैं। **रामु**—राम। **मनि**—मंन। **महिमा**—महिमां। **माहि**—माहिं। **ता के**—तां के। **जाहि**—जाहिं। **वसहि**—वसहिं। **अनंदु**—अनंद। **मनि**—मन। **सोइ**—सोय। **वसहि**—वसहिं। **करहि**—करहिं। **खंडि**—खंड। **निरंकारु**—निरंकार। **करि**—कर। **नदरि**—नदर। **हुकमु**—हुकम। **करि**—कर। **वीचारु**—वीचार। **सारु**—सार।

पद अर्थ : करम—बख़्शिश। **बाणी**—बनावट। **जोरु**—बल। **होरु**—अकाल पुरख, परमपिता परमात्मा के बिना कोई दूसरा। **जोध**—योद्धा। **महाबल**—बड़े बाहुबल वाले। **सूर**—शूरवीर। **तिन महि**—उनमें। **रामु**—अकाल पुरख, वाहिगुरू, ईश्वर। **रहिआ भरपूर**—रोम-रोम में भरपूर है। **सीतो सीता**—पूर्ण तौर पर मिला है। **ना मरहि**—आत्मिक मौत नहीं मरते। **न ठागे जाहि**—माया द्वारा ठगे नहीं जा सकते। **वसहि**—बसते हैं। **के लोअ**—कई भवनों के। **सचा सोइ**—वह सच्चा हरि। **सच खंडि**—सचखंड में। **करि करि**—सृष्टि रच कर। **नदरि निहाल**—खुश, प्रसन्न कर देने वाली दृष्टि से। **वेखै**—देखता है, संभाल करता है। **वरभंड**—ब्रहमँड। **लोअ लोअ**—कई

भवन। **विगसै**—खुश होता है। **करि वीचारु**—विचार कर के। **कथना**—वर्णन करना। **सारु**—लोहा। **करड़ा सारु**—सख्त (जैसे कि लोहा होता है)।

अर्थ : बख्शिश वाली अवस्था की बनावट, बल है। भाव, जब मनुष्य पर अकाल पुरख की कृपा दृष्टि होती है तो उसके अंदर ऐसा बल पैदा होता है कि उस पर विकार (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) अपना प्रभाव नहीं डाल सकते, क्योंकि उस अवस्था में मनुष्य के अंदर अकाल पुरख, परमपिता परमात्मा की ज्योति के बिना कोई दूसरा नहीं रहता। जो मनुष्य उस अवस्था में पहुंचे हुए हैं वे योद्धा, महाबली तथा शूरवीर हैं। उनके रोम रोम में अकाल पुरख, परमपिता परमात्मा की ज्योति का निवास है। उस बख्शिश की अवस्था में पहुंचे हुए मनुष्यों का मन, निर्मल परमपिता परमात्मा की महानता में पिरोया हुआ रहता है। उनके शरीर, कंचन के समान ऐसे हो जाते हैं कि उनके सुंदर रूप का वर्णन नहीं किया जा सकता। उनके मुंह पर रुहानी नूर ही नूर चमकता है। इस अवस्था में जिनके मन में परमपिता परमात्मा की ज्योति बसती है, उनकी आत्मिक मृत्यु नहीं हुआ करती। माया अथवा संसारिक पदार्थ उनको ठग नहीं सकते। उस अवस्था में कई भवनों के भक्तजन बसते हैं, जो सदा उल्लास में रहते हैं, क्योंकि उस सच्चे परमपिता परमात्मा, अकाल पुरख की ज्योति उनके मन में मौजूद है। सच खंड में, भाव परमपिता परमात्मा के साथ एकरूप होने वाली अवस्था में, मनुष्य के अंदर वह परमपिता परमात्मा स्वयं ही निवास करता है, जो सृष्टि को रचकर, कृपा की नज़र से उस की संभाल करता है। उस अवस्था में, भाव अकाल पुरख से एक रूप होने वाली अवस्था में, मनुष्य को अनंत खंड, अनंत मंडल और अनंत ब्राह्मंड दिखलाई देते हैं। इतने बेअंत कि यदि कोई, मनुष्य उनका वर्णन करने लगे, तो उनका पारावार (अन्त) नहीं पाया जा सकता। उस अवस्था में अपार भवन तथा आकार दिखलाई देते हैं, जिन सब में उसी अनुसार काम चल रहा है, जैसे कि अकाल पुरख का हुक्म होता है। भाव इस अवस्था में पहुंच कर मनुष्य हर स्थान पर यही महसूस करता है कि सभी कुछ ईश्वरेच्छा में ही हो रहा है। हे नानक! यह अवस्था कैसी होती है, इसका वर्णन नहीं हो सकता, इसको केवल अनुभव ही किया जा सकता है।

सैंतीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''करम खंड की बाणी जोरु।। तिथै होरु न कोई होरु।।
तिथै जोध महाबल सूर।। तिन महि रामु रहिआ भरपूर।।''

इस पउड़ी के अर्थ पीछे दिये जा चुके हैं। कर्म खण्ड (बख्शीश वाले खंड) की बनावट महाबल (बहुत ज़ोर) वाली हो जाती है।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि बख्शीश वाले खण्ड में पहुँचे हुए गुरुमुखों की बनावट इतनी बल वाली क्यों होती है ?

तो इसका उत्तर देते हुए श्री गुरु नानक देव जी हमें इस पउड़ी में समझाते हैं कि कर्मखण्ड में पहुँचे हुए गुरुमुखों के अर्न्तमन में केवल और केवल एक अकाल पुरखु का ध्यान रहता है। परमात्मा के बिना अन्य कोई भी भाव उनके मन में नहीं होता। उनके ज्ञानेन्द्रिय व कर्मेन्द्रिय केवल वही कर्म करते हैं जो उन्हें हर समय अकाल पुरखु से जोड़ कर रखते हैं। उनमें अन्य कोई भाव अर्थात माया का भाव नहीं होता।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हम भी चाहते हैं कि हमें अकाल पुरखु की बख्शीश प्राप्त हो तो हमें दूसरे भाव अर्थात माया वाले भाव को भूल कर एक अकाल पुरखु से अपनी लिव जोड़नी पड़ेगी व मन के मति (विचारों) को त्यागना पड़ेगा।

यथा :-

''ਤਿਆਗੋਂ ਮਨ ਕੀ ਮਤੜੀ ਵਿਸਾਰੇਂ ਦੂਜਾ ਭਾਉ ਜੀਉ॥
ਇਉ ਪਾਵਹਿ ਹਰਿ ਦਰਸਾਵੜਾ ਨਹ ਲਗੈ ਤਤੀ ਵਾਉ ਜੀਉ॥'' (ਅੰਗ: 763)

''तिआगें मन की मतड़ी विसारें दूजा भाउ जीउ।।
इउ पावहि हरि दरसावड़ा नह लगै ततती वाउ जीउ।।'' (अंग: 763)

दूसरी शिक्षा

''तिथै सीतो सीता महिमा माहि।। ता के रूप न कथने जाहि।।''

इस बख्शीश में पहुँचे हुए गुरमुखों का मन केवल व केवल अकाल पुरखु के गुणों (स्तुति) में ही जुड़ा (पिरोया) रहता है जिससे उनका जीवन इतना ऊँचा उठ जाता है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हम भी हर क्षण अपने मन को अकाल पुरखु की बंदगी व सिमरन से ओत-प्रोत रखें एवं हर समय वाहिगुरु जी से यही प्रार्थना करें है कि कृपा करके मुझे अपने 'सतिनामु' की बख्शीश दान में दे दीजिए और यह भी मेहर कर दीजिए कि मैं आपको एक क्षण के लिए भी न भूलूं। यथा :-

''ਨਾਮੁ ਦੀਜੈ ਦਾਨੁ ਕੀਜੈ ਬਿਸਰੁ ਨਾਹੀ ਇਕ ਖਿਨੋ॥'' (ਅੰਗ: 784)

''नामु दीजै दानु कीजै बिसरु नाही इक खिनो।।'' (अंग: 784)

तीसरी शिक्षा

''ना ओहि मरहि न ठागे जाहि।। जिन कै रामु वसै मन माहि।।''

अर्थात जिनके मन में अकाल पुरखु का निवास हो जाता है वे कभी भी आत्मिक मौत नहीं मरते, न ही उन्हें माया ठग सकती है।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि यदि हम चाहते हैं कि हम पर भी अकाल पुरखु की दया, अनुकंपा, मेहर हो जाए तो माया के प्रहार से सावधान होना पड़ेगा क्योंकि यह हर समय जीवों को ठग रही है।

इस बारे में गुरुबाणी का फ़रमान है :-

''ਮਾਇਆ ਮਮਤਾ ਮੋਹਣੀ ਜਿਨਿ ਵਿਣੁ ਦੰਤਾ ਜਗੁ ਖਾਇਆ॥
ਮਨਮੁਖ ਖਾਧੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਉਬਰੇ ਜਿਨੀ ਸਚਿ ਨਾਮਿ ਚਿਤੁ ਲਾਇਆ॥''

(ਅੰਗ: 643)

''माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ।।
मनमुख खाधे गुरमुखि उबरे जिनी सचि नामि चितु लाइआ।।''

(अंग: 643)

भाव : 'माया' हमारे मन को मोह लेने वाली है और यह बिना दाँतों के ही संसार को खा रही है। मनमुख माया के द्वारा ग्रसित होकर खाए जा रहे हैं पर जो गुरमुख सज्जन गुरु के अनुसार 'सतिनाम' से अपना मन जोड़ते हैं, वे बच जाते हैं।

सच खंडि

जब गुरु नानक देव जी ने सच खंडि में पहुँचे हुए मनुष्य की अवस्था की बात की है तो अन्तिम पंक्ति में यह बात फ़रमा दी कि इस अवस्था का वर्णन नहीं किया जा सकता, यह अवस्था केवल अनुभव ही की जा सकती है। अत: हमारी कोई हैसियत नहीं कि हम इस अवस्था के बारे में कुछ कह सकें। यह अकथनीय है।

अठतीसवीं पउड़ी

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु।।
अहरणि मति वेदु हथीआरु।।
भउ खला अगनि तप ताउ।।
भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि।।
घड़ीऐ सबदु सची टकसाल।।
जिन कउ नदरि करमु तिन कार।।
नानक नदरी नदरि निहाल।। ३८।।

उच्चारण : जतु—जत। **धीरजु**—धीरज। **सुनिआरु**—सुनिआर। **अहरणि**—अहरण। **मति**—मत। **वेदु**—वेद। **हथीआरु**—हथिआर। **अगनि**—अगन। **अंम्रितु**—अमृत। **तितु**—तित। **ढालि**—ढाल। **सबदु**—शबद। **नदरि**—नदर। **करमु**—करम।

पद अर्थ : जतु—अपनी शारीरिक इंद्रियों को विकारों से रोके रखना। **पाहारा**—सुनार की दुकान। **सुनिआरु**—सुनार। **मति**—अक्ल। **अहरणि**—लोहा, जिस पर टेक लगा कर सुनार सोना कूटता है। **वेदु**—ज्ञान। **हथीआरु**—हथौड़ा। **भउ**—परमपिता परमात्मा का डर। **खला**—धौंकनी, जिसके द्वारा सुनार फूंक मार कर आग जलाते हैं। **तप ताउ**—तपों का तपना, संघर्षरत होना, परिश्रम करना। **भाँडा**—कुठाली। **भाउ**—प्रेम। **अंम्रितु**—ईश्वर का, अमर कर देने वाला प्रेम। **तितु**—उस बर्तन में। **घड़ीऐ सबदु**—शब्द को ढाला अर्थात घड़ा जाता है। **सची टकसाल**—इस ऊपर बताई हुए सच्ची टकसाल में। **टकसाल**—वह स्थान जहां पर सरकारी रुपए सिक्के आदि ढाले जाते हैं। **जिन कउ**—जिन मनुष्यों पर। **नदरि**—कृपा की दृष्टि। **करमु**—बख्शिश। **तिन कार**—उन मनुष्यों का यह काम है। **निहाल**—प्रसन्न। **नदरी**—कृपा की नज़र वाला प्रभु।

अर्थ : यदि 'जतु' रूपी दुकान हो, 'धैर्य' उसका सुनार बने, मनुष्य की अपनी 'मति' लोहे के नीचे रखने वाली 'अहरणि' अर्थात टेक बने और उस

मति—अहरण पर 'ज्ञान का हथौड़ा' चले। यदि अकाल पुरख का डर 'धौंकनी' हो, संघर्षरत, परिश्रमी जीवन 'अग्नि' हो, प्रेम 'कुठाली' हो, तो हे भाई, उस कुठाली में अकाल पुरख, ईश्व का अमृत नाम ढालो, क्योंकि ऐसी ही सच्ची टकसाल में गुरू का शब्द सृजन किया जा सकता है। यह काम उन मनुष्यों का है जिस पर कृपा की दृष्टि होती है, जिन पर बख्शिश होती है। हे नानक! वह मनुष्य अकाल पुरख की कृपा दृष्टि द्वारा प्रसन्न हो जाते हैं।

पाठ का उच्चारण : 'जिन कउ, नदरि करमु, तिन कार' पंक्ति में 'नदरि करमु' के पश्चात् विश्राम देना है, नदरि के पश्चात् नहीं। 'नदरि करमु' इकट्ठा पढ़ना है।

नोट : जत, धैर्य, मति, ज्ञान, भय, तप और भावना की मिश्रित सच्ची टकसाल में गुरू शब्द की मोहर घड़ी जाती है, भाव जिस उच्च आत्मिक अवस्था में गुरू साहिब ने इस शब्द की रचना की है, सिख को भी वह शब्द उसी उच्च अवस्था में ले पहुंचता है। झूठ के पर्दे को तोड़ देता है ताकि सत्य-धैर्य आदि वाला जीवन बन जाये। बाणी 'जपु' की कुल ३८ पउड़ियां हैं जो यहां पर समाप्त होती हैं। पहले श्लोक में मंगलाचरण के रूप में गुरू नानक साहिब ने अपने इष्ट प्रभु के स्वरूप का वर्णन किया था। अब आगे अंतिम श्लोक में सारी बाणी जपु का सिद्धान्त दर्शाया है।

अठतीसवीं पउड़ी की शिक्षा

पहली शिक्षा

''जतु पाहारा'' अर्थात ऊँचा आचरण

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हम अपनी ज्ञान एवं कर्म इन्द्रियों को विकारों से दूर रखें अर्थात हमारा चरित्र बहुत ऊँचा होना चाहिए व चरित्र की सुगंधि ऐसी होनी चाहिए जिसे देख कर लोगों का झुकाव सिखी की तरफ हो जाए।

दूसरी शिक्षा

''धीरजु सुनिआरु'' अर्थात सुनार जैसा धैर्य

जैसे एक सुनार गहने बनाते समय अधीर नहीं होता बल्कि धैर्य रखता है, उसी प्रकार हमें भी धैर्यशाली बनना है। इस मार्ग पर चलते हुए कभी बहुत ऊँचाई आ जाती है व कभी मन बहुत नीचे पाताल में चला जाता है। जैसा कि गुरुबाणी का फ़रमान है :

''ਕਬਹੂ ਜੀਅੜਾ ਊਭਿ ਚੜਤੁ ਹੈ ਕਬਹੂ ਜਾਇ ਪਇਆਲੇ॥'' (ਅੰਗ: 876)

''कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले।।''

(अंग: 876)

हमने गुरु शब्द का सहारा लेकर धैर्य रखते हुए परमात्मा की प्राप्ति के पथ पर निरंतर गतिशील रहना है व मन को डोलने नहीं देना। जैसे कि कहावत है **''लगे रहो तो लाख का, छोड़ दिया तो काख का''** अर्थात यदि लगे रहेंगे तो हमारी कीमत लाखों की हो जाएगी और अगर इस मार्ग पर चलना छोड़ दिया तो हम तिनके के समान तुच्छ रह जाएंगे। अत: अगर निरंतर गतिशील रहेंगे तो एक न एक दिन अकाल पुरखु की कृपा से हम अपने लक्ष्य (मंज़िल) तक पहुँच ही जाएँगे।

तीसरी शिक्षा

''अहरणि मति वेदु हथीआरु।।''

अर्थात मन के (बुद्धि, विचारों) के ऊपर गुरु के ज्ञान का हथौड़ा चलाना।

जैसे सुनार गहनों की रचना अहरण (लोहे का टुकड़ा जिसके ऊपर कोई धातु रखकर गहनों की रचना की जाती है) के ऊपर धीरे-धीरे हथौड़ी मार कर करता है, उसी प्रकार हमें भी अपनी समझ (अक्ल) को अहरण बना कर उसके ऊपर परमात्मा के ज्ञान, गुरु शब्द का हथौड़ा चला कर अपनी मति की रचना करनी है।

चौथी शिक्षा

''भउ खला'' अर्थात परमात्मा के भय को धोंकनी बनाना।

निरंकार के भय को 'खला' अर्थात धोंकनी बनाना है। धोंकनी उस को कहते हैं जिससे सुनार लोग फूँक मार कर आग जलाते हैं।

अर्थात कोई भी कर्म करने से पहले यदि हमारे मन में निरंकार का 'निर्मल भय' होगा तो इससे हमारे द्वारा कोई गलत कार्य नहीं होगा व हमारे अंदर की मैल धुल कर समाप्त हो जाएगी। निरंकार का भय ऐसा भय है जो अन्य सभी भयों को समाप्त कर देता है। यथा :-

''ਡਡਾ ਡਰ ਉਪਜੇ ਡਰੁ ਜਾਈ॥'' (ਅੰਗ: 341)

''डडा डर उपजे डरु जाई।।'' (अंग: 341)

भाव : जब प्रभु का 'निर्मल भय' उत्पन्न हो जाता है तो अन्य भय दूर हो जाते हैं।

पाँचवी शिक्षा

''अगनि तप ताउ'' अर्थात तप की अग्नि को जलाना

जैसे सुनार गहनों की रचना करने के लिए अग्नि को जलाता है अर्थात कड़ा परिश्रम करता है, उसी प्रकार हमने भी गुरु के शब्द को कड़े परिश्रम द्वारा

जीवन में ढालना है एवं अपने जीवन में कोई भी ऐसा कर्म नहीं करना जो कि गुरु की सोच के अनुसार न हो।

छठी शिक्षा

''भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि।। घड़ीअै सबदु सची टकसाल।।''

जैसे सुनार सोने के गहने (स्वर्णाभूषण) बनाने से पहले सोने को पिघला कर कुठाली में डाल लेता है, उसी प्रकार हमनें भी प्रेमपूर्वक शब्द की कमाई करके उसे अपने हृदय में संभाल कर रखना है। सच्ची प्रीत (प्रेम भाव) के बिना हमारे अर्न्तमन में अकाल पुरख का अमृत रूपी नाम नहीं समा सकता।

यदि उपर्युक्त शिक्षाओं को हम अपने जीवन में ढाल लेंगे तो हमारे भीतर ऐसी सच्ची टकसाल (सिक्के बनाने का कारखाना) बन जाएगी जिसमें गुरु शब्द की सृजना की जा सकती है।

इसलिए इन शिक्षाओं को अपने जीवन का अभिन्न अंग बनाना है ताकि हम गुरु की कृपा से असत्य की दीवार को गिराकर जीवन की बाजी जीत कर जाएँ।

।। सलोक ।।

पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु।।
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु।।
चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि।।
करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि।।
जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि।। १।।

उच्चारण : सलोकु—सलोक। **पवणु**—पवण। **धरति**—धरत। **महतु**—महत। **दिवसु**—दिवस। **राति**—रात। **दाइआ**—दाया। **जगतु**—जगत। **धरमु**—धर्म। **हदूरि**—हदूर। **दूरि**—दूर। **चंगिआईआ**—चंगिआईआं। **बुरिआईआ**—बुरिआईआं। **नामु**—नाम। **धिआइआ**—ध्याया। **मसकति**—मसक्कत। **घालि**—घाल। **नालि**—नाल।

पद अर्थ : पवणु—हवा, श्वास, प्राण। **महतु**—बड़ी। **दिवसु**—दिन। **दुइ**—दोनों। **दिवसु दाइआ**—दिन खेल खिलाने वाला खिड़ावा है। **राति दाई**—रात्रि खेल खिलाने वाली दाई खिड़ावी है। **सगल**—सारा। **वाचै**—परखता है। **हदूरि**—परमपिता की हजूरी में। **करमी**—कर्मों के अनुसार। **के**—कई जीव। **नेड़ै**—ईश्वर के समीप। **जिनी**—जिन मनुष्यों ने। **ते**—वे मनुष्य। **धिआइआ**—सुमिरन किया है। **मसकति**—मेहनत, परिश्रम। **घालि**—परिश्रम करके, सफल करके। **मुख उजले**—उज्जवल मुख वाले। **केती**—कई जीव। **छुटी**—मुक्त हो गई, माया के बंधनों से रहित हो गई। **नालि**—उन गुरमुखों की संगति में।

अर्थ : प्राण, शरीरों के लिए ऐसे हैं, जैसे गुरू जीवों की आत्मा के लिए है। पानी सब जीवों का पिता है और धरती सब की बड़ी मां है। दिन तथा रात दोनों खिलावा तथा खिलावी हैं। सारा संसार खेल रहा है। भाव संसार के सारे जीव, रात को सोने में और दिन में काम काज करने में लगे हुए हैं। धर्म रूपी कानून, अकाल पुरख की हजूरी में जीवों द्वारा किए हुए अच्छे तथा बुरे कर्म की विचार

करता है। अपने-अपने इन किए गये कर्मों के अनुसार कई जीव अकाल पुरख के समीप हो जाते हैं, कई अकाल पुरख से दूर हो जाते हैं। हे नानक! जिन मनुष्यों ने परमपिता परमात्मा का नाम सुमिरन किया, वे अपनी मेहनत सफल कर गए हैं, अकाल पुरख के दर पर उनके मुख उज्जवल हैं और भी कई जीव, उनकी संगत में रह कर झूठ की दीवार गिरा कर, माया के बंधनों से मुक्त हो गए हैं।

सलोक की शिक्षा

पहली शिक्षा

''पवणु गुरु''

गुरु नानक देव जी ने इस श्लोक में 'पवन' को 'गुरु' का दर्जा दिया है। जैसे हमारे शरीर को चलायमान रखने के लिए 'प्राण' आवश्यक हैं, उसी प्रकार मनुष्य की 'आत्मा' के लिए 'गुरु का ज्ञान' आवश्यक है।

जैसे गुरु निर्भय, निरवैर व बिना किसी परवाह के संसार को उपदेश देता है वैसे ही पवन भी इसी प्रकार संसार में बहती है। **इससे हमनें यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि** जहाँ एक तरफ़ हमें गुरु शब्द द्वारा गुरु का ज्ञान प्राप्त कर अपने जीवन में ढालना है, वहीं निंभय, निरवैर व बिना किसी परवाह के प्रभु के मार्ग पर भी चलना है।

दूसरी शिक्षा

''पाणी पिता''

गुरु जी ने पानी को पिता का स्थान दिया है। पानी का एक महान गुण है कि वह सदैव ढलान की तरफ ही बहता है। **पानी के इस गुण से हमने यह शिक्षा लेनी है कि हमें भी अपने जीवन में विनम्र होकर रहना है।**

तीसरी शिक्षा

''माता धरति महतु''

धरती बहुत बड़ी माता है। इसमें हम जो भी बीज डालेंगे वही उत्पन्न होगा। अत: हमें 'शरीर रूपी धरती' में 'नाम रूपी बीज' व 'सत्कर्मों का बीज' डालना चाहिए क्योंकि हम जो बीज डालेंगे वही काटना पड़ेगा। इसके अलावा धरती का एक और गुण है कि वह सहनशील होती है। चाहे कोई इस पर चंदन

का लेप करे, चाहे कोई फावड़ा मार कर, खोद कर, इसे खराब कर दे तो भी यह किसी को कुछ नहीं कहती।

इससे हमने यह शिक्षा ग्रहण करनी है कि हमें भी स्तुति व निंदा दोनों को समान भाव से देखना है। यथा :-

''ਉਸਤਤਿ ਨਿੰਦਾ ਦੋਊ ਤਿਆਗੈ ਖੋਜੈ ਪਦੁ ਨਿਰਬਾਨਾ॥
ਜਨ ਨਾਨਕ ਇਹੁ ਖੇਲੁ ਕਠਨੁ ਹੈ ਕਿਨਹੂੰ ਗੁਰਮੁਖਿ ਜਾਨਾ॥'' (ਅੰਗ: 219)

''उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पदु निरबाना।।
जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना।।'' (अंग:219)

चौथी शिक्षा

''चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि।।''

अर्थात 'धर्म रूपी कानून' अकाल पुरखु की हजूरी में प्राणियों के अच्छे व बुरे कर्मों को परखता है। इन्हीं कर्मों के आधार पर कई जीव अकाल पुरखु के नज़दीक व कई दूर हो जाते हैं।

कई बार लोग प्रश्न करते हैं कि मनुष्य को अच्छा होना चाहिए, सत्कर्म करने चाहिएं लेकिन नाम सिमरन की क्या आवश्यकता है।

तो प्रत्युत्तुर देते हुए श्री गुरु नानक देव जी ने इस श्लोक में स्पष्ट किया है कि भलाई करने से मनुष्य अकाल पुरखु के नजदीक तो हो सकता है पर 'माया के बंधनों' से उसकी मुक्ति 'परमात्मा की नदरि' के बिना नहीं हो सकती। और प्रभु की नदरि 'नाम सिमरन' से ही प्राप्त होती है अन्यथा संसार में उसका आवागमन जारी रहेगा। यदि कोई मनुष्य यह चाहता है कि माया के बंधनों से उसकी मुक्ति हो जाए व अकाल पुरखु के दर पर वह उज्ज्वल मुख से कबूल हो जाए तो सिर्फ एक ही उपाय है कि वह अकाल पुरखु के नाम का सिमरन करे व जीवन में नेक कर्म करे। सिर्फ अच्छाइयों से उसकी मुक्ति नहीं हो सकती क्योंकि अच्छाई तभी उत्पन्न होती है, जब हम 'शरीर रूपी उत्तम धरती' पर 'नाम रूपी उत्तम बीजों' को बीजते हैं।

वाहेगुरु जी का खालसा।।
वाहेगुरु जी की की फतहि।।

साखियाँ

वैष्णो साधु

एक बार गुरु नानक देव जी सिखी का प्रचार करते हुए हरिद्वार पहुँचे व गंगा नदी के किनारे डेरा लगाया। वहाँ से थोड़ी ही दूर एक साधु का भी डेरा था। वह बहुत ही पाखंडी था। उस पाखंडी का पर्दाफ़ाश करने के लिए ही गुरु जी ने उसके नज़दीक अपना डेरा लगाया।

अगले दिन साधु स्नान करने के पश्चात भोजन बनाने की तैयारी करने लगा। चौंका तैयार करने के लिए उसने उसे गाय के गोबर से लीपा। लकड़ियों को पवित्र करने के लिए उसे पानी से धोया। चौंके के चारों और उसने एक रेखा खींच दी ताकि वहाँ किसी भी पर-पुरुष की परछाईं भी न पड़े। लकड़ियां जलाकर वह भोजन तैयार करने लगा। वह इस बाह्य पवित्रता को ही अपना धर्म समझता था तथा स्वयं को बहुत बड़ा धर्मी।

गुरु जी ने उसका यह भ्रम दूर करना था व लोगों को समझाना था कि यह धर्म नहीं सिर्फ पाखंड है। अत: उन्होंने भाई मरदाना जी को वहाँ भेजा। भाई मरदाना जी वहाँ गए व उन्होंने साधु से अग्नि माँगी। साधु आग-बबूल होकर मरदाना जी से कहने लगा कि तुमने मेरा चौंका भ्रष्ट कर दिया है। क्रोधित होकर वह जलती लकड़ी लेकर भाई मरदाना जी के पीछे भागा। भाई मरदाना जी गुरु जी के पास आ गए व पीछे-पीछे साधु भी वहाँ पहुंच गया।

गुरु नानक साहिब जी ने पूछा, ''साधु जी! आप इतने क्रोधित क्यों है?'' तो साधु ने गुस्से में उत्तर दिया, ''इस मरासी (एक जाति) ने मेरा चौंका भ्रष्ट कर दिया है। इस की परछाईं वहाँ पड़ गई, जिससे मेरा चौंका अपवित्र हो गया।''

गुरु जी ने कहा कि ऐसा कैसे हो सकता है क्योंकि वह भी आपके जैसा मनुष्य ही है। 'नीच' वह है जो 'गलत कार्य' करता है और 'ऊँचा' वही है, जो 'नेक कर्म' करें। गुरु जी ने साधु को कहा, ''तुम अपने अर्न्तमन में देखो, तुम्हारे अंदर कितने ही अवगुण हैं। तुम्हारे अंदर दया नहीं, क्रोध है। प्यार नहीं घृणा है; सर्वत्र भला नहीं, पर-निंदा है, पवित्र बुद्धि नहीं, नीच विचार हैं।''

गुरु जी ने कहा कि चाहे तुमने चौंका पवित्र कर लिया, लकड़ियाँ धो लीं, रेखा खींच दी पर इन सब का क्या लाभ यदि मन ही पवित्र न हो सका। गुरु साहिब ने वैष्णो साधु को समझाते हुए फ़रमाया :-

''ਕੁਬੁਧਿ ਡੂਮਣੀ ਕੁਦਇਆ ਕਸਾਇਣਿ॥
ਪਰ ਨਿੰਦਾ ਘਟ ਚੂਹੜੀ ਮੁਠੀ ਕ੍ਰੋਧਿ ਚੰਡਾਲਿ॥
ਕਾਰੀ ਕਢੀ ਕਿਆ ਥੀਐ ਜਾਂ ਚਾਰੇ ਬੈਠੀਆ ਨਾਲਿ॥
ਸਚੁ ਸੰਜਮੁ ਕਰਣੀ ਕਾਰਾਂ ਨਾਵਣੁ ਨਾਉ ਜਪੇਹੀ॥
ਨਾਨਕ ਅਗੈ ਊਤਮ ਸੇਈ ਜਿ ਪਾਪਾਂ ਪੰਦਿ ਨ ਦੇਹੀ॥'' (ਅੰਗ: 91)

''कुबुधि डूमणी कुदइआ कसाइणि
पर निंदा घट चूहड़ी मुठी क्रोधि चंडालि।।
कारी कढी किआ थीऐ जां चारे बैठीआ नालि।।
सचु संजमु करणी कारां नावणु नाउ जपेही।।
नानक अगै ऊतम सेई जि पापां पंदि न देही।।'' (अंग:91)

भाव : मनुष्य के अन्दर की बुरी बुद्धि मरासणि (डूमणी) है। किसी पर दया न करना कसाइण है। पर निंदा अंदर की गंदगी है, और क्रोध चण्डालण है जिस ने (जीव के शांत स्वभाव को) ठग रखा है। यदि ये चारों भीतर ही बैठी हों, तो (बाहर चौका स्वच्छ रखने के लिए) रेखाएं खींचने का क्या लाभ? हे नानक! जो मनुष्य 'सच' को (चौका स्वच्छ करने की) जुगति बनाते हैं, उच्च आचरण को (चौके की) रेखाएं बनाते हैं, जो नाम जपते हैं, और इसको (तीर्थ) स्नान समझते हैं, जो औरों को भी पापों वाली शिक्षा नहीं देते, वह मनुष्य प्रभु की हजूरी में अच्छे गिने जाते हैं।

शिक्षा : इस साखी से हमें यह शिक्षा मिलती है कि बाहर की सुच्चमता (शुद्धि) से प्रभु की प्राप्ति नहीं होती एवं इस तरीके से हम 'सचिआर' नहीं बन सकते जैसा कि जपुजी साहिब की पहली पउड़ी में भी समझाया गया है।

कलयुग पंडित को उपदेश

प्रचार के दौरान गुरु नानक देव जी जगननाथ पुरी गए। वहाँ कलयुग नाम का एक पंडित रहता था। यह पंडित भोले-भाले लोगों को ठग रहा था। एक दिन गुरु जी ने देखा कि वह साधु के समान समाधि लगा कर बैठा है तथा बहुत से लोग उसके आस-पास बैठे हैं। उसने अपने सामने एक लोटा रखा हुआ था जिसमें लोग पैसे डाल रहे थे। यह पंडित कभी आँखें खोल रहा था व कभी बंद कर रहा था। कभी कहता कि मुझे स्वर्ग में भगवान के दर्शन हो रहे हैं, कभी ब्रह्मपुरी की बातें करता, कभी शिवपुरी की व कभी विष्णुपुरी की। इस प्रकार वह लोगों को मूर्ख बना रहा था। सभी उसकी बातें सुन कर आश्चर्य-चकित थे। वह पंडित कह रहा था, ''तुम भी आँखें बंद करके स्वर्ग का ध्यान करो। मैं तुम्हें स्वर्ग के दर्शन करवाता हूँ।''

गुरु साहिब व भाई मरदाना जी यह सब पाखंड देख रहे थे। जब वहाँ बैठे सभी लोगों ने पंडित के कथनानुसार आँखें बंद कर ली तो गुरु जी ने भाई मरदाना को इशारा किया कि उसका लोटा उठाकर उसी के पीछे रख दो। भाई मरदाना ने गुरु जी की आज्ञा का पालन करते हुए लोटा पीछे रख दिया।

कुछ समय के बाद जब पंडित ने आँखें खोली तो देखा कि उसका लोटा गायब है। उसने बहुत शोर मचाया व क्रोध में पूछने लगा, ''मेरा लौटा किसने उठाया है। संतों के साथ मजाक करना ठीक नहीं। हम पैसे का लालच नहीं करते.....।'' वास्तव में बात तो पैसे ही की थी व उसका सारा ध्यान भी लोटे में पड़े पैसों में ही था।

दर्शक (देखने वाले) आश्चर्य चकित रह गए। पंडित का शोर सुनकर अन्य लोग भी वहाँ एकत्रित हो गए। गुरु जी ने देखा कि अब यही उचित अवसर है और पंडित को कहा, ''पंडित जी। आप को तीनों लोकों के दर्शन हो रहे थे। आप तो भगवान के दर्शन कर रहे थे। आप स्वयं ही अपनी दृष्टि सब और दौड़ाएँ, शायद आपको आपका लोटा भी नज़र आ जाए।'' यह सुनकर पंडित और भी क्रोधित हो गया। कुछ लोगों ने कहा कि पंडित जी आपकी नज़र स्वर्ग तक जा सकती है तो आपको लोटा नज़र क्यों नहीं आ रहा? पंडित शर्मसार हो गया। उसे कोई उत्तर नहीं सूझ रहा था। लोगों को भी अब पंडित का सारा पाखंड समझ आ चुका था।

गुरु जी ने लोगों को कलयुगी पंडित का उदाहरण देकर उपदेश दिया, ''जो पाखंडी लोग आँख, नाक, कान बंद कर लोगों को ठगने के लिए समाधि लगाने का ढोंग करते हैं, उन पर बिल्कुल भी विश्वास न करो। ऐसे मनुष्य परमात्मा के संत नहीं वरन् ठग हैं।'' गुरु जी ने इसका उदाहरण देते हुए निम्नलिखित बाणी उच्चारित की :-

''ਅਖੀ ਤ ਮੀਟਹਿ ਨਾਕ ਪਕੜਹਿ ਠਗਣ ਕਉ ਸੰਸਾਰੁ॥ ੧॥ ਰਹਾਉ॥
ਆਂਟ ਸੇਤੀ ਨਾਕੁ ਪਕੜਹਿ ਸੂਝਤੇ ਤਿਨਿ ਲੋਅ॥
ਮਗਰ ਪਾਛੈ ਕਛੁ ਨ ਸੂਝੈ ਏਹੁ ਪਦਮੁ ਅਲੋਅ॥ ੨॥ (ਅੰਗ: 662)

''अखी त मीटहि नाक पकड़हि ठगण कउ संसारु।। १।। रहाउ।।
आंट सेती नाकु पकड़हि सूझते तिनि लोअ।।
मगर पाछै कछु न सूझै एहु पदमु अलोअ।।'' (अंग: 662)

अर्थात यह मनुष्य जन्म आँख बंद व नाक पकड़ने के लिए नहीं है। इन बातों से परमात्मा से मेल नहीं होता न ही यह सत् आचरण है। इन उपायों से संसार के अनेक पवित्र हृदय भी मलिन हो जाते हैं व संसार विकारों में डूबने लगता है। हाथ के अँगूठे व साथ की उँगलियों से यह नासिका (नाक) पकड़ते हैं व समाधि का ढोंग करके कहते हैं कि तीनों लोक दिखाई दे रहे हैं पर अपनी ही पीठ के पीछे पड़ी वस्तु इन्हें दिखाई नहीं देती।

गुरु जी का पवित्र उपदेश सुनकर कलयुगी पंडित गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा व माफी माँगी और उनका सिख बन गया। गुरु जी ने उसे सिख धर्म का प्रचारक बनाया।

शिक्षा : धर्म के नाम पर ठगी करने वाले, करम कांड करने वाले, बगुल समाधि लगाने वाले पाखंडी, दंभी लोगों से जहां हमने स्वयं बचना है, वहां पर और लोगों को भी बचाने का प्रयास करना है।

जपुजी साहिब की पहली पउड़ी में भी हमें श्री गुरु नानक देव जी ने यही समझाया है कि दिखावे के लिए जितना मर्जी आँखे बन्द कर लें, चुप होकर समाधि लगाने का ढोंग करें, तो भी इस तरह से हम 'सचिआर' नहीं बन सकते।

कारूँ बादशाह की साखी

इस साखी का उल्लेख 'नानक प्रकाश' जो कि 'श्री गुरु प्रताप सूरज ग्रंथ' का हिस्सा है, उसके उत्तरार्ध के 16वें अध्याय में 'कारूं प्रसंग' के शीर्षक के अन्तर्गत आया है। एक कारूँ नामक बादशाह था। उसे पैसे से बहुत प्यार था। उसके पास बेशुमार दौलत थी परन्तु वह तब भी और दौलत चाहता था। इसलिए उसने प्रजा से भी सारी धन-दौलत हड़प्प कर ली। अब उसकी प्रजा के पास पैसा नहीं था पर फिर भी धन एकत्रित करने का उसका लालच समाप्त नहीं हुआ। उसके मन में बार-बार यही आ रहा था कि शायद अभी भी किसी के पास धन दौलत हो और कितना अच्छा हो कि सारा धन उसे मिल जाए।

धन की इस भूख को पूरा करने के लिए उसने प्रजा में ऐलान करवाया कि जो भी व्यक्ति मेरे पास एक सिक्का लेकर आएगा मैं अपनी बेटी का रिश्ता उससे करूँगा। एक युवक ने जब यह सुना तो उसने अपनी माँ से कहा कि मुझे एक सिक्का दे दो। उसकी माँ ने उत्तर दिया कि घर में कोई सिक्का नहीं है। सभी सिक्के तो राजा के घर पहुँच चुके हैं। उस युवक ने अपनी मां से कहा कि कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे मुझे सिक्का प्राप्त हो जाए तथा मैं राजा की बेटी से विवाह कर सकूँ। विचार करने पर उसकी माँ ने कहा कि तुम्हारे पिता की मृत्यु उपरांत जब उन्हें दफनाया गया था तो उनके मुँह में एक सिक्का डाला गया था। यह सुनकर युवक कब्र से सिक्का निकाल लाया व राजा के पास चला गया।

जब बादशाह ने युवक के पास सिक्का देखा तो वह बहुत हैरान हो गया। उसने उस युवक से पूछा कि तू यह सोने का सिक्का कहाँ से लाया है ? युवक ने उत्तर देते हुए कहा कि वह अपने पिता की कब्र को खोदकर उनके मुँह से यह सिक्का निकालकर लाया है। बादशाह पैसे के मोह में इतना ग्रसित हो चुका था कि उसने अपने राज्य की समस्त कब्रें खुदवा डालीं और उन से भी सिक्के निकलवा लिए। उसे दौलत की इतनी भूख थी कि कब्रें खुदवाकर पैसे निकालने में उसे कोई शर्मिंदगी महसूस नहीं हुई। न ही उसे महसूस हुआ कि यह बहुत नीच कार्य है और यह पैसा कभी उसके साथ नहीं जाएगा।

एक दिन श्री गुरु नानक देव जी उसके महल के बार आए तो उन्हें राजा के कर्मचारियों से राजा की दौलत की भूख के बारे में पता लगा। राजा को सही

मार्ग पर लाने के लिए उन्होंने उसके कर्मचारियों के हाथ संदेश भिजवाया कि उसे मिलने के लिए महल के बाहर एक फकीर आएँ हैं। यह संदेश मिलते ही राजा उनसे मिलने के लिए चल पड़ा। जब गुरु जी ने राजा को अपने पास आते देखा तो श्री गुरु नानक देव जी ने उसी समय टूटे हुए मिट्टी के घड़े के टुकड़े एकत्रित करने आरंभ कर दिए। कारूँ ने जब उन्हें मिट्टी के घड़े के टूटे हुए टुकड़े एकत्रित करते देखा तो पूछा कि आप यह टुकड़े क्यों इकट्ठे कर रहे हैं। गुरु जी ने उत्तर दिया कि मुझे एक लंबे सफर पर जाना है और यह मिट्टी के घड़े के टुकड़े रास्ते में मेरे काम आएँगे। यह सुनकर कारूँ ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगा व कहने लगा कि कभी मिट्टी के घड़े के टुकड़े भी किसी के काम आएँ हैं? उसका उत्तर सुनकर गुरु जी ने कहा कि जिस सफर पर तुमने जाना है अर्थात (मृत्युपरान्त) तो क्या वहाँ तेरा यह इकट्ठा किया हुआ धन तेरे साथ जाएगा? यह सुनते ही कारूँ को समझ आ गया कि जितना भी धन एकत्रित किया जाए उससे हमारी तृष्णा कभी भी समाप्त नहीं हो सकती वरन् धन की यह लालसा और भी बढ़ती है और यह भौतिक पदार्थ मृत्युपरांत हमारे लिए व्यर्थ हैं।

शिक्षा : जपु जी साहिब में भी गुरु नानक देव जी पातिशाह हमें यही समझाते हैं कि हम चाहे समस्त दुनिया की धन-दौलत एकत्रित कर लें पर यह हमारे मन की लालसा को समाप्त नहीं कर सकती न ही हमारे साथ जाती है। इस तरीके से भी हम 'सचिआर' नहीं बन सकते।

बुत्त (Statue) बनाने वाली की कहानी

एक आदमी बहुत अच्छा बुत्त (Statue) बनाया करता था। वह बुत्त (Statue) बनाने में बहुत माहिर था। एक बार उस को बहुत गंभीर बीमारी लग जाती है व डाक्टर उसको कहते हैं कि अब कुछ महीनों तक तेरी मृत्यु हो जाएगी, तेरे बचने की कोई उम्मीद नहीं हैं।

वह आदमी अपने आप को बहुत चालाक समझता था। वह घर जाता है और सोचता है कि मैं अभी नहीं मरना चाहता। मैं इस तरह करता हूँ कि अभी मेरे पास कुछ महीनों का समय है और मैं अपनी सूरत जैसे बुत्त (Statue) बना कर रख देता हूँ। जब मृत्यु के दूत आएंगे तो वह धोखा खा जाएँगे कि असली व्यक्ति कौन है जिस की हमने जान निकाल कर लेकर जानी है क्योंकि वहाँ पर मेरे हमशक्ल बुत्त पड़ें होंगे और मैं बच जाऊँगा।

कुछ महीनों के बाद जब मृत्यु के दूत आए तो उस आदमी को पहचान न सके क्योंकि उस की सूरत जैसे उन्हें और भी आदमी नज़र आए। वह वापिस धर्मराज के पास चले गए व धर्मराज को कहा कि उस आदमी जैसे तो बहुत सारे आदमी वहाँ पर हैं। हमें समझ नहीं लगी कि हमने किस आदमी की जान को निकाल कर लाना है। तो धर्मराज ने कहा कि तुम दोबारा जाओ और प्रत्येक के पास जाकर यह कहना कि ''बनाने वाले तेरा कमाल है, पर तुम से एक बात की कमी रह गई।'' जमदूत जब दोबारा जाते हैं तो वह प्रत्येक के पास जाकर उसी तरह कहते हैं कि ''बनाने वाले तेरा कमाल है, पर तुम से एक बात की कमी रह गई।'' जब वह असली आदमी के कान में कहते हैं तो वह आगे बोल पड़ता है कि ''क्या कमी रह गई'' तो जमदूत कहते हैं कि ''बस यही कमी रह गई कि तू बोल पड़ा और तेरी चतुराई काम नहीं आई।

शिक्षा : हमारे पास चाहे लाखों चतुराईयां हों पर हमारी एक भी चतुराई हमारा साथ नहीं देती और हम 'सचिआर' नहीं बन सकते।

नमाज़ वाली साखी

जब श्री गुरु नानक देव जी 'वेईं' नदी से बाहर आए तो उन्होंने यह सन्देश दिया, ''न कोई हिंदू, न मुसलमान।'' गुरु जी ने कहा कि हमें हिंदू-मुसलमान के भेदभाव को त्याग कर एक परमात्मा को ही समस्त संसार में देखना चाहिए।

जब सुलतानपुर के काज़ी व नवाब ने गुरु जी की यह बात सुनी तो कहने लगे, ''गुरु जी! अगर आपको हिन्दुओं व मुस्लमानों में एक ही परमात्मा दिखाई देता है तो क्या आप हमारे साथ मिल कर नमाज़ पढ़ेंगे?''

गुरु जी कहने लगे ठीक है। नवाब ने सारे शहर में ऐलान करवा दिया कि अगले दिन गुरु नानक देव जी उनके साथ नमाज़ पढ़ेंगे और सभी को मस्जिद में इकट्ठे होने के लिए कह दिया।

अगले दिन मस्जिद में सभी शहर निवासी एकत्रित हुए। सबसे पहले काज़ी ने नमाज़ पढ़नी आरंभ की। गुरू जी उसके पास खड़े होकर उसके चेहरे को पढ़ने लगे। गुरु जी ने काज़ी को देखा व हँस पड़े। गुरु जी को स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि काज़ी का मन वहाँ उपस्थित नहीं था। नमाज़ की समाप्ति के बाद काज़ी ने नवाब से शिकायत की कि गुरु जी नमाज़ में शामिल नहीं हुए। जब नवाब ने गुरु जी से पूछा कि आपने नमाज़ क्यों नहीं पढ़ी व आपके हँसने का क्या कारण था? तो गुरु जी ने उत्तर दिया, ''मैं नमाज़ किसके साथ पढ़ता? काज़ी साहिब मुख से तो नमाज़ पढ़ रहे थे पर इनका मन नमाज़ में न होकर घर पर था। ये सोच रहे थे कि इनके घर में अभी कुछ समय पहले पैदा हुआ बछड़ा कहीं आँगन के बीचों बीच बने कुएँ में न गिर जाएँ।''

फिर नवाब ने कहा कि यदि काज़ी का मन नमाज़ में नहीं था तो आप मेरे साथ नमाज़ अदा कर लेते। गुरु जी ने मुस्कराते हुए कहा कि नवाब साहिब आपका मन भी नमाज़ में नहीं था, आपका मन तो काबुल जाकर घोड़े खरीदने में व्यस्थ था। गुरु जी के मुख से इन बातों को सुनकर नवाब और सभी उपस्थित व्यक्ति आश्चर्यचकित रह गए।

गुरु जी ने समझाया कि यदि सिर्फ हमारी जिह्वा शब्द पढ़े तो इसका पूर्णत: लाभ नहीं होता। यदि हमारा मन प्रभु से नहीं जुड़ा तो नमाज़ कैसे हो सकती है? यह बात सभी को समझ आ गई कि सच्ची भक्ति वही है जब हमारा

मन भी प्रभु के साथ जुड़ा हो अन्यथा मुख से सिर्फ शब्दों का उच्चारण एक formality ही बन कर रह जाता है।

शिक्षा : सच्ची भक्ति वही है जब किए जा रहे पाठ के अर्थों के साथ मन जुड़ा रहे। केवल मुख से पाठ करना पर मन को पाठ में न लगाना या मन से पाठ न करना प्रभु की सच्ची भक्ति नहीं है।

थड़े (बैठने की जगह) बनाने वाली साखी

एक बार गुरु अमरदास जी ने अपने दोनों दामादों – भाई रामा जी व भाई जेठा जी को थड़े (बैठने का स्थान) बनाने का आदेश दिया। दोनों ने गुरु जी के आदेशानुसार थड़े बनाने आरंभ कर दिए।

उनके द्वारा जब पहली बार थड़े बनाए गए तो वे गुरु जी को पसंद नहीं आए और उन्होंने थड़े पुन: बनाने का आदेश दिया। भाई रामा जी कहने लगे – ''आपने जैसा समझाया था, मैंने वैसा ही थड़ा बनाया है, इसमें कोई कमी नहीं है।'' इसके विपरीत भाई जेठा जी ने गुरु जी के आदेश को सुनते ही थड़ा तोड़ना प्रारंभ कर दिया व थड़ा ठीक से न बनाए के कारण गुरु जी से माफ़ी भी माँगी।

दूसरे दिन जब दोबारा थड़े बनाए गए तो गुरु जी ने पुन: कहा कि ये ठीक नहीं बने हैं, इसे तोड़ कर फिर से बनाओ। यह सुनते ही भाई रामा जी ने तिलमिला कर कहा कि जैसा आपने कहा था वैसा ही बनाया है। यह थड़ा शानदार तथा बैठने योग्य है। सभी लोगों ने भी इसकी बहुत तारीफ़ की है। इससे बढ़िया थड़ा मेरे से नहीं बन सकता है पर इसके विपरीत भाई जेठा जी ने कहा, ''सतिगुरु जी, मेरी बुद्धि तुच्छ है। आपकी बात मुझे पूरी तरह समझ नहीं आई। पिछली गलती माफ कर दीजिए तथा दोबारा कृपा (बख्शीश) कर समझाइए।''

जब तीसरे दिन भी बनाए हुए थड़े गुरु जी को पसंद नहीं आए तो उन्होंने आदेश दिया कि थड़े दोबारा बनाओ। यह सुनते ही भाई रामा जी क्रोधित होकर ऊँची आवाज़ में कहने लगे- ''जैसा आदेश दे रहे हो। वैसा ही बना रहा हूँ। इससे बढ़िया और कौन बना सकता है ? आप जो कह कर जाते हैं वह आपको स्वयं ही भूल जाता है। इसमें मेरा क्या कसूर है ? अब इसे मैंने नहीं तोड़ना।'' पर नम्रता के पुंज भाई जेठा जी ने सतगुरु जी के चरणों को पकड़कर कहा कि ''मैं तो अनजान हूँ। भूलनहार हूँ, आप कृपालू हैं, बार-बार मेरी गलतियों को बख्श देते हैं। यह मेरी बदकिस्मती है कि मुझे आपकी बात समझ नहीं आती। आप फिर से समझा दीजिए, फिर से थड़ा बना दूँगा।''

भाई जेठा जी की बात सुनकर गुरु जी बहुत प्रसन्न हुए व कहने लगे कि इसकी सेवा मुझे पसंद आई है। इस परीक्षा में यह सफल (उत्तीर्ण) हो गए हैं।

शिक्षा : इससे हमने यह शिक्षा लेनी है कि गुरु जी का सच्चा सिख वही है जो गुरु जी की प्रत्येक आज्ञा को बिना किन्तु-परन्तु किए हुए मानता है जैसा कि भाई जेठा जी (गुरु रामदास जी) ने मानी।

जपु जी साहिब - ''सो दरु''	रहरासि साहिब - ''सो दरु''
1. सो दरु केहा सो घरु केहा जितु	सो दरु **तेरा** केहा सो घरु केहा जितु
2. वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे।।	वाजे **तेरे** नाद अनेक असंखा केते **तेरे** वावणहारे।।
3. केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे।।	केते **तेरे** राग परी सिउ **कहीअहि** केते **तेरे** गावणहारे।।
4. गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु	**गावनि तुधनो पवणु** पाणी बैसंतर
5. गावहि चितु गुपतु लिखि जाणहि लिखि लिखि धरमु वीचारे।।	**गावनि तुधनो** चितु गुपतु लिखि **जाणनि** लिखि लिखि धरमु **बीचारे**।।
6. गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे।।	**गावणि तुधनो** ईसरु **ब्रह्मा** देवी सोहनि **तेरे** सदा सवारे।।
7. गावहि इंद इदासणि बैठे	**गावनि तुधनो इंद्र इंद्रासणि** बैठे
8. गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे।।	**गावनि तुधनो** सिध समाधी अंदरि गावनि **तुधनो** साध **बीचारे**।।
9. गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे।।	गावनि **तुधनो** जती सती संतोखी **गावनि तुधनो** वीर करारे।।
10. गावनि पंडित पड़नि रखीसर	गावनि **तुधनो** पंडित पड़नि रखीसुर
11. गावहि मोहणीआ मनु मोहनि सुरगा मछ पइआले।।	**गावनि तुधनो** मोहणीआ मनु मोहनि **सुरगु** मछु पइआले।।
12. गावनि रतन उपाए तेरे	गवनि **तुधनो** रतन उपाए तेरे
13. गावहि जोध महाबल सूरा गावहि खाणी चारे।।	**गावनि तुधनो** जोध महाबल सूरा **गावनि तुधनो** खाणी चारे।।
14. गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे।।	**गावनि तुधनो** खंड मंडल **ब्रहमंडा** करि करि रखे **तेरे** धारे।।
15. सेई तुधुनो गावहि जो तुधु भावनि	सेई तुधनो **गावनि** जो तुधु भावनि
16. होर केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे।।	होर केते **तुधनो** गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ **बीचारे**।।
17. करि करि वेखै कीता आपणा जिव	करि करि **देखै** कीता आपणा **जिउ**
18. जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु	जो तिसु भावै सोई करसी **फिरि** हुकमु
19. सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु	सो पातिसाहु साहा **पतिसाहिबु**

आओ! अब हम इस किताब की दुहराई के लिए कुछ प्रश्नों पर विचार करें

मूलमंत्र से लेकर पहली पाँच पउड़ीयों तक के प्रश्न

1. विद्वानों के अनुसार श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का सार कौन-सी बाणी को माना गया है।
2. ੧ਓ से हमने क्या शिक्षा ग्रहण करनी है।
3. जब हम सभी के अंदर परमात्मा की ज्योति देखेंगे तो फिर हमारे स्वभाव में क्या तबदीली आनी शुरू हो जाएगी। इस संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण दीजिए।
4. 'सतिनामु' की महिमा इतनी ज्यादा है कि इस का जाप करने से सभी कार्य सफल हो जाते हैं। इस संबंधी गुरुबाणी का प्रमाण दीजिए।
5. परमात्मा का नाम ही हमेशा रहने वाला है बाकी कुछ भी हमेशा रहने वाला नहीं तो फिर हमें क्या करना चाहिए।
6. अगर हमारे से कोई अच्छा काम हो जाए तो हमें उसका श्रेय (Credit) किस को देना चाहिए।
7. कुछ लोग कहते हैं कि अगर हमारे से कुछ गलत काम हो जाता है तो उसके लिए परमात्मा ही जिम्मेवार है न कि हम। क्या ऐसा कहना ठीक है? स्पष्ट करें।
8. 'निरभउ' का जाप करने से हमारे डर कैसे दूर हो जाते हैं? गुरुबाणी प्रमाण दीजिए।
9. लोगों को 'निरवैरता' के रास्ते पर चलने के लिए किस गुरुमुख प्यारी रूह ने अभियान चलाया था व इस अभियान ने लोगों में क्या तबदीलीयाँ लाईं थी।
10. दूसरों के प्रति नफरत, ईर्ष्या हमारे अंदर को दूषित कर देती है जिससे हमारे अंदर से विकारों की दुर्गंध आती है। इस संबंध में आलूओं की थैली वाली घटना सांझी करें।
11. मनुष्य 'जैसे' की सेवा करता है वह 'वैसा' ही हो जाता है, गुरुबाणी प्रमाण देकर समझाएं।

12. हम गुरु की कृपा के पात्र कैसे बन सकते हैं? सिख इतिहास में गुरु रामदास जी द्वारा सिखों को बताई जुगति के आधार पर उत्तर दीजिए।
13. परमात्मा के नाम का कितना सिमरण करना चाहिए? गुरुबाणी के आधार पर उत्तर दीजिए।
14. बाहर की स्वच्छता के साथ प्रभु की प्राप्ति नहीं होती, परमात्मा तब ही मिलता है अगर मन पवित्र हो। इस संबंध में साखी सांझी कीजिए।
15. 'चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार।।' वाली पंक्ति के अर्थ लिखो और इस से हमें क्या शिक्षा मिलती है? इस संबंध में साखी भी लिखो।
16. दुनिया के धन पदार्थ जितने भी इकट्ठे कर ले जाएँ तो भी मन की भूख नहीं मिटती। इस संबंध में साखी सांझी करें?
17. जीव कैसे सचिआरा बन सकता है? इस संबंध में गुरुबाणी प्रमाण दीजिए।
18. गुरु अमरदास जी ने अपनी बेटी बीबी भानी को कौन-से तीन उपदेश दिये। उनका क्या भाव है?
19. हमें किसी बात के लिए परमात्मा को दोष नहीं देना चाहिए। इसके संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण दीजिए।
20. ''नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।।'' के अर्थ और शिक्षा लिखें। इस संबंध में गुरुबाणी का क्या फ़रमान है ?
21. हम परमात्मा की बेअंत कृपाओं का सुख मानते हैं तो फिर इन कृपाओं को मानते हुए हमें क्या करना चाहिए।
22. ''हुकमी हुकमु चलाए राहु।। नानक विगसै वेपरवाहु।।'' से हमें क्या शिक्षा मिलती है? इस संबध में गुरुबाणी का फ़रमान भी दीजिए।
23. परमेश्वर का स्वभाव मिठबोलड़ा (मृदुभाषी) है। इससे हमें क्या शिक्षा लेनी है? इस संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण देकर समझाएं।
24. 'अमृत वेला' किस को कहते हैं? हमने 'अमृत वेले' उठ कर कौन-से तीन कार्य करने हैं?
25. ''गुरमुखि नादं.....पारबती माई।।'' से हमें क्या शिक्षा प्राप्त करनी है?

छठी और सातवीं पउड़ी के प्रश्न

1. छठी पउड़ी में गुरु नानक पातशाह ने किस कर्मकाण्ड का खंडन किया है और हमें क्या करने की प्रेरणा दी है ?
2. हमारी मति किस तरह से ऊँची हो सकती है ? छठी पउड़ी के आधार पर उत्तर दीजिए।
3. ''गुरा इक देहि बुझाई.....विसरि न जाई।।'' की शिक्षा लिखो।
4. ''परमेश्वर का नाम मुझे कभी एक पल के लिए भी न भूले'', इसकी प्राप्ति के लिए हमें गुरु साहिब को माथा टेकने के बाद क्या अरदास करनी है ? गुरुबाणी प्रमाण दीजिए।
5. दुनिया में पैदा हुए प्रत्येक मनुष्य के अंदर कौन-सी तीन इच्छाएँ बहुत ज्यादा प्रबल होती हैं ?
6. क्या सिर्फ दुनिया का मान-सम्मान प्राप्त करके हम परमात्मा की कृपा के पात्र बन सकते हैं ? अगर नहीं तो कैसे बना जा सकता है ?
7. जो मनुष्य सिर्फ दुनिया के मान-सम्मान में खचित हो जाते हैं, उनकी ताड़ना करते हुए गुरु नानक पातशाह क्या फरमाते हैं और ऐसे मनुष्यों पर परमात्मा क्या दोष लगाते हैं। इस संबंध में गुरुबाणी प्रमाण दीजिए।
8. परमात्मा की दरगाह में किन-किन मनुष्यों को मान-सम्मान मिलता है ?
9. हमें नाम का जाप करना और निर्मल कर्म करने हैं, इस संबंध में गुरुबाणी प्रमाण दीजिए।
10. क्या सारी सृष्टि में कोई ऐसा है जो निरगुण को गुण दे सकता हो ? अगर नहीं तो कौन है जो कि गुणहीन और गुणवान् दोनों को ही गुण दे रहा है।

आठवीं से सोहलवीं पउड़ी तक के प्रश्न

1. 'सुणिअै' की कितनी पउड़ीयां है और इन पउड़ीयों में कौन-सी पंक्तियां प्रत्येक पउड़ी में आई हैं ?
2. हम इतने वर्षों से पाठ कर रहे हैं लेकिन फिर भी खीझते रहते हैं और हमारे हृदय में खिड़ाव क्यों नहीं आता ?

3. एक गुरुमुख जाल में फसे हुए तोतों को छुड़वा कर उनको क्या सबक याद करवाते हैं ? इस कहानी से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
4. हमारे दुखों, पापों का नाश कब होना शुरु हो जाएगा ?
5. सुलतानपुर की मस्जिद में नमाज़ पढ़ रहे काज़ी और नवाब का मन कहाँ था ? इस संबंध में साखी की शिक्षा लिखिए।
6. वह कौन सा तरीका जिससे हमारा मन पढ़े हुए पाठ को सुनना शुरु कर देगा ?
7. 'मंने' और 'मंनै' के शब्द के अर्थ लिखो।
8. मंने की पहली पउड़ी में किन गुरुसिखों की अवस्था का वर्णन किया गया है ?
9. श्री गुरु अरजन देव जी ने सेवक की पहली निशानी कौन-सी बताई है ? गुरुबाणी के प्रमाण देकर समझाएँ।
10. भाई लहिणा जी के जीवन से क्या शिक्षा मिलती है ? कैसे वह 'भाई लहिणे' से 'गुरु अंगद देव' बन गए ?
11. थड़ा बनाने की परीक्षा किस-किस की हुई ?
12. थड़ा बनाने की परीक्षा वाली कथा सांझी करो और इस की शिक्षा भी लिखें।
13. 'मंनण' (मानने) के प्रति कोई एक घटना सांझी करो और भाव भी स्पष्ट करो ?
14. जो सिख गुरु जी की बात सुन कर मानते नहीं, उनके प्रति गुरुबाणी का क्या फ़रमान है ?
15. जो मनुष्य गुरु की रज़ा में चलता है वही मनुष्य गुरु का सिख, रिश्तेदार, मित्र है और जो अपनी मनमानी करता है वह दुख झेलता है। इस संबंध में गुरुबाणी के प्रमाण लिखें।
16. 'पंच' किन मनुष्यों को कहा गया है ?
17. हम काम करते हुए अकाल पुरखु में ध्यान कैसे लगा सकते हैं ? इस संबंध में भक्त नामदेव जी द्वारा उच्चारण की गई पक्तियाँ लिख कर अर्थ स्पष्ट करें।
18. क्या कोई मनुष्य अकाल पुरखु का अंत पा सकता है ? गुरुबाणी के आधार पर उत्तर दें।

19. अगर हम धर्म के रास्ते पर चल कर जीवन में कुछ प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें कौन-सी दो बातें धारण करनी पड़ेंगी। सोहलवीं पउड़ी की शिक्षा के आधार पर गुरुबाणी भी लिखें।
20. ''वारिआ न जावा एक वार।। जो तुधु भावै साई भली कार।।'' से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?

सतारहवीं से सताईवीं पउड़ी तक के प्रश्न

1. पउड़ी नं. 17 अर्थात ''असंख जप.....'' वाली पउड़ी से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
2. ''नानकु नीचु कहै वीचारु।।'' से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
3. हमें किसी के अवगुणों को नहीं देखना व न ही अपने गुणों का अहंकार करना है। इस संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण दीजिए।
4. संसार में जो भी जीव नीच काम कर रहे हैं, उनके लिए क्या अरदास करनी है ? गुरुबाणी प्रमाण देकर समझाएँ।
5. ''असंख नाव.....सिरि भारु होइ।।'' में गुरु साहिब 'असंख' अक्षर का इस्तेमाल करते हुए क्या फरमाते हैं ? इन पंक्तियों की शिक्षा लिखें।
6. ''जिनि एहि लिखे.....तिव तिव पाहि।।'' पंक्तियों की शिक्षा लिखें।
7. परमात्मा हर जगह, हर किसी में मौजूद है। इस संबंधी गुरुबाणी का प्रमाण लिखिए।
8. सभी जीव एक परमात्मा का ही रूप है और सभी परमात्मा के ही बनाए हुए हैं। गुरुबाणी का प्रमाण देकर समझाएँ।
9. हमारा मन जन्मों-जन्मों से मैला हो कर काली स्याही जैसा काला हो चुका है। इस संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण लिखें।
10. मन की मैल को कैसे उतारा जा सकता है ?
11. 'पुंनी' और 'पापी' अगर सिर्फ कहने मात्र से नहीं बनते तो कैसे बनते हैं ?
12. आदमी जो बीजता है वही खाता है, इस संबंधी गुरुबाणी का प्रमाण दीजिए।

13. ''अजै सु रोवै भीखिआ खाइ।।'' पंक्ति से क्या भाव है ?
14. मन की मैल को उतारने के लिए कौन-कौन सी तीन अवस्थाएँ हमें गुरु साहिब ने पक्की करवाई हैं ?
15. ''सभि गुण तेरे.....भगति न होइ।।'' पंक्तियों से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
16. परमात्मा की दी हुई बख्शीशों (वरदानों) का आनन्द मानते हुए हमें क्या करना चाहिए ?
17. क्या पंडितों के पास टेवे बनवाने आदि कर्म करने ठीक हैं, अगर नहीं तों क्यों ? स्पष्ट करें।
18. सिख अकाल पुरखु की पूजा करता है, जिसके भय के अंदर धरती, आकाश और सभी गृह नक्षत्र है। संबंधित गुरुबाणी प्रमाण लिखें।
19. जो मनुष्य सब कुछ करने वाला अपने आप को मानते हैं और हर समय 'मैं-मैं' की रटन लगाते हैं, उनके बारे में गुरुबाणी का क्या फ़रमान है ?
20. जो मनुष्य सब कुछ करने वाला परमात्मा का मानते हैं और 'मैं-मैं' की रटन नहीं लगाते उनके बारे में गुरुबाणी के प्रमाण दीजिए।
21. ''लेखा होइ त लिखीअै.....आपे जाणै आपु।।'' की शिक्षा लिखो।
22. अगर परमात्मा का अंत नहीं पा सकते तो फिर हम कौन से कार्य करें कि हम परमात्मा में अभेद हो जाएं।
23. ''सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ.....समुंदि न जाणीअहि।।'' वाली पंक्ति के अनुसार कौन-कौन सी नदियां और नाले समुंद्र का रूप हो जाते हैं ?
24. पउड़ी नं. 23वीं में हमें अपने मूल (origin) परमात्मा की तरफ यात्रा करने की प्रेरणा देते हुए कौन-सी दो उदाहरणें देकर समझाया गया है ?
25. ''हरि धनु संचीअै भाई।। जि हलति पलति हरि होइ सखाई।।'' पंक्तियों में किस धन को इकट्ठा करने की बात की गई है और क्यों ?
26. ''काचा धनु संचहि मूरख गावार।। मनमुख भूले अंध गावार।।'' इन पंक्तियों में किस कच्चे धन की बात की गई है और ऐसा धन इकट्ठा करने वाले को क्या कहा गया है ?
27. ''वडा साहिबु.....कउ जाणै सोइ।।'' पंक्तियों की शिक्षा लिखो।

28. एक बार एक गुरुमुख किसी आदमी को अपने घर में लेकर आते हैं जो कई दिनों से भूखा होता है। इस घटना को पूरा लिखो और इस से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
29. शुकराने (धन्यवाद) के साथ संबंधित कहानी को अपने शब्दों में लिखें और इस कहानी से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
30. ''जिस नो बखसे.....पातिसाही पातिसाहु।।'' पंक्तियों की शिक्षा और संबंधित गुरुबाणी प्रमाण लिखें।
31. प्रीतों में सर्वश्रेष्ठ प्रीत कौन-सी है ? गुरुबाणी का प्रमाण देकर समझाएँ।
32. ''अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ।।'' इन पंक्तियों की शिक्षा लिखें।
33. किस बात को पक्का करने के लिए किस पउड़ी को हमारे नितनेम में 2 बार शामिल किया गया है ?
34. ''होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे।।'' से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
35. ''सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई।।'' वाली पंक्तियों से हमें क्या शिक्षा मिलती है और इस संबंध में IAS अफसर बनने वाली उदाहरण को भी सांझा करें।

अठाईसवीं पउड़ी से जपु जी साहिब की समाप्ति तक के प्रश्न

1. गुरु के सिख ने 'संतोख' (सन्तोष) की कौन-सी मुद्राएँ धारण करनी हैं ? उनका स्वरूप लिखें।
2. परमात्मा ने हमें इतनी ज्यादा रहिमतों के साथ निवाजा हुआ है और अगर कोई दुख भी आए तो हमें मालिक प्रभु को उलाहना नहीं देना चाहिए। इस सम्बन्ध में गुलाम से सम्बन्धित कहानी को संक्षेप में लिखें।
3. 'सरमु पतु झोली' में 'सरमु' का क्या अर्थ है। इस से हमें क्या शिक्षा प्राप्त करनी है।
4. सभी कार्य करते हुए हमें अपना ध्यान निरंकार में ऐसे रखना है जैसे कि एक मां अपने बच्चे को झूले में डालकर काम करती हुई बालक में रखती है। भक्त नामदेव जी द्वारा उच्चारण की गई गुरुबाणी का प्रमाण लिखें।

5. ''खिंथा कालु'' से क्या भाव है ? इस संबंधी वह घटना सांझी करो जिस में वह उदाहरण दी गई है जिसके फलस्वरूप वह आदमी नाम का सिमरन करना और अच्छे काम करना शुरू कर देता है।
6. ''एका नारी जती होइ।।'' से क्या भाव है ?
7. गुरु अरजन देव जी ने अपने दो सिखों भाई भाना और भाई रेख देव के विश्वास की लाज कैसे रखी ? इस संबंधित कथा सांझी करें।
8. ''जिसकी इच्छाएँ श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से पूरी नहीं होती, उसकी इच्छाएँ कहीं से भी पूरी नहीं होंगी।'' इन बचनों से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?
9. ''आई पंथी सगल जमाती'' वाली पंक्ति की शिक्षा लिखें।
10. चंचल मन को कैसे जीता जा सकता है और इस को कैसे नियंत्रण में लाया जा सकता है ? शिक्षा में दी हुई कहानी लिख कर समझाएँ।
11. एक खोजी ने अपने गाँव के लोगों को एक खज़ाने के बारे में किताब लिख कर दी तो गाँव के लोगों ने किताब का क्या किया ? पूरी कहानी और शिक्षा अपने शब्दों में लिखें।
12. गुरु के सिख ने हमेशा दुख-सुख को एक जैसा माना है। इस संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण लिखें।
13. ''एका माई.....होवै फुरमाणु।।'' की पंक्तिओं की शिक्षा लिखें।
14. परमात्मा सब जीवों को देख रहा है। इस संबंध में कहानी लिखें।
15. परमात्मा सब जीवों को रिज़क पहुंचा रहा है, इसलिए हमें कोई चिंता नहीं करनी चाहिए। इस संबंध में गुरुबाणी का प्रमाण लिखें।
16. एक बार एक राजा महल बनवा कर एक महापुरुष को बुलाता है, और कहता है कि मेरे महल बनाने के कारण कईयों को भोजन मिला है, क्या उसका ऐसा कहना ठीक था ? इस संबंध में गुरुबाणी के प्रमाण लिखें।
17. पउड़ी नंबर 32 में दिए हुए विचार के मुताबिक अगर परमात्मा के साथ हमारा मिलाप उसकी कृपा व मेहर की बदौलत ही होना है तो फिर हमें सिमरन करने की क्या जरूरत है ?
18. पउड़ी नंबर 32 की शिक्षा अनुसार नाम सिमरन की कमाई कैसे करनी है ? गुरुबाणी के प्रमाण देकर समझाएँ।
19. ''बाजीगर डंक बजाई।। सभ खलक तमासे आई।।'' से क्या भाव है ?

20. इस जीवन को हमारा Final Match बताते हुए 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वाले, हमें क्या समझाते हैं ?
21. क्या किसी भैंस को कहा जाता है कि तूं भैंस है तो भैंस वाले काम कर या अगर तूं कुत्ता है तो वही काम कर। पर इन्सान को यह क्यों कहना पड़ता है कि अगर तू आदमी है तो आदमियों वाले काम कर ?
22. गुरु साहिब 'मोह' की तुलना किसके साथ करते हैं ?
23. मनुष्य जन्म के फर्ज़ की समझ आने पर हमारे जीवन में क्या तबदीली आती है ?
24. ''सरम खंड की बाणी रूपु.....तिथै घड़ीअै सुरा सिधा की सुधि।।'' की शिक्षा लिखें।
25. बखशिश वाले खण्ड में पहुँचे हुए मनुष्य की बनावट इतने बल वाली क्यों होती है ?
26. ''ना ओहि मरहि.....मन माहि।।'' से क्या शिक्षा मिलती है ?
27. 'जतु पाहारा' का अर्थ बताते हुए शिक्षा भी लिखें ?
28. 'धीरजु सुनिआरु' की शिक्षा लिखें ?
29. ''भांडा भाउ.....सची टकसाल'' की शिक्षा लिखें ?
30. ''पवणु गुरु'' की शिक्षा लिखें ?
31. 'पाणी पिता' की शिक्षा लिखें ?
32. उसतति और निंदा दोनों को बराबर करके जानना है, इस संबध में गुरुबाणी का प्रमाण दीजिए।
33. ''चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि'' की शिक्षा लिखें ?
34. ''नाम सिमरन'' के बारे में भाई वीर सिंह जी के विचारों में से कोई पाँच विचार लिखें।
35. 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों के कोई पाँच अनमोल बचन लिखें।

वह 'नाम' जिस का सिमरन करने से 'मुख उज्ज्वल' और 'केती छुटी नाल' हो जाती है, उस 'नाम सिमरन' के बारे महान विद्वान भाई साहिब भाई वीर सिंह जी के अनमोल विचार

- ❖ वाहिगुरु गुरु मंत्र है, इसके सिमरन से सब कुछ प्राप्त हो जाता है।
- ❖ सिमरन केवल साधन नहीं, यह प्रीति की रीत है, नाम खुद जपना पड़ता है। जो रोटी खाएगा उसी का पेट भरेगा। सिमरन रसना से जाप करना है, फिर यह अपने आप हृदय में उतर जाता है। नाम का सिमरन करने वाले को सबर (संतोष) और नम्रता की बहुत जरूरत है।
- ❖ सिमरन के साथ पहले मन की मैल उतरती है और इन्सान बुरे काम करने से संकोच करता है।
- ❖ ''वाहिगुरु-वाहिगुरु'' करने के साथ हमारे मन पर हर हालत में असर होता है। इसके साथ हमारे अंदर कोमलता आ जाती है, अच्छे-बुरे की पहचान हो जाती है और मन बुराई से प्रहेज करता है।
- ❖ सिमरन पहले मैल उतारता है, इसलिए पहले इस में मन नहीं लगता। जब मन निरमल हो जाता है तो सिमरन में रस आने लगता है, फिर छोड़ने को दिल नहीं करता।
- ❖ मन चाहे न भी टिके, नाम का सिमरन करते रहना चाहिए। अगर सिमरन करते हुए मन जरा भी टिक जाए तो थोड़ी बात नहीं, मन पूरा वश में तब आता है जब वाहिगुरु की पूर्ण कृपा हो।
- ❖ मन टिके या न टिके, सिमरन करते रहना चाहिए। जो लगे रहेंगे, उनके लिए वह समय भी आएगा, जब मन का टिकाव प्राप्त हो जाएगा।
- ❖ जो चलते रहेंगे, चाहे मध्यम चाल से ही, उनको मंजिल पर पहुँचने की आस हो सकती है।
- ❖ सिमरन में स्वाद नहीं आता तो गुरु जाने, जो स्वाद नहीं देता। मनुष्य का धर्म है बंदगी करना। सदा रस पर हक नहीं। रस तो कभी-कभी गुरु झलकारा मार कर देता है ताकि बच्चे डोल न जाएँ।
- ❖ नाम पाप और दुख काटता है। सिमरन शरीर को भी स्वस्थ बनाता है और वाहिगुरु के नजदीक भी लेकर जाता है, इसके साथ हम अंर्तमुखी होते हैं।

- ❖ नाम का सिमरन करते हुए नम्रता में रहें। ''नाम भी वाहिगुरु की बख्शीश है'' अगर यह समझ कर करेंगे तो नम्रता में रहेंगे। 'नामी' पुरुष की अरदास में शक्ति आ जाती है, जब कुछ बरकत आ जाए तो सिख दुनिया से खबरदार रहे, क्योंकि दुनिया उसको अपने मतलब के लिए इस्तेमाल करेगी। इसके साथ आदमी सिमरन से टूट जाता है।
- ❖ सिमरन करते हुए रिद्धियाँ-सिद्धियाँ आ जाती है। सिमरन करने वाले ने उनके दिखावे से बचना है ताकि हउमै (अहंकार) न आए। हउमै (अहंकार) आई तो नाम का रस टूट जाएगा।
- ❖ रिद्धियाँ-सिद्धियाँ वाला बड़ा नहीं, बड़ा वह है जिसको नाम का रस आया है और नाम जिसके जीवन का आधार बन गया है।
- ❖ 'वाहिगुरु' का एक बार नाम लेकर अगर फिर से 'वाहिगुरु' कहने को मन करता है तो समझो कि सिमरन सफल हो रहा है और मैल उतर रही है।
- ❖ रसना के साथ एक बार वाहिगुरु कहने के साथ अगर दूसरी बार कहने को मन करे तों चार वार वाहिगुरु का शुकराना (धन्यवाद) करें, जो उसने आप को नाम की बख्शीश की है और आप को नाम प्यारा लगने लगा है।
- ❖ वाहिगुरु का नाम जपना एक बहुत बड़ी नियामत है, जो वाहिगुरु की अपनी मेहर के साथ प्राप्त होती है। जब वाहिगुरु जपो तो उसका शुक्रिया करो, जो नाम जपा रहा है।
- ❖ जब सुरति चढ़दी कला में हो तो मान नहीं करना, इसको वाहिगुरु की मेहर समझना है। जब वाहिगुरु का रस आने लगता है तो कई लोग अहंकार करने लग जाते हैं। यह परमार्थ के रास्ते में रुकावट है, इससे बच कर रहना चाहिए।

अकैडमी के उद्देश्य

'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा अकसर कहा करते थे कि अगर हर एक सिख यह पक्का निश्चय कर ले कि उसने एक पतित सिख को प्रेरणा देकर 'घर वापस' लेकर आना है तो सिख जगत पतितपुणे के कलंक से मुक्त हो सकता है। इस लिए इस अकैडमी का मुख्य उद्देश्य भी यही है कि बच्चे गुरसिखी की दीक्षा लेकर जहाँ आप गुरसिखी में पक्के हों, वहां अपने साथियों को भी गुरसिखी की प्रेरणा दें। उनके जो साथी बच्चे पतितपुणे का शिकार होकर पंथ को पीठ दिखा चुके हैं, उनको प्रेरणा देकर सिख पंथ में वापिस लेकर आने में अपना योगदान डालें और 'घर वापसी' की लहर को ओर प्रचंड करें।

इस के इलावा अकैडमी के और उद्देश्य इस प्रकार हैं :-

१. सिखी सिद्धान्तों और गुरमति का प्रकाश फैलाना।
२. केवल व केवल अकाल पुरख की पूजा अर्थात ''पूजा अकाल की, परचा शब्द का, दीदार खालसे का''।
३. सभी में वाहिगुरू की ज्योति है। सभी का सत्कार करना और सरबत का भला मांगना एवं करना।
४. परमात्मा के हुक्म को मानना और उसकी रज़ा में राज़ी रहना।
५. मनुष्य जन्म के उद्देश्य की पूर्ति के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी से जीवन युक्ति प्राप्त करनी।
६. ''गुर दीखिआ लै सिख सिखु सदाइआ'' अर्थात निगुरे नहीं रहना, अमृत छक कर गुरु वाले बनना है।
७. ''साबत सूरति दसतार सिरा'' के सिद्धान्त पर पहरा देना अर्थात केशों / रोमों की संभाल करनी और इनकी महानता के प्रति जागरुक होना।
८. ''किरत करो'', ''नाम जपो'', ''वंड छको'' के सुनिहरी सिद्धान्तों को अपनाना।
९. ''पवणु गुरू'', ''पाणी पिता'', ''माता धरतु महतु'', का सिद्धान्त दृढ़ करना। बूंद-बूंद पानी बचाओ। Grow Tree Oxygen Free.
१०. नशा मुक्त, एडज़ मुक्त और प्रदूषण मुक्त समाज की सृजना करना।
११. मादा भ्रूण हत्या को रोकना और स्त्री का सत्कार बहाल करने के लिए यत्न करते रहना।
१२. नेत्र दान के लिए चेतनता - (शरीर त्यागने के पश्चात) "Donate Eyes See Twice" ''नेत्र दान महा-दान।''
१३. गुरू का हर सिख प्रचारक भी हो।

पंथ के महान विद्ववान भाई साहिब भाई वीर सिंह जी

भाई वीर सिंह अकैडमी

भाई वीर सिंह अकैडमी की स्थापना 'पंथ रतन' भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों द्वारा 26 जुलाई सन् 2006 को श्री दरबार साहिब, अमृतसर में अमृत वेले अरदास करके की गई।

भाई साहिब भाई जसबीर सिंह जी अकैडमी के संस्थापक

अकैडमी का मुख्य उद्देश्य

भाई वीर सिंह अकैडमी का मुख्य उद्देश्य बच्चों में गुरसिखी सिद्धान्तों को दृढ़ करवाना है ताकि जहां बच्चे आप गुरसिखी में पक्के हों, वहाँ अपने साथी सिख बच्चों को भी गुरसिखी की प्रेरणा दे सकें। उनके जो साथी बच्चे पतितपुणे का शिकार हो चुके हैं, उन्हें प्रेरणा देकर सिख पंथ में वापस लेकर आएं और 'घर वापसी' लहर को और प्रचंड करें।

अकैडमी की शाखाएँ

इस अकैडमी की पहली शाखा सिख मिशनरी कॉलेज के सहयोग से जालंधर में वर्ष 2006 में आरंभ की गई। 'पंथ रतन' भाई जसबीर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों द्वारा आरंभ किए गए इस कार्य को आगे बढ़ाते हुए भाई साहिब भाई दविंदर सिंह जी खालसा, खन्ने वालों की तरफ से अकैडमी की और शाखाएँ चीफ खालसा दीवान, ऐम.जी.ऐन. ऐजूकेशन ट्रस्ट और कई शिक्षा संस्थाओं के सहयोग से अमृतसर, जालन्धर और लुधियाना में स्थापित हो चुकी हैं।

कोर्स का समय और सिलेबस आदि

इस अकैडमी में बच्चों को दो वर्ष गुरमति कोर्स करवाया जाता है जिस में गुरुबाणी, सिख फ़िलासफ़ी, सिख इतिहास और सिख रहित मर्यादा के बारे में जानकारी दी जाती है ताकि उनके अंदर सिखी सिद्धान्त दृढ़ हो सकें और उनके अन्दर सिखी का यह जज़बा पैदा किया जा सके कि ''सिर जाए तां जाए मेरा सिखी सिदक न जाए''। बच्चों को यह बात भी सिखाई जाती है कि उन्होंने ''पूजा अकाल की, परचा शब्द का, दीदार खालसे का'' के सिद्धान्त पर पहरा देना है और 'सरबत दे भले' के मिशन पर चल कर सभी मनुष्यों के लिए भलाई वाले कार्य करने हैं।

फ़ीस रहित शिक्षा व उत्साह हेतु ईनाम

यह सारी विद्या बच्चों को मुफ्त दी जाती है। सैशन की समाप्ति पर प्रत्येक शहर में स्थापित की गई शाखाओं द्वारा बच्चों को ईनाम भी दिए जाते हैं।

प्राप्तियाँ

हमें यह बात सांझी करते हुए प्रसन्नता होती है कि इस अकैडमी में पढ़े हुए बच्चे अब उच्च पदवियों पर पहुंच चुके हैं और जहां वह आप गुरसिखी में पक्के हैं, वहीं औरों को भी समय-समय पर गुरसिखी सिद्धान्तों को दृढ़ करवाते रहते हैं।

भाई वीर सिंह अकैडमी
9-ऐ, लिंक कालोनी, जालन्धर, 93572-04756, 98721-23452, 98889-27279
www.bhaiveersinghacademy.org